

बड़े

भूमिका

'तुलसी इस संसार में भाँति-भाँति के लोग ।'

कवि ने सत्य ही कहा है । संसार में भाँति-भाँति के लोग हैं । कोई साधु स्वभाव है तो कोई चतुर । कोई करुणा और दया से भरपूर हृदय वाला तो कोई निपट स्वार्थी । इस पर भी स्वार्थ सर्वोपरि है । स्वार्थ की महिमा अधिक है ।

आधुनिक युग में जहाँ विज्ञान में उन्नति हुई है वहाँ मानव मन अवनति की ओर चला है । अब चतुर व्यक्ति देखने में अधिक हैं । वीर साहसी और विवेकी कम हैं । काल के प्रभाव से संस्कृति, सभ्यता तो बदली ही है पर मनुष्य अधिक चतुर हो गया है ।

भाँति-भाँति के लोग तब भी विद्यमान हैं—धनी-निर्धन, सरल चित्त और चतुर-स्वार्थी । इनका बाहुल्य मानव में धर्म के ह्रास के कारण है । उद्देश्य चाहे कैसा भी हो उसकी सिद्धि मुख्य मान ली गई है और यह भी माना जाने लगा है कि जो चतुर है वही सफल व्यक्ति है । क्या चतुर व्यक्ति सदा सफल होते हैं ? यही पुस्तक का कथानक है । इस पर भी ऐसे लोगों में यहाँ व्यक्ति न्यून संख्या में रहता हुआ धर्म की बंसी बजा रहा है । संसार के आदि से अन्त तक ऐसे रहेगा । संख्या के अनुपात में अन्तर आ जायेगा ।

यह उपन्यास ऐसे लोगों की कथा है । पात्र स्थान सब काल्पनिक हैं ।

[illegible]

प्रथम परिच्छेद

: १ :

छाया अपने विचारों में लीन थी। सामने अँगीठी पर रखे पतीले में दूध पर उसकी दृष्टि जमी थी। दूध उबल जाये तो वह पतीला नीचे उतार साग वाली हण्डिया ऊपर चढ़ा दे। वह इसी प्रतीक्षा में बैठी थी यद्यपि उसका मन और मस्तिष्क कहीं अन्यत्र विचर रहे थे।

माँ ने कुछ पहले आदेश दिया था, "मैं कपड़े धोने बैठ रही हूँ। तुम दूध का ध्यान रखना।"

अतः छाया पुस्तक को एक ओर रख रसोईघर में दुबकी बैठी थी। अपने विचारों में तल्लीन किसी और दुनिया में। नेत्र दूध पर गढ़े थे, परन्तु मस्तिष्क मधुर कल्पना में खोया हुआ था। दूध ने भी आज न उबलने की शपथ खा रखी थी। छाया को पल-पल एक एक घण्टे के समान लग रहा था। इतने में छत पर धमाका सुनाई दिया। छाया का मन उछल पड़ा। वह उठ खड़ी हुई। फिर वैसा ही धमाका हुआ और एक के बाद दूसरा। छाया के लिए यह अन्तिम संकेत था।

उसके माथे पर त्योरी चढ़ गई। क्रोध में माँ को कोसने लगी और दूध को जो उबलने में न आता था। उसने अँगीठी के पास पड़ी टेढ़ी-सी लोहे की सलाख उठाकर अँगीठी की आग को ठीक किया। दूध उबलने में अभी देर थी।

छाया का धीरज उसका साथ न दे सका। दूध को अरक्षित छोड़ वहाँ से खिसक गई।

यह धमाका रोशन ने किया था। छाया को बुलाने का यह संकेत था।

रोशन उसके पड़ोस में रहता था। दोनों के घरों की छतें परस्पर मिलती थीं। रोशन के धमाके से छाया को पता चल जाता कि रोशन

उसके घर की छत पर उसकी प्रतीक्षा कर रहा है।

तीसरे धमाके का अर्थ दोनों को विदित था। यदि तीसरे और अन्तिम धमाके के दो तीन मिनट पीछे छाया वहाँ न पहुँचती तो रोशन समझ जाता कि छाया घर पर नहीं है।

आज भी छाया को पहुँचने में देर हो गई तो रोशन निराश मन अपने घर की छत पर लौटने की बात सोच रहा था कि छाया ने पीछे से आकर उसके नेत्र मूंद लिये।

"तो तुम आ गईं ?"

"हां।" छाया ने हाथ हटाते हुये कहा।

"मैं तो निराश लौट कर जाने वाला था।"

"क्यों ?"

"यह समझ कर कि तुम घर में नहीं हो।"

"अरे बुद्धू। तनिक अक्ल के नाखून उतार कर सोचा करो। मैं उस समय संडास अथवा स्नानागार में भी हो सकती हूँ।"

"तो फिर क्या हुआ ? दो धमाके तुम को वहां से बाहर लाने के लिये काफी हैं। अन्तिम धमाके के होते तुम्हें यहां होना चाहिये।"

"और यदि मैं स्नान कर रही हूँ और अभी वस्त्र न पहने तो..."

रोशन ने उसकी बात सुन कनखियों में से निहारा और मुस्करा कर धीरे से बोला, "क्या आज वस्त्र हमारे मिलन में बाधा बन गये छाया ? परन्तु देखता हूँ तुमने......"

"हां ! अभी तक मैंने स्नान भी नहीं किया। मां ने......"

छाया अभी बात पूरी ही न कर पाई थी कि कर्कश आवाज़ दोनों को सुनाई दी।

"अरी कहां मर गई ? सारा दूध जल कर राख हो गया।"

छाया इस कर्कश ध्वनि से कांप उठी और रोशन की आंखों में देखती हुई बोली, "देखा ! तुम्हारे अन्तिम धमाके ने सब गड़बड़ कर दिया। कहीं मां ऊपर आ जाये।" वह रोशन का हाथ पकड़ उसे सीढ़ियों की ममटी के नीचे ले गई। दोनों वहां दुबक कर बैठ गये।

छाया की मां रामदई को वस्त्र धोते समय दूध जलने की दुर्गन्ध का आभास हुआ तो उसने स्नानागार से पुकारा, "दूध जल रहा है छाया ! सो गई हो क्या ?"

कुछ भी उत्तर न मिलने पर वह स्वयं उठी और क्या देखती है कि रसोई दुर्गन्धमय धुएँ से भरी है। दूध उबाल खाता हुआ अँगीठी की आग को बुझाने का यत्न कर रहा था।

'छाया कहां मर गई ?' वह बेटी को गालियां देती हुई रसोई में घुसी और झट धोती के छोर से पतीले को पकड़ नीचे फर्श पर पटक दिया। आधे से अधिक दूध उबल कर नष्ट हो गया था और जो शेष बचा था उससे भी दुर्गन्ध आ रही थी।

अब रामदई ने जोर जोर से चिल्लाना शुरू कर दिया। छाया समझ गई कि दूध जलकर नष्ट हो गया है। मां के स्वभाव को वह जानती थी। जब कोई हानि होती रामदई उसको खूब डांटती। अतएव वह बिना उतर दिये ममटी के नीचे अपने प्रेमी की बगल में दुबकी बैठी रही।

कुछ देर तक निस्तब्धता छाई रही। दोनों मौन थे। आखिर रोशन ने चुप्पी को भंग करने के लिये हाथ में पकड़ा नकली पिस्तौल चला दिया।

छाया धमाका सुन कांप उठी क्योंकि वह मां को सन्तुष्ट करने के लिए उस समय कोई बहाना सोच रही थी। अतः वह खीझ उठी।

"क्या करते हो जी ?"

"खेल समाप्त हो गया है। अब आओ !"

"तुमने बुलाया क्यों था ?"

'तुम्हें देखने के लिये। मैं आज इस नगर से जा रहा हूँ।"

"क्यों ?" छाया तड़क कर बोली।"

"बस, जाऊँगा। नौकरी की खोज में।"

"कहां जाओगे ?" छाया ने बड़ी-बड़ी आंखों से रोशन की आंखों में देखते हुये पूछा।

"अभी लाहौर जाने का विचार है। फिर वहां से अमृतसर, जालन्धर, दिल्ली और बम्बई जाऊँगा।"

"तो फिर गए काम से।"

रोशन हँस पड़ा। हँसते हुये उसने छाया के गले में बांह डाल उसे अपने उर से लगा लिया और बोला, "पगली! काम बनाने के लिये तो जा रहा हूँ। फिर तुमको भी······"

"सच।" छाया ने बीच में टोका।

"हां। नौकरी मिलने पर ···"

"अभी क्यों नहीं। क्या भरोसा तुम लौट कर न आओ।"

"तुम्हें विश्वास नहीं होता, छाया।" रोशन ने उसका हाथ पकड़ते हुये पूछा।

"ऊँ हूँ।" छाया ने सिर हिला दिया और क्षण भर रुक कर बोली, "मैं साथ चलूंगी।"

"घर से भाग चलोगी?"

"तुम भाग रहे हो क्या?"

रोशन उत्तर देने वाला था कि एक भारी आवाज सुनाई दी। छाया ऐसे कांप गई जैसे वृक्ष की पतली शाखा पवन के तेज झोंके से कांप उठती है।

"ओह। पिताजी आ गये।" उसने उठते हुये कहा।

"अच्छा। फिर मिलेंगे। गाड़ी शाम को जायेगी।"

छाया ने एक दृष्टि रोशन पर डाली और सीढ़ियां उतरने के लिये मुड़ी। रोशन ने देखा कि उसकी आंखें भीगी हुई हैं। वह कुछ क्षण रुक कर छाया का मनमोहक मुखड़ा देखने लगा जैसे उसको फिर देखने की आशा न हो। परन्तु छाया ने मुख मोड़ लिया और सीढ़ियां उतर गई। रोशन ने छलांग लगाई और अपने घर की छत पर आ गया।

छाया सीढ़ियां उतरते समय ऐसा अनुभव कर रही थी, मानो उसके पांव में लोहे की बेड़ियां डाल दी गई हों। भारी पग उठते न

थे। मन भी जकड़ा हुआ था। अब उसको मां के डांटने फटकारने का भय न था। रोशन से बिछुड़ने की चिन्ता थी वह सोच रही थी क्या दूध का जलना उसके मन को जलाने का प्रतीक था ? क्या अब वह दूध की भांति उबल उबल कर जला करेगो। कभी मुस्करा नहीं सकेगो। देखने वाले जले दूध की भांति उससे भी दुर्गन्ध आने की बात कहेंगे। उसका तिरस्कार करेंगे। उसको देख कर नाक चढ़ायेंगे और उसे पसन्द न करेंगे।

कोई कुमारी किसी युवक के वियोग में आंसू बहाए समाज को सहन नहीं होता। जला हुआ दूध समझ उसे व्यर्थ की वस्तु मानेंगे। जहां बैठेगा, लोगों को उसके चरित्र से दुर्गन्ध ही आयेगो।

तो वह क्या करे ? मनन करती हुई वह धीरे धीरे आखिरी सीढी भी उतर गई।

"अरे यह रही छाया।" छाया के पिता दयाराम ने अपनी पत्नी को सम्बोधन कर कहा। फिर एकाएक उनका ध्यान छाया के मुर्झाये हुये मुख पर गया। उसका फूल-सा मुखड़ा मलिन दिखाई दे रहा था। दयाराम ने चिन्तित स्वर में पूछा, "क्या हुआ बेटी ? तुम्हारा मुख पीला क्यो पड़ रहा है ?"

छाया कल्पना के जगत से निकल पुनः सामान्य अवस्था में आई। कोई बहाना अभी तक सोचा न था। वह रोशन के विषय में सोच रही थी। अब पिता के प्रश्न ने उसे चौकन्ना कर दिया। वह पिता को ही ढाल बना मां की डांट से बचना चाहती थी। उसने झट उत्तर दिया, "सिर में बहुत पीड़ा है पिताजी।"

पूर्व इसके कि दयाराम अपनी एक मात्र पुत्री से दवाई-दारू की बात कहता, रामदई गरजती हुई बोली, "यह है ही सिर दर्द। दूध जल कर राख हो गया। बदबू से मेरे सिर में पीड़ा हो गई और यह चुड़ैल अब बहाना सोच कर एक घण्टे बाद टहलती हुई चली आ रही है। पूछो तो सही अपनी लाडली से, कहाँ से आ रही है ?"

"मां ! सिर दर्द इतना तेज हुआ कि गर्मी में रसोई में बैठना

असम्भव हो गया। छत पर टहलने चली गई थी। इस विचार से कि हवा में कुछ आराम मिलेगा।"

"दयाराम ने छाया की नाड़ी देखते हुए कहा, "बुखार तो नहीं है। खैर!" फिर वह रामदई की ओर घूमा। "थोड़ा पानी गर्म करो। मैं अभी दवाई बना देता हूँ।"

'छोड़ो जी। यह लाड़ प्यार। तुमने हिकमत क्या पढ़ ली, मेरे लिए मुसीबत बन गए। मैं इसका सिर दर्द अभी ठीक किये देती हूँ। बताओ कहां गई थी?" रामदई ने छाया को चोटी से पकड़ते हुए पूछा।

"पागल हो गई हो क्या? बता तो रही है खुली हवा में गई थी किन्तु फिर भी सिर दर्द ठीक नहीं हुआ। जाओ तुम पानी गर्म करो।"

विवश रामदई एक कटोरी में गर्म पानी ले आई। दयाराम ने एक शीशी में से दवा निकाली और कागज के पुरजे पर रख छाया को खाने के लिये कहा, "लो बेटी! इसे फांक कर गर्म पानी के दो घूंट पी लो। घण्टे भर में पेट साफ हो जायेगा और सिर दर्द भी दूर होगा।"

छाया ने पिता के आदेश का पालन किया। उसने अपने मन ही मन कहा, "पेट तो अवश्य साफ होगा सिर दर्द है नहीं।" झट चूर्ण को मुंह में रख पानी पी लिया। फिर मुंह बनाती हुई बोली, "बहुत बकबका है।"

"पर है एक नम्बर अकसीर।"

छाया प्रसन्न थी कि पिताजी की हिकमत उसकी बहुत सहायक बनी। वह भगवान का धन्यवाद करती हुई कमरे में बिछी चारपाई पर जा लेटी।

लेटते ही रोशन के वियोग की कल्पना ने उसे फिर घेर लिया और वह उदास हो गई।

दयाराम कब लस्सी पीकर दुकान पर चला गया और कब रामदई ने छाया के कमरे में पांव रखा, छाया को पता नहीं चला। वह अपने

असम्भव हो गया। छत पर टहलने चली गई थी। इस विचार से कि हवा में कुछ आराम मिलेगा।"

"दयाराम ने छाया की नाड़ी देखते हुए कहा, "बुखार तो नहीं है। खैर!" फिर वह रामदई की ओर घूमा। "थोड़ा पानी गर्म करो। मैं अभी दवाई बना देता हूँ।"

'छोड़ो जी। यह लाड़ प्यार। तुमने हिकमत क्या पढ़ ली, मेरे लिए मुसीबत बन गए। मैं इसका सिर दर्द अभी ठीक किये देती हूँ। बताओ कहां गई थी?" रामदई ने छाया को चोटी से पकड़ते हुए पूछा।

"पागल हो गई हो क्या? बता तो रही है खुली हवा में गई थी किन्तु फिर भी सिर दर्द ठीक नहीं हुआ। जाओ तुम पानी गर्म करो।"

विवश रामदई एक कटोरी में गर्म पानी ले आई। दयाराम ने एक शीशी में से दवा निकाली और कागज के पुरजे पर रख छाया को खाने के लिये कहा, "लो बेटी! इसे फांक कर गर्म पानी के दो घूंट पी लो। घण्टे भर में पेट साफ हो जायेगा और सिर दर्द भी दूर होगा।"

छाया ने पिता के आदेश का पालन किया। उसने अपने मन ही मन कहा, "पेट तो अवश्य साफ होगा सिर दर्द है नहीं।" झट चूर्ण को मुंह में रख पानी पी लिया। फिर मुंह बनाती हुई बोली, "बहुत बकबका है।"

"पर है एक नम्बर अकसीर।"

छाया प्रसन्न थी कि पिताजी की हिकमत उसकी बहुत सहायक बनी। वह भगवान का धन्यवाद करती हुई कमरे में बिछी चारपाई पर जा लेटी।

लेटते ही रोशन के वियोग की कल्पना ने उसे फिर घेर लिया और वह उदास हो गई।

दयाराम कब लस्सी पीकर दुकान पर चला गया और कब रामदई ने छाया के कमरे में पांव रखा, छाया को पता नहीं चला। वह अपने

उसको यह पसन्द नहीं था कि युवा लड़की घर में इस प्रकार निश्चल बैठी रहे। इस पर भी वह कहां तक दिमाग खराब करती। उसने भोजन तैयार कर दिया।

आवाज़ पड़ी तो छाया उठी और स्नान करने चली। अभी तक सुध-बुध खोये विचारों में मग्न थी। कोई योजना बना नहीं पा रही थी।

स्नान के उपरान्त भोजन कर वह पुस्तक उठा पढ़ने के बहाने पुनः रोशन से अपने सम्बन्ध के विषय में विचार करने लगी। बचपन की सब बातें आंखों के सम्मुख घूम गयीं। इकट्ठे झूला झूलना। कम्पनी बाग की सैर करने जाना। यहां तक कि स्कूल से लौटते हुए परस्पर बाज़ार में भेंट हो जाने पर राजा बाज़ार में लैमन अथवा रोज़ की बोतल पीना। बहुत आनन्द आता था छाया को ठण्डी लैमन या रोज़ पीने में। उसे सब कुछ याद था। अब तो वह कुछ दिनों से स्वयं को रोशन से आत्मसात करने का प्रयास करने लगी थी। घर में मरां ने विवाह की चर्चा छेड़ी थी। छाया ने रोशन को बता दिया। रोशन ने उसका कोमल हाथ अपने हाथों में दबा कर कहा, "तुम बहुत भोली हो छाया! तुम्हारा विवाह तो मेरे साथ होगा।"

"सच।" छाया के मुख पर यह कहते हुए लज्जा की लालिमा दिखाई दी। उसने नेत्र नीचे कर पूछा, "कैसे होता है विवाह?"

"तुमने किसी का विवाह देखा नहीं?"

"देखा है। बैण्ड बाजे बजते हैं। बारात में लोग सुन्दर वस्त्र पहन कर आते हैं। और इसके बाद......"

"इसके बाद दूल्हा-दुल्हिन को अपने घर ले जाता है।" इतना कह रोशन ने छाया के अधरों पर अपने अधर रख दिये।

छाया के पूर्ण शरीर में रोमांच हो आया यद्यपि यह अवस्था क्षण भर रही तो भी कभी कभी उसके मन में गुदगुदी होती थी। उस दिन के बाद रोशन ने कभी उसको छुआ भी नहीं था! आज वह परदेश जा

रहा था। छाया सोच रही थी; वह उसका मुख चूम विदा हो जायेगा, कब लौटेगा, भगवान जाने। फिर वह उससे विवाह कैसे करेगा? वह यही कुछ सोचती रही।

दोपहरी ढली। गऊ धूलि का समय हुआ। रामदई ने पुकारा, "मैं कथा सुनने जा रही हूँ। चूल्हा जला कर दाल चढ़ा देना।"

छाया अन्यमनस्क सी उठी और घर के काम-काज में जुट गई। कुछ देर बाद फिर पिस्तौल का धमाका हुआ। उस समय तक वह दाल बना चुकी थी। केवल छौंक लगाना रह गया था। इस बार उसने दाल की हांडी नीचे रख दी। वह छत पर गई। रोशन वहां नहीं था। उसने नीचे झांका। तांगा रोशन के मकान के आगे खड़ा था और रोशन सामान रख रहा था।

छाया समझ न सकी उसको क्या करना चाहिए। रोशन उससे विदा तो पहले हो चुका था। अब तो उसने मुहल्ला छोड़ने का संकेत दिया था। वह कुछ क्षण तक उसके तांगे को देखती रही। उसकी आंखों से आंसू टप-टप बहने लगे।

"अभी कुछ करना चाहिए। पांच मिनट में तांगा चल देगा और रोशन सदा के लिए उससे दूर हो जायेगा। उसका मस्तिष्क तेज़ी से काम करने लगा। वह सीढ़ियां उतर आई। वस्त्र बदल तैयार हो गई। जैसे रोशन को स्टेशन पर विदा करने जा रही हो। घर में वह उस समय अकेली थी। पिता और भाई दुकान पर थे। मां कथा सुनने पास के मन्दिर में गई हुई थी।

छाया ने मकान को ताला लगाया और ताली पड़ोसिन को दे दी। पड़ोसिन ने प्रश्न नहीं किया। वह अथवा उसकी मां कई बार ताली छोड़ जाती थी ताकि उनकी अनुपस्थिति में किसी को कष्ट न हो। ताली लेकर घर में आया जा सके।

ताली देने को बाद छाया मुहल्ले से निकल सड़क पर आ गई।

रोशन का तांगा जा चुका था। सड़क पर तांगे वाले—स्टेशन दो आने, रेल स्टेशन दो आने—पुकार रहे थे। छाया एक तांगे में जा बैठी। तांगे वाले की सवारियां पूरी हुईं तो उसने चाबुक हिलाया और पेशावरी घोड़ा सरपट भागने लगा।

स्टेशन पर पहुँच छाया ने रोशन को देखा। वह कुली से अपना सामान उतरवा रहा था। उसका छोटा भाई उसे पहुँचाने आया था। छाया एक ओर हो गई और टिकट घर की ओर बढ़ी। टिकट ले वह प्लेटफार्म पर जा पहुँची।

गाड़ी आने में देर थी। ऐक्सप्रैस गाड़ी पेशावर से आने वाली थी—बम्बई ऐक्सप्रैस। रोशन ने अपने भाई को विदा करना चाहा किन्तु वह भी भाई को गाड़ी में बिठाने के अनन्तर घर जाने का निश्चय किये हुए था। रोशन को छोटे भाई से बहुत स्नेह था।

गाड़ी आई और छाया लपक कर ज़नाने डिब्बे में जा बैठी। सामान तो था नहीं। इसलिए स्थान पाने में उसको कठिनाई नहीं हुई। रोशन भी तीसरे दर्जे के डिब्बे में बैठा था। उदास चित्त नज़रें किसी को खोज रही थीं। उस समय छाया के विचार में खोया था। वह सोच रहा था छाया को उसने नहीं देखा। शायद माँ की डांट डपट के कारण वह पिस्तौल की आवाज सुन कर भी घर से बाहर न निकली हो। वह उससे पूछ भी नहीं सका कि सुबह उसको कितनी मार पड़ी अथवा वह बच गई। उसका मन बुरी बुरी कल्पनाएँ करता। छाया का मिलने न आने का कारण वह यही समझ पा रहा था कि उसकी मां ने उसे आज पीटा है। फिर मन कहता, वह रह नहीं सकती उससे मिले बिना। कदाचित् स्टेशन पर ही उससे मिलने आ जाये। गली में मिलने आती तो सब की दृष्टि में आ जाती। वह नारी है। नारी को लोक-लाज का विशेष ख्याल रहता है। उसके लिए सब कुछ वही है। लोक-लाज के निमित्त वह अपने अरमान कुचल देती है। अतः वह उदास नज़रों से स्टेशन की हर वस्तु देख रहा था। प्रत्येक आने जाने वाले व्यक्ति पर उसकी दृष्टि जाती। उसके डिब्बे के सामने ही प्लेटफार्म

का प्रवेश द्वार था। रोशन की आंखें हरेक का निरीक्षण करतीं।

छाया नहीं दिखाई दी। गाड़ी चल दी और उसने भारी मन से भाई से हाथ मिला विदा ली।

बम्बई ऐक्सप्रैस भागी जा रही थी और रोशन विचारों में डूबा कहीं अन्यत्र विचर रहा था। छाया का सलोना मुखड़ा बारम्बार उसकी आंखों के सम्मुख घूम जाता। उसकी चपलता, सरल स्वभाव तथा बालकों की भांति मुस्करा कर बात करना, उसे स्मरण हो आता। सब से बढ़ कर वह उसकी दूरदर्शिता की बात पर मनन करता।

एक बार पहले भी वह नौकरी के लिए तैयार हुआ था। जब युद्ध छिड़ जाने की घोषणा हुई थी। रावलपिण्डी में भी सैनिकों की नई भरती आरम्भ हुई। सब स्थानों पर विज्ञापन लगा दिये गए थे। 'सेना में भरती होने के तीन मुख्य लाभ—अच्छी खुराक। अच्छा वेतन। मुफ़्त वर्दी। देश की सेवा के साथ अपनी और परिवार की रक्षा।

रोशन भी सेना में भरती होने के लिए तैयार हो गया था। रावलपिंडी छावनी में युवकों की भर्ती हो रही थी। डाक्टरी परीक्षा के पश्चात् चुने हुए युवकों को सैनिक अभ्यास के लिए किसी ट्रेनिंग कैम्प में भेजा जाता। तत्पश्चात् वे सिद्धहस्त सैनिक बनते।

छाया को रोशन के विचार का कैसे न पता चलता। वह तो छाया की भांति उसके समीप रहती थी। अतएव उसने पूछा, "तुम फ़ौज में जाओगे? रोशन!"

"हां। मुफ्त खाना, पोशाक और वेतन मिलेगा।"

"लाम पर भी तो भेजे जाओगे।"

"हां। देश विदेश की सैर तो करूंगा।"

"मैं तुम्हारे साथ भी तो न जा सकूंगी।"

"वर्ष में दो मास की छुट्टी मिलेगी।"

"यदि युद्ध क्षेत्र से न आ सके तो? फिर कब लौटोगे, भगवान ही जाने।" यह कहते हुए छाया के नेत्र बरसाती नाले की भांति बहने

लगे थे।

"पगली ! रोती हो। युद्ध खत्म होने पर मैं शान व शौकत से घर आऊँगा। इनाम और तग़मा मिलेगा।"

"मुझे ऐसी शान नहीं चाहिए रोशन। तुम्हें नहीं जाने दूँगी। जाओगे तो बोलूंगी नहीं।"

"ऐसा मत कहो छाया।"

"तो मत जाओ। तुम्हारा मन अकेले नहीं लगेगा।"

रोशन ने छाया के उदास मुख पर देखा। वह विचार करता सैनिक कैम्प में अकेला नहीं होगा तो भी छाया से दूर हो जायेगा' छाया के बिना वह उदास होगा। युद्ध में मारे जाने का भी भय था उसको। फिर छाया की क्या दशा होगी ? उसके बिना कैसे पार करेगी इस भव-सागर को ?

वह रात भर सोचता रहा। अपने पूर्व निश्चय अनुसार प्रातः काल फौजी कैम्प की ओर नहीं गया और छाया को सूचना दी कि वह सेना में भरती नहीं हो रहा। छाया कितनी प्रसन्न हुई थी उस दिन।

परन्तु समय व्यतीत होता गया। रोशन को कोई अन्य कार्य नहीं मिला। घर में भी सब उसको कोसने लगे कि वह बेकार है। अतः नौकरी की खोज में किसी अन्य नगर में जाने का उसने निर्णय किया।

इस बार न जाने छाया ने उसने उसे क्यों नहीं रोका। प्रत्युत उसके वियोग की कल्पना से इतनी दुखी हुई कि स्वयं उसके साथ जाने का साहस किया। रोशन को क्या मालूम कि जिसको अन्तिम बार देखने के निमित्त वह इतना व्याकुल था और दर्शन न होने पर निराशा से घिरा हुआ था, वह स्वयं उसके साथ के डिब्बे में बैठी है, और प्रदेश में उसकी सेवा सुश्रूषा करेगी। उसको तो इस कारण दुःख था कि वह मन की अन्तिम बात भी छाया को न कह सका। वह कहना चाहता था कि वह उसको पत्र लिखेगा। जब वह पक्की नौकरी पा जायेगा तो रावलपिंडी लौट कर उससे विवाह कर लेगा और उसको अपने साथ ले जायेगा।

किन्तु छाया में न यह सुनने की शक्ति थी और न ही इतने दिन प्रतीक्षा करने के लिए धीरज था। इस पर भी रोशन को अपनी प्रेमिका के साहस तथा तुरन्त निर्णय करने की सामर्थ का परिचय अभी तक न मिला था। वह अव विचार कर रहा था, क्या उसने अपना नगर छोड़ कर ठीक किया है? यदि उसको लाहौर में भी नौकरी न मिली तो क्या उसे सेना में भरती होने पर विवश होना पड़ेगा ? वह सोचते-सोचते घवरा उठा। कुछ देर तक मानसिक द्वन्द्व होने के अनन्तर वह उसने मन को समझाया कि लाहौर पहुँच कर छाया को पत्र लिखेगा और उसकी राय से ही आगे पग उठायेगा। रेलगाड़ी अव जेहलम के समीप पहुँच रही थी।

वचपन की मैत्री के पीछे एक मधुर भावना कार्य करती है। रोशन और छाया भी साथ साथ खेले। सखा सखी के रूप में वर्षों इकट्ठे रहे। पड़ोसी होने से यह मैत्री अधिक प्रवल वन गई। दोनों में परस्पर यौन-आकर्षण ने उनके सम्बन्ध को अधिक घनिष्ट वना दिया था और पल भर का वियोग भी असह्य था।

गाड़ी जेहलम स्टेशन पर रुकी। रोशन को इसका ध्यान नहीं था। वह लाहौर में अपने मित्र के पास रहने और नौकरी खोज करने की योजना वनाने में लीन था। उसको यह भी पता न चला कि कोई नारी मूर्ति खिड़की के पास प्लेटफार्म पर खड़ी उसे निहार रही है।

छाया अपने डिव्वे से उतर वहां खड़ी हो गई थी। वह चाहती थी कि रोशन उसकी ओर देखे तो वह उसका अभिवादन करे। अतः वह उसको निहार रही थी। रोशन विपरीत दिशा में एक विशेष दृष्टि लगाये विचारों में डूवा था। कुछ क्षण तक यही स्थति रही। अन्त में छाया ने उसके हाथ का स्पर्श कर पूछा "आपके लिए चाय अथवा कुछ खाने को लाऊँ ?"

रोशन कोमल हाथ के स्पर्श से ऐसे चौंक पड़ा जैसे कोई भयानक स्वप्न देख कर चौंक उठता है। वह आंखें मल कर छाया को देखने लगा। मानो विश्वास न आया हो।

छाया यहां तक आ सकती है उसकी कल्पना से वाहर की घटना थी। उसने गर्दन वाहर निकाल रेलवे स्टेशन का वोर्ड पढ़ा। जेहलुम लिखा था। उर्दू और अंग्रेजी में। रोशन की कल्पना शक्ति काम करने लगी। छाया ने वताया था कि उसकी मौसी जेहलुम में रहती है। कदाचित वह मां के साथ यहां आई हो और मां की दृष्टि से वचकर उसे अन्तिम दर्शन देने चली आई है। उसने पूछा, "मौसी के घर आई हो ?"

"वुद्धू।" छाया ने मुस्कराते हुए उसकी ओर देखा।

रोशन ने इधर उधर दृष्टि दौड़ाई। उसकी मां अथवा भाई को कहीं न देख वोला, "अकेली चली आई हो छाया ?"

"हां। तुम भी तो अकेले हो।"

रोशन ने एक दीर्घ निःश्वास छोड़ा और छाया को देखने लगा। वह भी व्यर्थ के प्रश्नों में समय गँवाना नहीं चाहता था। उसे विश्वास हो गया कि मौसी के घर जाने का वहाना वना उससे मिलने आई है। फिर यह प्रश्न कचोटता रहा कि संध्या समय अकेली कैसे आ सकी। माता पिता ने उसे स्वीकृति कैसे दी ?

"वताओ न। क्या खाओगे, फल या पूरी ?"

"कुछ नहीं।" रोशन नहीं चाहता था कि छाया उसकी आंखों से क्षण भर के लिए भी दूर हो। समय पहले ही कम था।

छाया ने पूरी वाले को आता देख वहीं रोक लिया। अब रोशन ने आपत्ति नहीं की। अभी वे पूरी खा ही रहे थे कि गाड़ी ने सीटी वजा दी। छाया डिब्वे के भीतर चली आई और रोशन के पास वैठ गई। रोशन ने पूरी वाले को पैसे देते हुए छाया को सम्वोध कर कहा, "गाड़ी चलने लगी है।"

"तभी तो मैं वैठ गई हूँ।"

यात्रियों के सामने अधिक वात करना उचित नहीं था। इस पर भी रोशन के मुख पर देखने से पता चलता था कि वह परेशान है। गाड़ी चली और ठण्डी हवा उसके वालों को छूने लगी। छाया

मुस्कराती हुई उसको निहार रही थी।

रोशन की व्याकुलता बढ़ रही थी। आखिर छाया ने उसकी सहायता की। उसने कहा, "घबराओ नहीं। मेरे पास टिकिट है।" तब उसने जेब से टिकिट निकाल दिखा दी। टिकिट लाहौर तक था। रोशन किंकर्तव्यविमूढ़-सा कभी छाया को और कभी टिकिट को देखता रहा।

यात्रियों के सम्मुख कोई प्रश्न पूछना अपना उपहास कराना था। पूर्ण स्थिति रोशन के मस्तिष्क में स्पष्ट हो गई। छाया कुछ सामान भी साथ न लाई थी। वह घर से भाग कर आई है। रोशन यह तथ्य समझ कर उसे अपने साथ ले जाने की समस्या पर विचार कर रहा था। वह लाहौर में उसे कहां रखेगा? वह स्वयं अपने मित्र रमेश के निमन्त्रण पर जा रहा था। उसके पिता ठेकेदार थे और परिवार स्थायी रूप से लाहौर में रहने लगा था।

रमेश को रोशन ने पत्र लिखा था कि वह बेकार होने से बहुत दुखी है। सेना में भरती होना नहीं चाहता है। उत्तर में रमेश ने उसको लिखा था कि यदि वह लाहौर आ जाये तो नौकरी मिलने की आशा है। नौकरी के निमित्त उसको जालन्धर, दिल्ली अथवा बम्बई भी जाना पड़ सकता है।

रोशन इस आश्वासन पर लाहौर जा रहा था। अब वह छाया को कैसे वहां ले जायेगा। अकेली वह कहां जायेगी। फिर दोनों किसी धर्मशाला अथवा सराय में रहेंगे तो किस रूप में? छाया के पिता उसकी खोज करेंगे तो वह भी छाया के साथ पकड़ा जायेगा। लाहौर में नौकरी का मोह उसको जेल में ले जायेगा।

रोशन को यह सब सोच कर छाया पर क्रोध आ रहा था। उसने अपने आस पास बैठे यात्रियों को देखा। लगभग सभी ऊँघ रहे थे। सामने बैठा एक अधेड़ आयु का काले रंग का पुरुष अपने मैले चश्मे में से उन्हें घूर रहा था। वह कभी घूम कर छाया के मुख पर देख लेता और कभी रोशन की ओर उसका ध्यान चला जाता। समीप के दो

छाया यहां तक आ सकती है उसकी कल्पना से बाहर की घटना थी। उसने गर्दन बाहर निकाल रेलवे स्टेशन का बोर्ड पढ़ा। जेहलुम लिखा था। उर्दू और अंग्रेजी में। रोशन की कल्पना शक्ति काम करने लगी। छाया ने बताया था कि उसकी मौसी जेहलुम में रहती है। कदाचित वह मां के साथ यहां आई हो और मां की दृष्टि से बचकर उसे अन्तिम दर्शन देने चली आई है। उसने पूछा, "मौसी के घर आई हो ?"

"बुद्धू।" छाया ने मुस्कराते हुए उसकी ओर देखा।

रोशन ने इधर उधर दृष्टि दौड़ाई। उसकी मां अथवा भाई को कहीं न देख बोला, "अकेली चली आई हो छाया ?"

"हां। तुम भी तो अकेले हो।"

रोशन ने एक दीर्घ निःश्वास छोड़ा और छाया को देखने लगा। वह भी व्यर्थ के प्रश्नों में समय गँवाना नहीं चाहता था। उसे विश्वास हो गया कि मौसी के घर जाने का बहाना बना उससे मिलने आई है। फिर यह प्रश्न कचोटता रहा कि संध्या समय अकेली कैसे आ सकी। माता पिता ने उसे स्वीकृति कैसे दी ?

"बताओ न। क्या खाओगे, फल या पूरी ?"

"कुछ नहीं।" रोशन नहीं चाहता था कि छाया उसकी आंखों से क्षण भर के लिए भी दूर हो। समय पहले ही कम था।

छाया ने पूरी वाले को आता देख वहीं रोक लिया। अब रोशन ने आपत्ति नहीं की। अभी वे पूरी खा ही रहे थे कि गाड़ी ने सीटी बजा दी। छाया डिब्बे के भीतर चली आई और रोशन के पास बैठ गई। रोशन ने पूरी वाले को पैसे देते हुए छाया को सम्बोध कर कहा, "गाड़ी चलने लगी है।"

"तभी तो मैं बैठ गई हूँ।"

यात्रियों के सामने अधिक बात करना उचित नहीं था। इस पर भी रोशन के मुख पर देखने से पता चलता था कि वह परेशान है। गाड़ी चली और ठण्डी हवा उसके बालों को छूने लगी। छाया

मुस्कराती हुई उसको निहार रही थी।

रोशन की व्याकुलता बढ़ रही थी। आखिर छाया ने उसकी सहायता की। उसने कहा, "घबराओ नहीं। मेरे पास टिकिट है।" तब उसने जेब से टिकिट निकाल दिखा दी। टिकिट लाहौर तक था। रोशन किंकर्तव्यविमूढ़-सा कभी छाया को और कभी टिकिट को देखता रहा।

यात्रियों के सम्मुख कोई प्रश्न पूछना अपना उपहास कराना था। पूर्ण स्थिति रोशन के मस्तिष्क में स्पष्ट हो गई। छाया कुछ सामान भी साथ न लाई थी। वह घर से भाग कर आई है। रोशन यह तथ्य समझ कर उसे अपने साथ ले जाने की समस्या पर विचार कर रहा था। वह लाहौर में उसे कहां रखेगा? वह स्वयं अपने मित्र रमेश के निमन्त्रण पर जा रहा था। उसके पिता ठेकेदार थे और परिवार स्थायी रूप से लाहौर में रहने लगा था।

रमेश को रोशन ने पत्र लिखा था कि वह बेकार होने से बहुत दुखी है। सेना में भरती होना नहीं चाहता है। उत्तर में रमेश ने उसको लिखा था कि यदि वह लाहौर आ जाये तो नौकरी मिलने की आशा है। नौकरी के निमित्त उसको जालन्धर, दिल्ली अथवा बम्बई भी जाना पड़ सकता है।

रोशन इस आश्वासन पर लाहौर जा रहा था। अब वह छाया को कैसे वहाँ ले जायेगा। अकेली वह कहां जायेगी। फिर दोनों किसी धर्मशाला अथवा सराय में रहेंगे तो किस रूप में? छाया के पिता उसकी खोज करेंगे तो वह भी छाया के साथ पकड़ा जायेगा। लाहौर में नौकरी का मोह उसको जेल में ले जायेगा।

रोशन को यह सब सोच कर छाया पर क्रोध आ रहा था। उसने अपने आस पास बैठे यात्रियों को देखा। लगभग सभी ऊँघ रहे थे। सामने बैठा एक अधेड़ आयु का काले रँग का पुरुष अपने मैले चश्मे में से उन्हें घूर रहा था। वह कभी घूम कर छाया के मुख पर देख लेता और कभी रोशन की ओर उसका ध्यान चला जाता। समीप के दो

बेंचों पर कोई अन्य स्त्री नहीं बैठी थी। अतः उस भद्दे पुरुष की दृष्टि अनेक बार छाया और रोशन से टकराती और फिर वह सोने का प्रयास करने लगता।

रोशन मन ही मन डर रहा था। उस व्यक्ति की पैनी दृष्टि उसे किसी सी० आई० डी० वाले की भांति प्रतीत होती थी। वह अपराधी न होते हुए भी अपराधी बन जाने की कल्पना से व्यग्र हो रहा था। छाया के प्रेम तथा वियोग का जो नशा थोड़ी देर पहले उसके स्नायुओं पर छाया था, अब दूर हो चुका था। वह सोचने लगा, छाया ने कैसी मूर्खता की है। उसके दिमाग में कितने ही विचार थे। कितने संशय और समस्यायें थी, किन्तु उस पुरुष के घूरते हुये नयन उसे छाया से कुछ पूछने में बाधा उपस्थित कर रहे थे।

रोशन ने आंखें बन्द कर लीं। नींद भी उससे कोसों दूर भाग रही थी। वह कभी कभी आंखें खोल उस चश्मे वाले काले पुरुष को देख लेता था। वह कहां से गाड़ी में बैठा और कहां उतरना है, रोशन को ज्ञात नहीं। इस पर भी उसकी पैनी दृष्टि कह रही थी कि यह लड़की रावलपिण्डी से उसके साथ नहीं थी। अब कहां से टपक पड़ी? सम्भव है जेहलुम स्टेशन पर छाया से उसका वार्तालाप भी उसने सुना हो। यदि वह छाया के विषय में पूछ बैठा तो वह क्या उत्तर देगा? रोशन इस कल्पना के कारण चिन्ता ग्रस्त कोई बहाना सोच रहा था।

छाया को उसकी अवस्था पर दया आई। उसने पूछ लिया, "तुम डर क्यों रहे हो, रोशन? मैं लाहौर में सीधी अपने भैया के घर जाऊँगी। वे स्टेशन पर आये हुए होंगे। तुम्हारे घर नहीं चलूंगी।"

रोशन को कुछ सहारा मिल गया। उत्तर देने से पहले उसने उस पुरुष की ओर देखा कि उस पर क्या प्रतिक्रिया हुई है। किन्तु इस बार वह उन की ओर नहीं देख रहा था। उनींदी आँखों से अपने पास बैठे एक युवक के कन्धे पर लुड़कता दिखाई दे रहा था। उसे निश्चल देख रोशन को प्रसन्नता नहीं हुई। वह सोचने लगा छाया ने बात स्पष्ट करने का यत्न किया तो उस समय जब सन्देहात्मक दृष्टि वाला पुरुष

सा गया। उसने कहा,

"वह तो ठीक है। पहुँचते ही अपने पिताजी को पत्र लिख देना अन्यथा वे चिन्तित होंगे।"

छाया यह उत्तर सुनने के लिए तैयार नहीं थी। वह मौन हो गयी। दोनों को अभी भी सन्देह था कि कोई यात्री उनकी बातों की ओर कान न लगाये हो। रोशन बार-बार उस काले पुरुष को देखता जो उसे वहाँ सोया हुआ भी भला नहीं लग रहा था। उसने छाया से कहा,

"तुम पाँव फैला कर सो जाओ। मैं यहाँ ट्रन्क पर बैठ जाता हूँ।"

"नहीं। मुझको नींद नहीं आई। तुम सो सकते हो।"

रोशन को नींद नहीं आ रही थी। वह समय काटने के लिए छाया से बातें करना चाहता था। किन्तु क्या बात करे? यह एक समस्या थी। उसने इधर-उधर पुनः दृष्टि दौड़ाई। सब ऊँघ रहे थे। पूर्ण निस्तब्धता छाई थी। उसने अपना मुख छाया के और समीप कर लिया और धीरे से पूछा, "कैसे आ सकी हो?"

इतने में उनके पीछे से किसी के खाँसने की आवाज आई। छाया ने मुँह पर उँगली रख उसे चुप रहने का संकेत किया।

गाड़ी तीव्र गति से भाग रही थी। दोनों अपने नये जीवन के विषय में सोच रहे थे। विचार विमर्श करने का अवसर नहीं था। किसी सह यात्री को सन्देह होने की अवस्था में उन पर विपत्ति आ सकती थी। कदाचित् उन्हें बिछुड़ना पड़ जाता।

रोशन एक योजना पर मनन करने लगा। पहला प्रश्न उसके मस्तिष्क में यह उठा कि उनका यह मिलन स्थायी है अथवा दो यात्रियों की भाँति थोड़ी देर का? वह अब रमेश के घर न जा सकेगा, उसने विचार किया। यदि वह स्टेशन पर उसको लेने आया तो क्या करेगा? छाया को अकेला नहीं छोड़ा जा सकेगा। वह रमेश को स्टेशन पर देखे बिना कुली से सामान उठवा किसी साधारण होटल में चला जायेगा। एक दिन वहीं रह कर किसी धर्मशाला में स्थायी

बैंचों पर कोई अन्य स्त्री नहीं बैठी थी। अतः उस भद्दे पुरुष की दृष्टि अनेक बार छाया और रोशन से टकराती और फिर वह सोने का प्रयास करने लगता।

रोशन मन ही मन डर रहा था। उस व्यक्ति की पैनी दृष्टि उसे किसी सी० आई० डी० वाले की भांति प्रतीत होती थी। वह अपराधी न होते हुए भी अपराधी बन जाने की कल्पना से व्यग्र हो रहा था। छाया के प्रेम तथा वियोग का जो नशा थोड़ी देर पहले उसके स्नायुओं पर छाया था, अब दूर हो चुका था। वह सोचने लगा, छाया ने कैसी मूर्खता की है। उसके दिमाग में कितने ही विचार थे। कितने संशय और समस्यायें थी, किन्तु उस पुरुष के घूरते हुये नयन उसे छाया से कुछ पूछने में बाधा उपस्थित कर रहे थे।

रोशन ने आंखें बन्द कर लीं। नींद भी उससे कोसों दूर भाग रही थी। वह कभी कभी आंखें खोल उस चश्मे वाले काले पुरुष को देख लेता था। वह कहां से गाड़ी में बैठा और कहां उतरना है, रोशन को ज्ञात नहीं। इस पर भी उसकी पैनी दृष्टि कह रही थी कि यह लड़की रावलपिण्डी से उसके साथ नहीं थी। अब कहां से टपक पड़ी ? सम्भव है जेहलुम स्टेशन पर छाया से उसका वार्तालाप भी उसने सुना हो। यदि वह छाया के विषय में पूछ बैठा तो वह क्या उत्तर देगा ? रोशन इस कल्पना के कारण चिन्ता ग्रस्त कोई बहाना सोच रहा था।

छाया को उसकी अवस्था पर दया आई। उसने पूछ लिया, "तुम डर क्यों रहे हो, रोशन ? मैं लाहौर में सीधी अपने भैया के घर जाऊँगी। वे स्टेशन पर आये हुए होंगे। तुम्हारे घर नहीं चलूंगी।"

रोशन को कुछ सहारा मिल गया। उत्तर देने से पहले उसने उस पुरुष की ओर देखा कि उस पर क्या प्रतिक्रिया हुई है। किन्तु इस बार वह उन की ओर नहीं देख रहा था। उनींदी आँखों से अपने पास बैठे एक युवक के कन्धे पर लुड़कता दिखाई दे रहा था। उसे निश्चल देख रोशन को प्रसन्नता नहीं हुई। वह सोचने लगा छाया ने बात स्पष्ट करने का यत्न किया तो उस समय जब सन्देहात्मक दृष्टि वाला पुरुष

सा गया। उसने कहा,

"वह तो ठीक है। पहुँचते ही अपने पिताजी को पत्र लिख देना अन्यथा वे चिन्तित होंगे।"

छाया यह उत्तर सुनने के लिए तैयार नहीं थी। वह मौन हो गयी। दोनों को अभी भी सन्देह था कि कोई यात्री उनकी बातों की ओर कान न लगाये हो। रोशन बार-बार उस काले पुरुष को देखता जो उसे वहाँ सोया हुआ भी भला नहीं लग रहा था। उसने छाया से कहा,

"तुम पाँव फैला कर सो जाओ। मैं यहाँ ट्रन्क पर बैठ जाता हूँ।"

"नहीं। मुझको नींद नहीं आई। तुम सो सकते हो।"

रोशन को नींद नहीं आ रही थी। वह समय काटने के लिए छाया से बातें करना चाहता था। किन्तु क्या बात करे? यह एक समस्या थी। उसने इधर-उधर पुनः दृष्टि दौड़ाई। सब ऊँघ रहे थे। पूर्ण निस्तब्धता छाई थी। उसने अपना मुख छाया के और समीप कर लिया और धीरे से पूछा, "कैसे आ सकी हो?"

इतने में उनके पीछे से किसी के खाँसने की आवाज़ आई। छाया ने मुँह पर उँगली रख उसे चुप रहने का संकेत किया।

गाड़ी तीव्र गति से भाग रही थी। दोनों अपने नये जीवन के विषय में सोच रहे थे। विचार विमर्श करने का अवसर नहीं था। किसी सह यात्री को सन्देह होने की अवस्था में उन पर विपत्ति आ सकती थी। कदाचित् उन्हें बिछुड़ना पड़ जाता।

रोशन एक योजना पर मनन करने लगा। पहला प्रश्न उसके मस्तिष्क में यह उठा कि उनका यह मिलन स्थायी है अथवा दो यात्रियों की भाँति थोड़ी देर का? वह अब रमेश के घर न जा सकेगा, उसने विचार किया। यदि वह स्टेशन पर उसको लेने आया तो क्या करेगा? छाया को अकेला नहीं छोड़ा जा सकेगा। वह रमेश को स्टेशन पर देखे बिना कुली से सामान उठावा किसी साधारण होटल में चला जायेगा। एक दिन वहीं रह कर किसी धर्मशाला में स्थायी

स्थान ढूंढ़ने का यत्न करेगा।

परन्तु वह छाया के साथ किस रूप में रहेगा ? वह उसकी कौन है ? क्या उसको अपनी बहिन बतायेगा ? नहीं ! छाया भी यह पसन्द नहीं करेगी। घर लौट कर जाना नहीं चाहेगी। तो क्या वह उसकी पत्नी बन कर रहेगी ? इस विचार के उभरते ही रोशन को रोमांच हो आया। उसने एक बार आँखें खोल छाया के सुन्दर मुखड़े ्र देखा। पत्नी होने का कोई चिह्न उसके मुख पर अंकित नहीं था। ाह कैसे उसको पत्नी बनायेगा ? उसके लिए नये रेशमी वस्त्रों के लेए पैसे भी नहीं हैं। सामान भी साथ में होना आवश्यक है। सब उसको सन्देह की दृष्टि से देखेंगे। छाया स्वयं तो एक जोड़ा वस्त्र भी ाथ नहीं लाई। गारश्तृं तथा आभूषणों की बात तो दूर है। कौन मानेगा उन्हें पति-पत्नी ?

क्या समझ कर छाया ने ऐसा पग उठाया ? उसको फिर छाया की मूर्खता पर क्रोध आया। कहीं वह स्वयं किसी मुसीबत में न फ़ंस जाये ?

रोशन सोचते-सोचते चकरा गया। किन्तु कोई उचित योजना न ाई। किसी प्रकार रात कटी और पौ फटते ही गाड़ी लाहौर के ..श ल स्टेशन पर जा पहुँची। यात्री उतरने लगे। रोशन ने भी कुली को बुलाया। उस समय वही काला आदमी उन्हें फिर घूरने लगा। एक बार तो रोशन भय से काँप उठा। कहीं वह उनका पीछा न करे।

: ३ :

रामदई दो घण्टे के अनन्तर, कथा सुन कर घर लौटी। द्वार पर ताला लगा देख उसके विस्मय का पारावार न रहा। क्रोध भी आया। 'इस कलमुई ने तंग कर रखा है।' वह बुदबुदाई। पड़ोसिन से ताली माँगी। ताली पकड़ते समय उसने अपनी पड़ोसिन तथा सखी शीला के मुख पर देखा। वह उसके क्रोधित मुख को देख बोल पड़ी,

"कुछ कह कर नहीं गई, बहिन ! मैंने पूछा भी नहीं।"

"किसी सहेली के घर चली गई होगी। लेकिन सोचती हूँ यह आदत अच्छी नहीं। अब वह सयानी हो गई है।" रामदई ने क्रोध को दबाते हुए उतर दिया।

"हाँ बहिन! लड़की की चिन्ता तो होती ही है। इस पर भी छाया बहुत सुशील लड़की है।"

रामदई अपनी पुत्री की प्रशंसा सुन तनिक पुलकित हो गई और ताला खोल कर घर के भीतर चली गई।

अँगीठी में आग ठंडी हो गई थी। दाल उबली हुई रखी थी। रामदई ने पतीले का ढक्कन उतार कर देखा। 'छौंक भी नहीं लगाया चुड़ैल ने।' वह फिर बुदबुदाई।

वह कथा सुनने के बाद कुछ थकी हुई अनुभव कर रही थी। उसने कथा-वाचक से सुना था, 'क्रोध और मोह नरक के द्वार हैं। क्रोधी मनुष्य को शान्ति नहीं! काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार नियमित साधना से वश में किये जा सकते हैं। इस पर भी निषेध नहीं हो सकते। ये विकार मनुष्य की आत्मोन्नति में बाधक हैं, इत्यादि।

रामदई के मस्तिष्क में उपरोक्त शब्द चक्कर लगा रहे थे। आते ही उसे अपनी बेटी पर क्रोध आया। यह क्रोध मोह के कारण था। मोह ही दुखों की जड़ है। आखिर लड़की को समझाना तो पड़ता ही है। बिगड़ जाये तो परिवार का सर्वनाश कर देती है। उसने बड़ों से सुन रखा था। देना भला न बाप का, बेटी भली न एक। शीला का क्या है। उसकी कोई कन्या है ही नहीं। बेटी के आचरण पर माँ बाप को कैसी चिन्ता होती है, वह क्या जाने! इन कथावाचकों का क्या है। न कोई आगे न पीछे! संन्यासी हैं! बस कह दिया, 'मोह और क्रोध नरक की ओर ले जाते हैं।' भला बच्चों के साथ मोह कोई कैसे छोड़ सकता है! अब छाया पर क्रोध न करूँ तो क्या करूँ? विवाहने योग्य हो गई है, परन्तु इतनी बुद्धि नहीं कि रसोई समेट कर जाती। फिर ऐसा कौनसा जरूरी काम आ पड़ा था कि ताला लगा कर भाग गई।

रामदई इस प्रकार विचारों के संघर्ष में डूबी रही। कथा का प्रभाव अभी कुछ शेष था। इस कारण वह क्रोध को दबा छाया के भविष्य के विषय में चिन्तित हो रही थी। ऐसी आदतों वाली लड़की का किसी समृद्ध परिवार में कैसे गुज़ारा होगा। उसकी सास माँ को कोसेगी कि कैसे संस्कार डाले हैं लड़की में। कुछ ज़िम्मेदारी तो महसूस करती ही नहीं। इस प्रकार सोचते रहने पर वह निर्णय कर बैठी कि आज छाया के पिता से उसकी सगाई के विषय में बात करेगी। शीला की मौसी का लड़का जगदीश बहुत भला लड़का है। पिछले दिनों दो दिन के लिए यहाँ आया तो अपने अच्छे स्वभाव का कितना गहरा प्रभाव छोड़ गया। शीला से बात की जाये तो छाया की जगदीश से सगाई हो सकती है। लड़का स्वस्थ और सुन्दर है। इम्पीरियल बैंक में बाबू है। छाया के पिता से पूछ कर ही शीला से बात करूँगी। रामदई ने मन ही मन निश्चय किया। इस समय उसके अधरों पर मुस्कान खेलने लगी।

माँ की सबसे बड़ी चिन्ता अपनी युवा बेटी के लिए सुयोग्य वर जन। होती है। रामदई को तो ऐसा लग रहा था कि उसे वह मिल गया है। मानो उसको विश्वास था जगदीश की माँ इन्कार न करेगी। वह अपनी बहिन शीला का आदर करती है। शीला तो छाया को सुशील लड़की मानती ही है। वह अपनी बहिन से उसके स्वभाव तथा रूप की प्रसंशा करगी तो वह मान जायेगी। अब रामदई को खेद हुआ कि उसने शीला के सम्मुख क्यों छाया के कृत्य की निन्दा की।

इसी उधेड़-बुन में लगी वह घर का काम कर रही थी। सन्ध्या हो गई। छाया नहीं लौटी। रामदई ने गली में झाँका। रोशन की माँ अपने घर के द्वार पर खड़ी थी। उसने पूछ लिया।

"किस को देख रही हो मनमोहन की माँ ?"

"छाया बहुत देर से घर नहीं लौटी।"

'कहाँ गई है ?"

"मैं कथा सुनने गई थी। वह मेरे पीछे कहीं चली गई। अपनी

सहेली के घर चली गई होगी। तुमने तो उसको नहीं देखा।"

"नहीं बहिन। मैं तो रोशन के लिए रोटी बनाने में लगी थी। वह आज परदेश गया है।"

"कहाँ ? तुमने पहले तो बात नहीं की।

"बस ऐसे ही एकाएक तैयार हो गया। उसे एक मित्र की चिट्ठी आई थी। लाहौर जाने के लिए तैयार हो गया। नौकरी खोजने गया है। इसलिए मैंने भी नहीं रोका। कहीं बेकारी से तंग आकर फौज में भरती न हो जाये। उसके मित्र का बाप लाहौर में ठेकेदार है। उसी ने उसे नौकरी दिलाने को लिखा था।"

रामदई अपनी समस्या में उलझी थी। वह आश्चर्यचकित थी। इतनी देर तक पहले छाया कभी घर से बाहर नहीं रही। रोशन की माँ ने उसको चिन्तित देख कह दिया, "किसी सहेली के घर गई है तो आ जायेगी। पढ़ने बैठ गई होंगी दोनों। जब रोशन का ताँगा आया तो मैंने भी उसे नहीं देखा।"

छाया की माँ गली में आँखें बिछाये मौन खड़ी थी। न जाने कितनी देर खड़ी रही। उसका हृदय धक-धक करता रहा। घर में चिराग तक नहीं जलाया। दयाराम और मनमोहन दूकान से लौटे।

"क्या है माँ ?" मनमोहन ने पूछा।

"छाया को देख रही हूँ।"

"कहाँ गई है ?"

"जानती होती तो यूँ खड़ी होती।"

"भीतर चलो।" दयाराम ने कहा।

तीनों भीतर आ गए। घर में अन्धेरा था। "तुमने अभी तक लालटेन भी नहीं जलाई।"

रामदेई ने लैम्प जलाया तो दयाराम ने पूछा,

"तुमने मुझे दूकान पर सूचना क्यों नहीं भेजी ? कब से गायब है ?"

"दो घन्टे से मैं बाट देख रही हूँ। कथा सुनने गई तो उसे घर

बिठा गई। लौटी तो घर पर ताला लगा था। चाबी शीला के पास छोड़ गई थी।"

दयाराम और मनमोहन स्तब्ध रह गए। मनमोहन पिता का मुख देखने लगा जैसे वह उनके आदेश की प्रतीक्षा कर रहा हो। उसे छाया से प्रगाढ़ स्नेह था। एक ही बहिन थी उसकी।

दयाराम ने कुछ विचार कर रामदई से प्रश्न किया, "तुमने मेरे जाने के अनन्तर उसको पीटा था क्या ?"

रामदई तत्काल उत्तर न दे सकी। वह जानती थी उसका पति बच्चों को पीटने की नीति में विश्वास नहीं रखता। उसके विचार से मारने-पीटने पर बच्चों का मानसिक विकास ठीक नहीं हो पाता। वे माता-पिता से घृणा करने लगते हैं। अतः अब रामदई भयभीत सी मौन खड़ी थी। यदि सच्ची बात बता देती तो दयाराम झट उसको दोषी बता देता। अब भी वह पति की घूरती हुई दृष्टि को सहन नहीं कर सकी।

दयाराम ने गरजते हुए पूछा, "बताओ। बोलती क्यों नहीं ?"

"मैंने उसे डाँटा अवश्य था। इतनी बड़ी लड़की भूल करे तो समझाना पड़ता ही है।"

"तुम्हारी हर रोज की डाँट-डपट से तंग आ कर वह घर से भाग गई प्रतीत होती है। मेरा मन न जाने क्यों बुरी कल्पना कर रहा है।" दयाराम ने अपने मन की बात बता दी।

"हाय राम !" रामदई रोती हुई भूमि पर बैठ गई।

"पिताजी।" मनमोहन साहस बटोर कर बोला, "हो सकता है उसको अपनी सहेली के घर में देरी हो गई हो। आपको इतनी दूर तक नहीं सोचना चाहिए।" इतना कह कर वह बाहर चला गया।

कुछ क्षण तक दयाराम मौन रहा। फिर उसने जोर से पुकारा, 'मनमोहन'।

मनमोहन गली में जाता हुआ रुक गया। जब पिता ने कुछ नहीं

कहा तो वह उसकी बात सुनने घर लौट आया। दयाराम अपने कमरे में चला आया। मनमोहन को विवश पिता का अनुसरण करना पड़ा। दयाराम ने कुर्सी पर बैठते हुए पूछा, "कहाँ जा रहे थे ?"

"छाया की सखी अमृत के घर।"

"क्यों ?"

"पता करने। वह वहाँ गई होगी।"

"और यदि न हुई तो देशराज को पता चल जायेगा कि लड़की भाग गई है। यह भी सोचा है तुमने ?"

मनमोहन के पास इसका उत्तर नहीं था।

"कैसी बातें करते हैं आप ? रामदई ने भारी स्वर में कहा।

"वह पहले कभी इतनी देर तक बाहर रही है ? सहेली के घर होगी तो स्वयं आ जायेगी।"

रामदई का दिल बैठने लगा था। वह निश्चल भूमि पर बैठ गई। "हाय मैंने क्या किया यदि मुझे पता होता तो मैं उसे अकेला छोड़ कर न जाती। अब क्या होगा भगवान ! वह मन ही मन बोल उठी। उसके नेत्र भीग गए। मुख से शब्द नहीं निकले। अपने पति के विषाद-पूर्ण मुख पर ताकती रही।

मनमोहन चुपचाप वहाँ से खिसक गया। वह एक बार अमृत के घर तक जा कर छाया का पता कर अपना संशय दूर करना चाहता था। उसको विदित था कि अमृत अधिक चंचल लड़की है। सम्भव है वह छाया को सिनेमा दिखाने ले गई हो। इस कल्पना के अन्तर्गत मनमोहन के पग अमृत के घर की ओर बढ़ते गए।

अमृत का घर पास ही था। मनमोहन उसके घर के द्वार के बाहर जा खड़ा हुआ। वह द्वार खटखटाना ही चाहता था कि उसको अमृत आती दिखाई दी। यह इस बात का प्रमाण था कि छाया वहाँ नहीं थी। अमृत ने नमस्ते कर पूछा, "कहिए भाई साहब। छाया को नहीं लाये।"

मनमोहन पर मानो विद्युत प्रहार हुआ हो। उसने बहुत कठिनाई

से अपने मनोभावों को दबाते हुए कहा, "नहीं। मैं तो दुकान से आ रहा हूँ। सोचा राजन से मिलता चलूँ। बहुत दिनों से देखा नहीं।" उसने झूठ का सहारा लिया।

"आइये।" अमृत ने आदर सहित कहा।

"नहीं। मैं ठहरूंगा नहीं। तुम देखो वह घर में है भी अथवा नहीं।"

कुछ क्षण बाद अमृत ने बताया कि उसका भाई राजन अभी नहीं आया। मनमोहन नमस्ते कर निराश लौट गया। अब उसको पिता के अनुमान पर विचार करने से दुःख हुआ।

छाया कहाँ भटकती होगी? स्नेहवश मनमोहन की आँखों में आँसू आ गए। वह अपने भावों पर पूर्ण नियन्त्रण किये गली में चल रहा था कि कहीं कोई परिचित उसकी यह अवस्था भाँप न ले। उसके मुख से वेदना का आभास मिलता था। घर पहुँचते ही उसने माँ को रोते हुए सम्बोधन किया, "माँ! छाया अमृत के घर नहीं है।"

रामदई के आँसू अविरल बहने लगे। मनमोहन अपने पिता के पास कमरे में चला गया। दोनों पिता पुत्र गम्भीर बैठे थे। बात भी तो भला क्या। किसी को कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि [illegible] करें। कुछ देर पश्चात् मनमोहन ने पूछा

"पुलिस में रिपोर्ट नहीं करेंगे पिताजी?"

"यही सोच रहा हूँ। बिरादरी में मुख काला होगा। यह छाया को क्या सूझी।" दयाराम के आँसू निकल पड़े।

पड़ोस के घर में बारह हाथ की दीवार ही बाधक थी। शीला ने अपने घर से रामदई को पुकारा। वह शोकग्रस्त थी। शीला की आवाज़ ही नहीं सुनी उसने। फिर ऊँची आवाज सुनाई पड़ी, "छाया घर आ गई है, बहिन?"

इस बार रामदई ने सुना, किन्तु उत्तर नहीं दिया। शीला रामदई के घर चली आई। वह रामदई को देख डर गई। रसोई में सब वस्तुएँ बिखरी पड़ी थीं। आग राख हो गई थी। रामदई अपने तथा छाया

मैं उसको परिवार सहित खाक में मिला दूँगा।"

दयाराम की पलकों में रुके आँसू बाहर निकल पड़े। वह नहीं जानता था, किसने उसकी लड़की को भगाया है। अत: उसने रोते हुए बताया,

"छाया घर से गायब हो गई है थानेदार साहब।"

मुंशीराम स्तब्ध रह गया। पिस्तौल पर रखा हाथ ढीला पड़ गया। उसका मुंह खुला रह गया। कुछ क्षण रुक कर उसने पूछा, "कब से?"

"शाम के छ: बजे से। अभी तक नहीं लौटी। वह माँ की अनुपस्थिति में ताला लगा ताली पड़ोस के घर में रख चली गई। कोई नहीं जानता कहाँ गई है।"

मुंशीराम कुछ विचार करने लगा। फिर शान्त और गम्भीर स्वर में बोला, "मेरा विचार है अभी आपको वैसे खोज करनी चाहिए। *लड़की का मामला है। बात आग की तरह फैल जायेगी।"*

"मैं सब समझता हूँ मुंशीराम जी परन्तु..."

"किसी पर सन्देह है तो मैं कार्यवाही अभी करने को तैयार हूँ।"

दयाराम सिर हिला कर मौन हो गया। मुंशीराम एक बाप के उद्गारों का भली भाँति अनुमान कर दुखी हुआ। उसने रिपोर्ट लिख ली और विभिन्न थानों और चौकियों पर टेलीफोन कर तफ़तीश करने को कह दिया। उसने दो कान्सटेबुल बुलाये और दयाराम से बोला, "आइए। मेरे साथ।"

दयाराम उसके साथ चल पड़ा। बाहर एक वैन खड़ी थी। सब उसमें जा बैठे। मार्ग में थानेदार मुंशीराम ने सारा विवरण पूछ लिया। उसको समझ आ गई कि छाया घर से अपनी इच्छा से भागी है। मुहल्ले में पूछताछ की गई तो छाया के पड़ोसी रोशन का उसी दिन लाहौर जाना मुंशीराम के मस्तिष्क में हलचल मचाने लगा। अतएव उसने स्टेशन मास्टर से पूछताछ की। उस दिन बम्बई एक्सप्रेस के लिए लाहौर के कई टिकिट बिके थे। वह निर्णय न कर सका कि छाया उसी गाड़ी में रोशन के साथ रावलपिण्डी से बाहर

चली गई है अथवा नगर में ही भटक रही है। कुछ भी हो उसको अपने मित्र की लड़की का पता लगाना था। दयाराम की मान प्रतिष्ठा उसकी प्रतिष्ठा थी। रोशन के भाई के भी बयान हुए। उसका कहना था कि वह गाड़ी चलने तक स्टेशन पर भाई के साथ रहा। उसने छाया को कहीं नहीं देखा। इस पर मुंशीराम ने दयाराम से प्रश्न किया, "क्या तुम जानते हो छाया बेटी का रोशन के घर आना जाना था ?"

"मैंने उसे वहाँ जाते कभी नहीं देखा।"

मुंशीराम का मस्तिष्क ठुन हो रहा था। किसी लड़की के एकाएक गायब होने के पीछे प्रणय गाथा होती थी, ऐसा मुंशीराम का अनुभव था। वह रोशन के साथ छाया के प्लायन करने का सन्देह करता था परन्तु घटनायें कुछ और बता रही थीं। जो बयान रोशन की माँ ने दिये थे और जिस समय रामदई कथा सुनने गई थी, उन दोनों में बहुत सीमा तक सामंजस्य था। रोशन के घर से प्रस्थान करने से कुछ मिनट पूर्व ही रामदई गई थी और उसके आधे घण्टे बाद छाया ने घर को ताला लगाया। इन्सपैक्टर इन तथ्यों पर विचार कर रहा था। यदि रेलवे स्टेशन का बुकिंग क्लर्क यह कह देता कि उसने केवल दो टिकिट लाहौर के बेचे तो मुंशीराम का कार्य सरल हो जाता। इस पर भी उसने अपना अनुमान बताते हुए कहा, "दयाराम! मेरा मन कहता है छाया को रोशन फुसला कर अपने साथ ले गया होगा।"

दयाराम के मन पर वज्रपात हुआ। उसने क्षुब्ध हो कर कहा, "मैं इसको असम्भव मानता हूँ।"

"तो मैं स्थानीय खोज करवाता हूँ।" मुंशीराम अपने मित्र को सांत्वना देते हुए बोला।

उस रात दयाराम के घर में न भोजन बना और न कोई सो सका। अगले दिन समस्त मुहल्ले में छाया के घर से भाग जाने का समाचार फैल गया। दयाराम लज्जा के मारे दुकान पर भी न गया। मनमोहन ने दुकान खोली परन्तु दोपहर को बन्द कर वह भी घर आ

गया।

तीन दिन बीत गए। छाया का कुछ पता नहीं चला। दयाराम ने मन पर पत्थर रख लिया और उसके लौटने की आशा त्याग दी। मुंशीराम ने पुनः अपना सन्देह बताया और निश्चयात्मक स्वर में कहा, "इतना जानता हूँ छाया इस नगर में नहीं है।"

दयाराम यहां तक उससे सहमत था, पर यह मानने के लिए तैयार नहीं हुआ कि उसकी बेटी रोशन के साथ भागी है। मुंशीराम ने उसका ध्यान इस ओर भी आकृष्ट किया कि रोशन ने अपने घर कोई पत्र भी नहीं लिखा। इससे तो दयाराम और अधिक चिन्तित हो गया। वह एक न एक दिन छाया के पकड़े जाने अथवा घर लौट आने की कल्पना करता था तो उसको विवाहने की कठिनाई पर भी विचार करने लगता था। बिरादरी में उसकी नाक कट चुकी थी और वह छाया के मिल जाने पर अपनी लज्जाजनक अवस्था की कल्पना कर दखी होता था। इस कारण सब कुछ ईश्वर पर छोड़ दुखी हो मुंशीराम ने अन्तिम बात कही, 'कर्म गति टारे नाहि टरे' और मुंशीराम ने भी हार कर मौन धारण कर लिया।

रामदई पर इस घटना का दुष्प्रभाव यह हुआ कि उसने चारपाई पकड़ ली। उसकी भूख बन्द हो गई थी। केवल फलों का रस बहुत कठिनाई से उसके गले में उतारा जाता। हकीम दयाराम ने डाक्टर से भी परामर्श लिया। डाक्टर के अनुसार रामदई को कोई रोग नहीं था। दयाराम स्वयं भी देख रहा था कि शरीर पर उसकी मानसिक पीड़ा का प्रभाव है। उसे आघात पहुँचा है। अतः वह दिन प्रति दिन मृत्यु की ओर भागी जा रही है।

वास्तव में रामदई के मन पर प्रतिक्रिया यूँ हुई थी कि वह स्वयं को ही छाया को भागने देने का कारण मानने लगी थी। वह पश्चात्ताप करती कि उसने क्यों छाया को डाँटा फटकारा? क्यों उसका तिरस्कार किया? क्यों इकलौती बेटी को मारा पीटा! क्या उसने माँ के दुर्व्यहार से क्षुब्ध हो घर से भागने का प्रयास किया? रामदई प्रायः यही

बातें सोच कर दुखी होती रहती।

मनमोहन ने माँ को समझाया। उसने कहा, "माँ। भाग्य से कौन लड़ सकता है। छाया को यहाँ क्या दुख था जो हमें छोड़ कर चली गई। मैं इसमें किसी का दोष नहीं समझता। उसके भाग्य में ठोकरें लिखी हैं। इस कारण वह चली गई। जब दो चार विपत्तियों से जूझ लेगी, आ जायेगी। इस प्रकार तुम कब तक उसको रोओगी। आखिर, इस संसार से एक दिन सबने जाना है।"

"तुम ऐसी बातें क्यों करते हो, बेटा ?" रामदई ने मनमोहन के मुख पर देखते हुए कहा।

"ठीक तो है माँ। छाया तो घर छोड़ गई है अपनी इच्छा से। फर्ज करो, उसके स्थान पर मेरी मृत्यु हो जाती तो भी तुम रो धोकर मौन हो जातीं। मनुष्य के हाथ में कुछ है क्या ?"

रामदई के लिए यह कटु सत्य असत्य था। उसके आँसू बह निकले। रोते हुए बोली, "ऐसी बुरी बातें क्यों करता है मनमोहन।"

मनमोहन उसको रोता देखता रहा। उसका मन भी दुखी था। वह कुछ बोलता तो उसकी आँखों से आँसू बह निकलते। अतएव उसने गर्दन घुमा मौन धारण कर लिया। वह माँ को रोने का अवसर देना चाहता था। मन का गुब्बार निकल जाने से मनुष्य का मन हलका हो जाता है। वह मन से चाहता था कि माँ जी भर कर रो ले। ठीक उस तरह जैसे कोई माँ अपनी युवा पुत्री के निधन पर रोती है। तब कुछ दिन बाद सामान्य स्थिति में हो जायेगी। इसके अतिरिक्त कोई चारा नहीं। यदि वह छाया के वियोग में तड़पती रहेगी तो वह भी संसार से शीघ्र विदा हो जायेगी। उसने कुछ क्षण रुक कर कहा,

"माँ। मेरा मित्र था न उमेश। पिछले वर्ष निमोनिये के कारण चल बसा। उसकी माँ की क्या दुर्दशा हुई। तुम से छिपी नहीं है। कितनी रोई वह बेचारी। आखिर उसे चुप होना पड़ा। अभी कुछ दिन हुए बेटी का विवाह क्या धूमधाम से किया। अभी एक वर्ष ही तो हुआ है उमेश की मृत्यु को। आखिर भूल ही जाना पड़ता है।"

"तुम ठीक कहते हो बेटा। किन्तु छाया मर गई है मैं कैसे विश्वास कर लूं।"

"करना ही पड़ेगा। मुंशीराम चाचा भी हार गया। वह उसे नहीं खोज सका। यदि तुम्हारी बात सत्य है तो एक दिन स्वयं आ जायेगी।"

मनमोहन के समझाने का कुछ प्रभाव रामदई पर अवश्य हुआ। उसने बिस्तर छोड़ दिया और थोड़ा बहुत घर का काम करने लगी। शनैः शनैः उसके स्वास्थ्य में सुधार हुआ यद्यपि उसके मुख से उदासी, निराशा टपकती थी। इस पर भी उसकी रुचि साधु-सन्तों की सेवा तथा पूजा पाठ में अधिक हो गई।

दयाराम अपनी पत्नी की मानसिक अवस्था को समझता था। वह ब्राह्मणों को बिना कारण भोजन खिलाने और स्वस्थ भिखारियों को भीख देने के पक्ष में नहीं था तो भी पत्नी का विरोध उसने कभी नहीं किया। विषादपूर्ण मन ईश्वर की भक्ति में रस पाता है। मन बहलाने का भी यह उचित तथा सुगम मार्ग है। उसके मन को शान्ति मिलती है। वह हर मनुष्य में अपना प्रतिबिम्ब देखता है। उसको संसार मिथ्या प्रतीत होता है और समझने लगता है सब मनुष्य दुखी हैं। और वह दुखियों की सेवा कर रहा है। यही विचार उसे शान्ति प्रदान करता है।

ठीक ऐसी दशा दयाराम रामदई की समझता था यद्यपि वह इस दृष्टिकोण को ठीक नहीं मानता था। फिर भी वह विवश था। सन्तान का वियोग माँ के लिए कितना भयानक और दुखदायक है। वह इस भावना से विभोर हो बुद्धि से काम लेना बन्द कर देता और उसे रामदई से हार्दिक सहानुभूति हो जाती।

रामदई अपने पति और पुत्र के सुख की ओर भी कम ध्यान देती थी। एक कथावाचक स्वामी हरगोपाल जी का उसके मन पर इतना प्रभाव हुआ कि वह हर सप्ताह उन्हें अपने घर पर न्यौता दे देती थी। एक बार स्वामीजी अपने तीन शिष्यों को अपने साथ लेते आये। उन्होंने इसकी सूचना पहले ही रामदई को दे दी थी।

रामदई ने सामने भोजन परोस कर रखा तो वह विस्मय में उसका मुख देखता रह गया। आठ व्यंजन थे—तीन मीठे और पांच नमकीन। किन्तु वह मुस्कराता हुआ भोजन करने लगा। उसको कुछ कहने अथवा टोकने का साहस न हुआ। उसके मस्तिष्क से एक स्वर अवश्य गूंज रहा था कि व्यर्थ में इतना बढ़िया भोजन बना कर धन का अपव्यय किया गया है। किसी सगे सम्बन्धी के विवाह पर भी इतने व्यंजन उसने न खाये थे। भूख बहुत लगी थी। इस कारण खाता गया और रामदई से यह भी न कह सका कि वह भी भोजन कर ले।

दयाराम दुकान पर लौटा तो मनमोहन खाने आया। उसके विस्मय का पारावार न रहा। रामदई ने उसे खिलाने के अनन्तर स्वयं खाया।

इस घटना का प्रभाव दयाराम पर यह हुआ कि वह घर के व्यय के विषय में विचार करने लगा। युद्ध के कारण खाद्य सामग्री मंहगी हो गई थी। लोगों की साधु-सन्तों के प्रति श्रद्धा कम होने लगी थी। इस पर भी उसके मन में एक भय समा गया था कि रामदई को टोकने की प्रतिक्रिया भयानक हो सकती है। धन का इस प्रकार व्यय कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति उचित नहीं मान सकता। रामदई फिर क्षुब्ध हो चारपाई न पकड़ ले, दयाराम इस बुरी कल्पना के अन्तर्गत मौन धारण किये रहा।

रामदई अपनी धुन में भावुकता से काम लेती थी। उसको मंहगाई अथवा विश्वयुद्ध के भीषण परिणामों से कोई प्रयोजन नहीं था। उसकी साधु सन्तों की सेवा में रुचि पूर्ववत बनी हुई थी।

: ४ :

रोशन छाया के साथ लाहौर स्टेशन पर उतरा। चश्मे वाले काले व्यक्ति की घूरती हुई दृष्टि उसको व्याकुल कर रही थी। वह कुली से सामान उठवा स्टेशन से बाहर जा किसी धर्मशाला की खोज करना चाहता था जहां वे दोनों कुछ दिन रह सकते। छाया को लेकर सीधा

समीप मुख ले जा कर बोला, "क्या यह सौन्दर्य धर्मशाला में निवास करेगा ? रोशन !"

रोशन गम्भीर हो गया। उसने साथ चलती हुई छाया के मुख पर देखा। यह जानने के लिए कि उसने सुन तो नहीं लिया। वह रमेश की बात का कोई उत्तर नहीं दे सका। रमेश ने पुनः कहा, "मैं सब समझ गया हूँ। तुम चिन्ता न करो। मैं पिता जी को सब समझा दूंगा।"

रोशन ने मौन हो सब स्वीकार कर लिया। रमेश ने हँसराज से पूछा, "मुनीमजी। आप घर जाइएगा या कोठी पर चल रहे हैं!"

"मैं अभी घर जा रहा हूँ छोटे बाबू। दो घण्टे तक पहुँच जाऊँगा। सेठ जी को मेरे लाहौर पहुँचने की सूचना दे देना।"

रमेश भी यही चाहता था। छाया और रोशन तांगे के पिछले भाग में बैठे और रमेश कोचवान के पास आगे बैठ गया। ताँगा रमेश की कोठी की ओर चला।

एवट रोड पर एक सुन्दर कोठी में रमेश ने छाया और रोशन को अपने कमरे में ठहरा दिया। नौकर को बुला कर उनके नहाने के लिए सब प्रबन्ध करने को कह दिया।

दोनों नहा चुके तो रमेश उनके साथ एक अन्य कमरे में पहुँचा। वहां एक अधेड़ आयु के लम्बे तगड़े महानुभाव बैठे अल्पाहार ले रहे थे। वे छुरी कांटे से आमलेट खा रहे थे और बैरा एक ओर खड़ा उसके आदेश की प्रतीक्षा कर रहा था।

रमेश ने रोशन और छाया के साथ कमरे में पदार्पण किया तो उस ओजस्वी पुरुष के हाथ रुक गए। वह नव आगन्तुकों को देखने लगा। रमेश ने कहा, "पापा,। यह मेरे मित्र हैं रोशन। अपनी बहिन के साथ लाहौर आये हैं। मैंने इसे यहां आने का निमन्त्रण दिया था।"

"अच्छा।" लाला गोपालकृष्ण ने मुस्कराते हुए उन्हें देखा और बोले, "बैठो बेटा।"

रोशन और छाया ने हाथ जोड़ दिये। छाया का दम घुटने लगा

था, इतने बड़े मकान में। रमेश द्वारा बहिन शब्द का प्रयोग उसे भला न लगा था। इस पर भी रमेश के पिता गोपालकृष्ण का स्नेहभरी दृष्टि से उन्हें देखना अति भला लगा और उस तेजस्वी पुरुष के मुख पर सरलता तथा वात्सल्य देख दोनों उसके सामने बैठ गए।

रमेश ने बैरे को संकेत किया और उसने तीनों के लिए नाश्ता मेज़ पर लगा दिया।

गोपालकृष्ण अल्पाहार समाप्त कर उठते हुए बोला, "मैं जा रहा हूँ। ड्राईवर गाड़ी ले आयेगा। तुम लोग घूमने जा सकते हो। लंच तक लौट आना। भोजनोपरान्त गाड़ी मैं ले जाऊँगा।

"पापा। मुनीम हँसराज आ गया है।" रमेश ने बताया।

'यहां आये तो उसको छावनी भेज देना।"

गोपालकृष्ण के जाने के पश्चात् तीनों नाश्ता करते हुए बातें करने लगे। रोशन और छाया को रमेश के पिता का व्यवहार-देख सन्तोष हुआ किन्तु रोशन के मन में, रमेश द्वारा छाया को उसकी बहिन बताना बुरी तरह कचोट रहा था। वह अवसर की खोज में था कि रमेश के सम्मुख अपनी स्थिति स्पष्ट कर दे।

अल्पाहार समाप्त कर तीनों ड्राइंग रूम में चले आये। रमेश ने छाया को सम्बोधन कर कहा, "बैठिए।"

छाया बैठ तो गई पर इतने बढ़िया सोफे पर मैले वस्त्रों में लिपटी बैठी लज्जा अनुभव कर रही थी। उसके पास एक जोड़ी वस्त्र भी न थे जो वह बदल सकती। उसको ग्लानि हो रही थी। यद्यपि वह मुख से पूर्ववत सुन्दर लग रही थी।

रमेश ने एक ही दृष्टि में रोशन और छाया की पूर्ण अवस्था समझ ली थी। उसने रोशन को सम्बोधन कर कहा, "पापा बहुत ही अच्छे हैं। तुम तो खामखा की चिन्ता कर रहे थे। अच्छा हुआ तुमने मेरी बात मान ली, अन्यथा धर्मशाला में तुम दोनों का बुरा हाल होता।"

दोनों ने रमेश को कृतज्ञ नेत्रों से देखा। ड्राइंग रूम तो सर्वथा

कोहमरी बना हुआ था। रोशन ने अपने ही क्षेत्र में पर्वतीय स्थान कोहमरी देखा था। जून मास की गर्मी में वह रमेश के घर में शीतलता अनुभव कर रहा था। दोनों को ऐसे लग रहा था कि वे सचमुच स्वर्ग में आ गए हैं यद्यपि उन्हें स्वर्ग लोक की अनुभूति न थी, केवल उसकी कल्पना मात्र ही थी।

छाया की दृष्टि बार-बार अपने वस्त्रों की ओर जाती और वह उदास हो जाती। कोई चिन्ता उसके अन्तर में हलचल मचा रही थी। रमेश उसके मुख से सब कुछ भली भांति पढ़ रहा था। उसने बात आगे चलाते हुये कहा,

"मैं तुम्हारी कठिनाई समझता हूँ रोशन। पापा से नौकरी की बात तो पीछे करेंगे पहले बाज़ार चल कर छाया के लिए दो जोड़ी वस्त्रों का प्रवन्ध करना होगा। मैं समझता हूँ इसे तुम्हारी बहिन बता कर ठीक ही किया है। अब तुम दोनों निर्भय हो कर यहां रह सकते हो। *फिर भी पोशाक का प्रवन्ध पापा के लौट आने से पूर्व होना* चाहिए।"

रोशन का ध्यान अभी तक इस ओर नहीं गया था। अब वह चिन्तित हो गया। वह रमेश से गिला भी न कर सका कि उसने छाया को उसकी बहिन बता कर उसके उद्‌गारों को ठेस पहुँचाई है।

रमेश ने तो अपनी स्थिति स्पष्ट कर दी थी। समय की मांग थी कि वह भी प्रत्यक्ष में छाया को बहिन समझ वैसा ही अभिनय करे, जैसा रमेश ने उनके हित में किया। यह तो अकाट्य सत्य है कि जितना सुख उन्हें यहां मिलने की सम्भावना थी, कहीं अन्यत्र मिलना असम्भव था। रोशन जिस उद्देश्य से आया था, अभी पूर्ण होना शेष था और रमेश इसे साधारण कार्य समझता था। अतः रोशन रमेश की योजना पर रुष्ट नहीं था। वह नत मस्तक हो बैठा रहा।

छाया विचार कर रही थी रमेश रोशन का बाल्यकाल का मित्र है। इस कारण इतनी सुहृदयता तथा सहानुभूति दिखा रहा है। शैशव की मित्रता कितनी स्नेहयुक्त होती है। वह मौन धारण किये अपने

को आपत्ति नहीं थी प्रत्युत वह चाहता था कि छाया रमेश को अपना होने वाला देवर समझ निस्संकोच बात करे।

परन्तु रमेश का मुख निष्प्रभ दिखाई दिया। वह धनी बाप का बेटा रूढ़िवादिता को तिलांजली दे चुका था। उसका प्रत्येक आचरण पाश्चात्य सभ्यता का था। रावलपिण्डी के मध्यवर्ग की यह सभ्यता भी उसे रूढ़िवादिता लगती थी। उसे 'भापा जी' सम्बोधन कदापि पसन्द नहीं आया। उसकी न कोई बहिन थी न भाई। पिता को वह पापा कह कर सम्बोधन करता था। पिता शब्द उसके लिए त्याज्य बन गया था।

उसकी एक मौसी की लड़की थी, यमुना। उसके पिता अनारकली ार में काकरी की दुकान करते थे। यमुना रमेश के घर आती उसको 'भ्राजी' अथवा 'भापा' कह कर सम्बोधन करती तो उसे ़ा न लगता। एक बार उसने यमुना को टोक दिया, "यमुना, यह । व्यर्थ की रट लगा रखी है? सभ्य व्यक्तियों की तरह ऐड्रैस म्बोधन) करो।"

"ओह! तो अपने भाई को भाई कह कर सम्बोधन करना असभ्यता गई।"

"सभ्य समाज में ऐसा नहीं चलता।" रमेश ने नाक चढ़ा कर ा।

यमुना रमेश से दो वर्ष ही छोटी थी। बी० ए० में पढ़ रही थी। ाने मुस्करा कर कहा,

"तो तुम अंग्रेज बन गए हो! इन फिरंगियों को हिन्दुस्तान से कलने दो। फिर पूछूँगी तुमसे।"

"फिर भी मैं मिस्टर रमेश ही रहूँगा।"

उस दिन के पश्चात् यमुना उसको मिस्टर रमेश कह कर पुकारती । और मुस्करा देती थी। देखने वालों को ऐसा लगता कि यमुना ंग्य कर रही है।

आज छाया ने यमुना की भांति उसको 'भापाजी' से सम्बोधन

किया तो वह टोकने का साधन न बटोर सका। इस पर भी उसकी सूरत देखने से पता चलता था कि वह प्रसन्न नहीं हुआ। वह उसको छाया कहकर पुकारता था और चाहता था कि वह भी उसे रमेश कह कर पुकारे। वह अपने और छाया के मध्य किसी प्रकार के शिष्टाचार को पसन्द नहीं कर सकता था।

उसने पुरानी अनारकली के पास माल रोड के नुक्कड़ पर कार एक किनारे खड़ी कर दी। रोशन और छाया को पैदल घुमाने के निमित्त अनारकली के विशाल तथा लाहौर के सुन्दरतम बाज़ार में वह प्रविष्ट हुआ।

सबसे पहले वे कपड़े की दुकान पर गए।

छाया ने साधारण धोती पसन्द की क्योंकि उसके दाम वह स्वयं देना चाहती थी। रमेश ने नाक चढ़ाते हुए कहा, "यह धोती सोते समय प्रयोग में लाई जा सकती है। उसने एक बढ़िया रेशमी साड़ी छाँट कर छाया के सामने रखते हुए कहा, "यह कैसी है ?"

"अच्छी है।"

रमेश ने साड़ी और वह धोती पैक करवाने का आर्डर दे दिया। ब्लाउज़ और पेटीकोट के लिए कपड़ा भी खरीद लिया। तत्पश्चात् वे सूटों (कमीज़ सलवार) के लिए साटिन, करेब इत्यादि देखने लगे।

रोशन और छाया आश्चर्यचकित थे कि किसके लिए ये सब वस्त्र खरीदे जा रहे हैं। रोशन ने बहुत दूर तक कल्पना की। कदाचित् वह अपनी होने वाली पत्नी के लिए खरीदना चाहता है क्योंकि रमेश कपड़ा देखते हुए कह रहा था, छाया के साथ होने का कुछ लाभ तो होगा ही। इसकी पसन्द मुझसे काफी मिलती है। हमारे पास समय बहुत कम है फिर कभी आयेंगे।"

उक्त शब्दों से रोशन का अनुमान था कि उसका मित्र छाया की राय से अपनी भावी पत्नी के लिए सूटों का कपड़ा पसन्द करना चाहता है। अतः वह भी अपनी राय रंग आदि के बारे में देता रहा।

रमेश ने दो सूटों का कपड़ा और ओढनियां खरीद लीं। सब

सामान लिफाफे में डलवा दाम दे दिये और साथ ही एक दर्ज़ी की दुकान पर आ गया।

छाया के विस्मय का पारावार न रहा जब दर्ज़ी ने उसके ब्लाउज़ के अतिरिक्त सूट का भी नाप लिया। दर्ज़ी रमेश का मित्र था और लाहौर का फैशनेबुल दर्ज़ी माना जाता था। दुकान भी बहुत बड़ी थी और आधुनिक ढंग से बनी थी।

रमेश ने दर्ज़ी को पृथक् में कुछ समझाया और दस रुपये का नोट निकाल कर कहा, "हम दो घण्टे बाद लौट आयेंगे।"

दर्ज़ी की दुकान से उतर रमेश अपने महमानों को केसरी सोडा-वाटर की दुकान पर ले गया। वहां वे ठण्डी लैमन का आनन्द लेने लगे। किसी प्रकार दो घण्टे व्यतीत करने थे। दर्ज़ी ने दो घण्टे में एक ब्लाउज़ और पैंटोकोट तैयार कर देने का वादा किया था।

अनारकली बाज़ार की सैर करने के अनन्तर वे दर्ज़ी की दुकान पर लौट आये। छाया के लिए ब्लाउज़ और पेटीकोट तैयार था। रमेश ने एक कमरे की ओर संकेत कर कहा, "जाओ। तैयार हो जाओ।"

छाया उस कमरे में गई और द्वार भीतर से बन्द कर लिया। उसके वस्त्र वहां पहुँचा दिये गए थे। उसके हर्ष का पारावार न रहा जब उसने साड़ी पहन अपना रूप वहां लगे दर्पण में निहारा। जब वह बाहर आई तो रोशन उसका सौन्दर्य देखता रह गया। रमेश ने मुस्कराते हुए कहा, "वण्डरफुल।"

छाया सुकचा गई। उसके मुख पर लालिमा दौड़ गई। उसने कनखियों से रमेश को देखा और दर्ज़ी की उपस्थिति में कुछ कहना उचित न समझ दुकान से नीचे उतर गई। रमेश ने दर्ज़ी को कहा "शेष कपड़े कल शाम तक भिजवा देना।"

अपने मैले वस्त्र साड़ी वाले डिब्बे में डाल लिए। बनारसी साड़ी में छाया अनुपम सुन्दरी दिखाई दे रही थी। रमेश उसको ऐसे देख रहा था जैसे निरीक्षण कर रहा हो कि कोई कमी तो नहीं रह गई है।

एकाएक उसका ध्यान छाया के पाओं की ओर गया।

'ओह ! अभी एक कसर है।' इतना कह वह सामने 'कपूर बूट शाप' में घुस गया। रोशन और छाया को भी विवश उसका अनुकरण करना पड़ा।

छाया के लिये सुन्दर सैंडल खरीदी गईं। पुरानी चप्पल सैण्डल के डिब्बे में बन्द हो गई। मैले वस्त्रों की भांति। दोनों डिब्बे रोशन उठाये हुए था और कोमलांगी छाया दोनों के मध्य चल रही थी। वह स्वयं भी स्वाभिमान की भावना से धीरे-धीरे पग रखती हुई विशेष मुद्रा बन चल रही थी।

रोशन विचार कर रहा था रमेश ने क्यों इतने रुपये उसकी प्रेमिका पर व्यय कर दिये। उसके अनुमान से डेढ़ सौ रुपये से ऊपर रमेश व्यय कर चुका था। अभी नौकरी तो उसको मिली नहीं थी। क्या रमेश ने यह सब कुछ भाभी को उपहार स्वरूप दिया है अथवा उसके वेतन से यह रुपया काटा जायेगा ? वह मन ही मन जोड़ तोड़ करता हुआ छाया के साथ चल रहा था।

तीनों टहलते हुए कार के पास पहुँचे। रमेश ने मोटर अजायब घर की ओर घुमा दी। अजायबघर देखने के बाद गोल बाग में थोड़ी देर घूम रमेश उन्हें वापिस कोठी पर ले आया। दोनों के मुख खिले हुए थे। वे रमेश के प्रति बहुत कृतज्ञ नेत्रों से देख रहे थे। जब वे घर पहुँचे तो लाला गोपालकृष्ण लंच के लिए आया हुआ था और रमेश की प्रतीक्षा कर रहा था।

छाया का सौन्दर्य देख तो वह भी चकित रह गया। कभी वह रोशन को देखता और कभी छाया को। दोनों के वस्त्रों में आकाश पाताल का अन्तर था। रोशन साधारण धुली हुई पतलून कमीज़ पहने था। लाला गोपालकृष्ण प्रातः की छाया से अब की छाया की तुलना कर रहा था। वह फिर तुलना करता था उसके भाई से जो उसका संरक्षक था और उसके पुत्र का अतिथि बन उसकी कोठी में रहने आया था। गोपालकृष्ण ने कुछ नहीं पूछा। मुस्कराता हुआ बोला.

"वैठो। भोजन करेंगे।"

सव वैठ गए। रोशन रमेश के पिता की विलक्षण दृष्टि का आशय समझने का प्रयास करने लगा।

वैरे ने मेज़ पर भोजन लगा दिया। सब खाने के लिए तैयार वैठे थे। छाया वहुत व्यग्र दिखाई दे रही थी। उसका ध्यान कार में पड़े मैले वस्त्रों और चप्पल के डिव्बों की ओर चला गया था। वे डिव्वे वह मोटर में भूल आई थी और अव सोच रही थी भोजनोपरान्त लाला गोपालकृष्ण मोटर ले कर काम पर लौट जायेंगे। साड़ी के डिव्वे में उसके मैले वस्त्र देख वे क्या सोचेंगे। सारा रहस्य खुल जायेगा। इस कारण उसने भोजन आरम्भ नहीं किया। एकाएक उठ खड़ी हुई और वोली,

"मैं अभी आती हूँ।"

सव ने समझा शौचालय में गई है। छाया कोठी के 'पोर्च' में गई जहां कार खड़ी थी और दोनों डिव्वे उठा कमरे में रख आई। अव वह हलकी अनुभव कर रही थी। भोजन करते समय उसके मन में किसी प्रकार का असन्तोष नहीं था।

लाला गोपालकृष्ण उसको खाते देख कर मन ही मन मुस्करा रहा था। उसके सम्मुख रोशन और छाया में असमानता स्पष्ट प्रकट हो रही थी। वहिन भाई में कुछ तो समानता होनी चाहिए। न रूप रेखा, न उठने वैठने, न खाने-पीने का ढंग। फिर दोनों के पहनावे में भी कितना अन्तर था। उसका अनुमान था कि कोई गहरा रहस्य है।

गोपालकृष्ण ने ज़माना देखा था। वड़े-वड़े चतुर अफसरों के मन की वात भांप जाता था। छाया की आंखों में गहरी चिन्ता वह स्पष्ट देख रहा था। इससे वह अनुमान लगाता था कि इस लड़की का रमेश अथवा रोशन से कोई विशेष सम्वन्ध होगा। जो साड़ी वह पहन कर वैठी है, अभी यहीं से खरीदी गई है। इस पर भी वह एक चतुर ठेकेदार के नाते पूर्ण स्थिति को समझे विना कोई वात करना अथवा पूछना उचित न समझ मौन धारण किये भोजन करता रहा।

रोशन के मस्तिष्क में अब तक गोपालकृष्ण का उन्हें बार-बार देखने का कारण स्पष्ट हो गया था। उसने एक दृष्टि अपने वस्त्रों पर डाली और मन मसोस कर रह गया। रमेश ने छाया पर डेढ़ सौ रुपये एक दिन में व्यय कर दिये थे। उस डेढ़ सौ रुपये ने छाया को एक अद्वितीय सुन्दरी बना दिया। वह उसकी बगल में बैठा स्वयं को विलक्षण अनुभव कर रहा था। गोपालकृष्ण की पैनी दृष्टि से वह अधिक चिन्तित हो गया।

भोजन समाप्त हुआ तो सब अपने-अपने कमरे में विश्राम निमित्त चले गए। छाया और रोशन कमरे में अकेले थे। रमेश को पिता ने अपने कमरे में बुला लिया था।

एकान्त में छाया को देख रोशन के मन में गुदगुदी होने लगी। उसने कहा, "आज तो तुम राजकुमारी दिख रही हो।"

छाया उसके मुख पर देखती हुई मुस्करा दी। रोशन संयम खो बैठा और कुछ कहने के स्थान पर छाया को अपनी बाहों में भींच लिया।

"यह क्या ? कोई आ जायेगा।" छाया चिल्लाई।

इस पर भी रोशन ने उसके कपोलों को चूम लिया। छाया स्वयं को उसके आलिंगन से मुक्त करती हुई बोली, "यह उचित नहीं है। इस प्रकार तो हम बदनाम हो जायेंगे।"

"कौन बदनाम करेगा ?"

"जो कोई भी देखेगा।"

"इस समय कोई नहीं देख रहा। रमेश के पापा के अतिरिक्त इस कोठी में है कौन तुम्हें देखने वाला और निश्चय जानो कि वे इस कमरे में नहीं आयेंगे। रहा रमेश का प्रश्न वह हमारे परस्पर सम्बन्ध से अनभिज्ञ नहीं है।" इतना कह कर रोशन छाया के साथ पलंग पर बैठ गया।

छाया का रूप लावण्य निखरा हुआ था और रोशन के मस्तिष्क में उसकी मस्ती बढ़ रही थी। पहले उसने अपनी इस प्रेमिका को इतना सुन्दर तथा आकर्षक नहीं पाया था। उसने छाया का कोमल हाथ

सहलाते हुए पूछा, "तुम मुझको छोड़ कर तो नहीं जाओगी ?"

छाया ने मद भरे नयनों से रोशन के मुख पर निहारा। रोशन के लिए यह दृष्टि असह्य थी। उसने एकाएक अपने अधर छाया के गुलाबी कपोलों पर रख दिये। इतने में किसी के पांव की आवाज़ आई। छाया ने छटपटा कर कहा, "रमेश आ रहा है।"

रोशन की आंखें वासना के आवेग से लाल हो रही थीं। वह उठ कर द्वार वन्द ही करना चाहता था कि रमेश कमरे में आ गया। वह दोनों को देख मुस्कराया। रोशन अन्यमनस्क-सा बोला, "आओ रमेश।"

छाया उठ खड़ी हुई और लज्जा से मुख मोड़ लिया। उसके कपोलों पर रोशन के चुम्बन की मस्ती अभी तक छाई थी। वह फर्श की ओर देखती हुई शर्मा रही थी।

रोशन ने रमेश के साथ वैठते हुए धीरे से पुकारा, "छाया।"

छाया ने अपने कोमल शरीर को घुमा रमेश की ओर देखा। इस विशेष मुद्रा में छाया का रूप अधिक निखरा दिखाई दिया। रोशन के आलिंगन में उसकी केशराशि खुल गई थी और सूक्ष्म वाल पीठ पर अवकीर्ण अवस्था में लटक रहे थे।

रमेश ने उसे समीप से निहारा। उसके पूर्ण शरीर में रोमांच हो आया। यदि रोशन वहां न होता तो वह छाया को अपने वाहुपाश में जकड़ लेता। वह कितनी देर तक उसका सौन्दर्य देखता रहा। उसने प्रेममय स्वर में कहा, "वैठो छाया। खड़ी क्यों हो।"

छाया वैठ गई तो रमेश ने कहा, "समान गुण वाली वस्तुएँ इकट्ठी होने पर वातावरण को कितना वदल देती हैं। कल तक यह कमरा वीरान था आज प्रातः तुम आईं और फिर इस सुन्दर साड़ी ने तुम्हें भी कितना वदल दिया ? कितनी जंच रही हो इस साड़ी में। कल तक तुम्हारे सूट भी आ जायेंगे। भगवान ने जिसको रूप दिया हो उस पर ही इन मूल्यवान वस्त्रों की शोभा होती है। किसी कुरूप के शरीर पर तो इस साड़ी का मान भी क्या होता ?"

इतने स्पष्ट शब्दों में अपने सौन्दर्य की प्रशंसा सुनी तो छाया के कपोल आरक्त हो गए।

रोशन को रमेश द्वारा अपनी प्रेमिका की यह प्रशंसा भली नहीं लगी। वह आवेश में रमेश से कुछ कहना ही चाहता था कि रमेश उसका भाव ताड़ गया। झट बात बदल कर बोला, "रोशन! मैंने पापा से तुम्हारे यहां आने का उद्देश्य बता दिया है। तुम उनके धर्मपुरा आफिस में जा कर काम देख लेना। अभी साठ रुपया मासिक वेतन मिलेगा। फिर धीरे-धीरे उन्नति हो जायेगी।"

इस शुभ समाचार पर तो रोशन पहली बात भूल गया और मित्र का धन्यवाद करते हुए पूछा, "क्या काम करना होगा?"

"बस! जो भी पापा तुमको बतायें या मैं कहूँ। काम की क्यों चिन्ता करते हो? डाक रजिस्टर कर देना और चिट्ठियां फाइल में लगा देना। हिसाब-किताब रखना भी सीख जाओगे तो और काम बता देंगे। टाइप का काम तुम्हें सीखना होगा। मैं समय पर तुम्हें सब कुछ समझा दूँगा।"

"कब चलना होगा?"

अभी थोड़ी देर में पापा के साथ चलेंगे। वेतन कल से आरम्भ होगा। थोड़ी देर विश्राम कर लो। फिर तैयार हो जाना।"

इतना कह कर रमेश चला गया।

अब रोशन ने छाया के मुख पर देखा और छाया ने कहा, "तुम्हारे मित्र तो बहुत अच्छे हैं। आते ही काम मिल गया।"

"और तुम्हें सुन्दर कपड़े मिल गए।"

रोशन के इस व्यंग्य पर छाया मौन हो गई। उसने रमेश द्वारा अपने सौन्दर्य की प्रशंसा किये जाने पर रोशन का मुख देखा था वह समझ रही थी कि रोशन के मन में कुछ कचोट रहा है जिसको व्यक्त करने में कठिनाई अनुभव कर रहा है। वह बहुत देर तक मौन धारण किये उसे देखती रही।

रोशन के मस्तिष्क पर जो नशा पहले छाया था, वह दूर हो गया

था और वह भविष्य में रहने और भोजन की समस्या पर विचार कर रहा था। कुछ विचार कर उसने छाया से पूछा, "...में कहीं अन्यत्र रहने का प्रबन्ध करना होगा।"

"क्यों ?"

"नौकरी मिल गई है। हमें पृथक् घर बसाना चाहिए।"

"तुम्हारे मित्र तुम्हें जाने देंगे ?"

"मैं तो जाना चाहता हूँ। साठ रुपये मासिक में यहां निर्वाह नहीं कर सकता। कल से रमेश मित्र के अतिरिक्त मेरा स्वामी भी होगा। बचपन की बात और थी। उसका प्रतिकार रमेश ने दे दिया। अन्यथा हम अब किसी सराय में पड़े होते। नौकरी पर जाने से मैं इस कोठी में कैसे रह सकूँगा। फिर वह मेरी भावी पत्नी को रेशमी साड़ी ले कर देगा और मैं तुम दोनों का मुख देखता रहूँगा। मुझ से यह सहन न हो सकेगा, छाया। हमें अपनी औकात नहीं भूलनी चाहिए ?"

छाया गम्भीर बनी रही। रोशन उसे मौन देख और व्याकुल हो उठा। उसने पूछा, "तुम नहीं जाना चाहतीं क्या ?"

"तुम जाओगे तो तुम्हारे साथ जाना ही होगा। तुम पहले निश्चय कर लो। मैं तो निश्चय कर ही तुम्हारे साथ आई हूँ।"

अब आगे बात नहीं चल सकी। छाया विचार करती थी कि वह रोशन के साथ जहाँ भी रहेगी, लोग उन्हें सन्देह की दृष्टि से देखेंगे। कोठी का वातावरण उसे बहुत सुखप्रद लग रहा था। आस-पड़ोस में भी कोई हस्तक्षेप करने वाला नहीं था। पृथक घर में वे बिना सामान कैसे रहेंगे ? अतः वह मन से चाहती थी कुछ मास उनको वर्तमान अवस्था में ही रहना चाहिए। जब कुछ सामान बन जायेगा तो वे पृथक मकान लेकर रह सकेंगे।

एक और बात की वह कल्पना करती थी। उस कल्पना के आधार पर उसका मन रोशन के पास एकान्तवास करने से डरता था। पृथक मकान लेकर अपनी गृहस्थी चलाने की बात तो उसे अयुक्तिसंगत लगती थी। वह सोचती पृथक मकान लेकर रहने से तो रोशन तत्काल उस

पत्नी बना लेगा। घर की व्यवस्था होने से पूर्व वह बिना विवाह के उसकी पत्नी बन जायेगी। उसको यह पसन्द नहीं था। यद्यपि अपने माता-पिता के पास लौट जाने का प्रश्न नहीं उठता था, तो भी वह रहने योग्य घर बनने के अनन्तर ही रोशन की सहवासिन बनना चाहती थी। इस पूर्ण व्यवस्था के लिए वह रोशन को धन एकत्रित करने का अवसर देना चाहती थी। कोठी से चले जाने पर उनके लिए अनेक बाधाओं का सामना करना था। सामाजिक मान-मर्यादा का प्रश्न मुख्य था। पड़ोसियों की तिरछी दृष्टि की कल्पना छाया की व्यग्रता में वृद्धि करती थी। उसे भय था कि कहीं पकड़ी न जाये। वह जानती थी कि चाचा मुंशीराम उसे खोजने की सर-तोड़ कोशिश कर रहा होगा। अतः वह कोठी में स्वयं को अधिक सुरक्षित मानती थी।

रोशन को विचारों में तल्लीन देख छाया ने भी इस समय अधिक बात करना उचित न समझा। उसने कहा, "नींद आ रही है। कुछ देर विश्राम करना चाहूँगी।"

"मुझको तो नौकरी के लिए जाना है। इतना कह कर उसने कंघी से अपने बाल ठीक किये और छाया पर दृष्टि डाली। छाया ने अब तक साड़ी उतार दी थी और सोने की तैयारी कर रही थी। उसने कहा,

"अच्छा ! तुम जाओ। कब तक लौटोगे?"

"कैसे बता सकता हूँ।" वह छाया के समीप आकर बोला, "तुम्हें छोड़ कर जाने को दिल नहीं करता।"

"तो न जाओ।"

"विवश हूँ, छाया।"

"मैं भी विवश हूँ, रोशन।" अब छाया ने मोटी-मोटी आँखों से रोशन की आँखों में झाँकते हुए कहा।

"तुम तो स्वेच्छा से आई हो।"

"हाँ। परन्तु इन मजबूरियों को पार कर ही हम सुखी रह सकेंगे। तुम समझते क्यों नहीं रोशन।"

रोशन सब समझता था। वह भी मजबूर था। रमेश ने छाया

को कपड़े ले दिये और वह चंचल हो उठा। उसका धीरज छूट रहा था। एक दिन, एक पल भी प्रतीक्षा करना सरल नहीं था। उसने अब छाया का एक अन्य रूप देखा था, पेटीकोट और चुस्त रेशमी ब्लाउज में। पीठ पर बिखरे हुए केश। वह उसके और समीप आ गया। दोनों एक दूसरे को देख रहे थे। दोनों के सांस लेने का शब्द भी सुनाई देता था। रोशन उसके इतना समीप खड़ा था कि उसके उन्नत स्तनों से उसकी छाती का स्पर्श हो रहा था। रोशन ने उसकी थुड्डी को स्पर्श करते हुए कहा, "हम अब विछुड़ नहीं सकते। तुम भी लौट कर नहीं जा सकतीं। मुझे नौकरी भी मिल गई है, केवल एक घर बनाने की कसर है।" इतना कह कर उसने अपने होंठ छाया के होठों पर रख दिये।

वाहर से आवाज आई। "चलो रोशन। पापा जा रहे हैं।"

रोशन को विवश जाना ही पड़ा। छाया ने द्वार भीतर से बन्द कर दिया और गद्देदार विस्तर पर अपने कोमल शरीर को पटक दिया। खिड़की से मोटर के जाने की आवाज सुनाई दी। छाया सोने का प्रयास करने लगी।

नींद कैसे आ सकती थी। उसके यौवन के साथ रोशन छेड़खानी कर गया था। उसके जाने के बाद उसके मन में एक टीस सी उठ रही थी। फिर जो कुछ पिछले छः घण्टों में हुआ था उसका छाया के मन पर बहुत गहरा प्रभाव हुआ। सुन्दर वस्त्रों ने कम प्रभाव न डाला था फिर रमेश द्वारा स्पष्ट शब्दों में उसकी प्रशंसा करना। वह कसा हुआ ब्लाउज पहने पीठ के बल विस्तर पर लेटी थी। उन्नत स्तनों का उभार कितना सुन्दर लग रहा था, हलके नीले रंग के रेशमी ब्लाउज में। छाया के हृदय में गुदगुदी हो रही थी।

वह अपने भविष्य के विषय में मनन करने लगी। उसे अपने माता-पिता और भाई की याद आई। विगत चौबीस घण्टों के अपने कृत्य का अवलोकन करने लगी। उसके अन्तर से आवाज निकल रही थी कि पिताजी, मां और भाई उसके वियोग में कुछ दिन तक रोकर चुप हो

जायेंगे। उसके लिए घर लौट जाना असम्भव है। इससे वह जहाँ अपने भावी जीवन को अन्धकारमय बना देगी, प्रत्युत माता-पिता को समाज में इतना तिरस्कृत बना देगी कि वे मुख दिखाने के योग्य न रहेंगे।

बहुत देर तक विचार करने के अनन्तर इस परिणाम पर पहुँची कि अभी उसका यहाँ रहना ही उचित है। यहाँ किसी को सन्देह भी नहीं हो सकता कि छाया जैसे साधारण परिवार की लड़की इस कोठी में छिपी है। उसने निर्णय किया कि वह अधिक घूमने भी नहीं जायेगी। रमेश के विषय में उसको विश्वास था कि वह रोशन को कोठी से नहीं जाने देगा।

इस प्रकार संकल्प कर वह सन्तोष अनुभव करने लगी। उसकी आँखों में अब निद्रा की मस्ती छाने लगी। कुछ देर में गहरी नींद में सो गई।

: ५ :

रमेश रोशन को अपने पिता के कार्यालय में ले गया। वैसे तो गोपालकृष्ण ने अपनी कोठी के एक कमरे में भी कार्यालय बना रखा था किन्तु मुख्य कार्यालय धर्मपुरा में था। वह छावनी के निकट था और सब कार्यों में सुविधा रहती थी।

कोठी के कार्यालय में गोपालकृष्ण की एक लेडी सैक्रेटरी बैठती थी जिसको वह आवश्यक पत्र लिखवा देता और वह टाईप कर देती। मिस लोमा स्टेनोग्राफर थी और सैक्रेटरी का कार्यभार सम्हाले हुए थी। उसके दफ्तर का समय भी विलक्षण था। प्रातः आठ बजे से एक बजे तक और शाम को छः बजे से आठ बजे तक। लाला गोपालकृष्ण ने यह समय इसलिए रखा था कि वह प्रातः जब नहा धोकर पूजा पाठ से निवृत्त हो जाता तो वह आ जाती। उसको आवश्यक काम दे वह अपने कार्यों को देखने चला जाता। जब एक बजे से पूर्व भोजन के लिए आता तो सब काम लोमा तैयार कर देती। गोपालकृष्ण पत्र हस्ताक्षर कर देता तत्पश्चात् मिस लोमा घर चली जाती। शाम को

६: बजे वह गोपाल कृष्ण के घर आने तक फिर आ जाती और भोजन के समय तक रुकती।

गोपालकृष्ण को मिस लोमा का बहुत आराम था। एक वर्ष से कार्य सफलता से चलता रहा फिर धीरे-धीरे मिस लोमा खुलने लगी और स्वतंत्र पंछी की भाँति उसके पर फड़फड़ाने लगे।

रमेश ने बी० ए० पास किया और अवकाश का समय मिस लोमा की संगत में व्यतीत करने की लालसा करने लगा। मिस लोमा भी एक सामाजिक प्राणी थी। क्रिश्चियन समाज की लड़की। डेढ़ सौ रुपया उसे गोपालकृष्ण देता था। रमेश से परिचय हुआ तो चाय और सिनेमा का खर्च भी बचने लगा। रमेश को सुन्दर साथिन मिली और लोमा को सौन्दर्य का आदर करने वाला धनी और सुन्दर युवक।

अब मिस लोमा आठ बजे के बाद भी प्रायः रुक जाती और पहले की अपेक्षा बहुत सजधज कर कार्यालय में आती। कई बार ऐसा अवसर आया कि लोमा आती तो रमेश अकेला कोठी में उसको मिलता और दोनों प्रेमालाप में मग्न हो जाते। लाला गोपालकृष्ण ने उसको रमेश के पास अपने डाईनिंगरूम में चाय पीते देखा। कभी देर हो जाती तो रमेश उसको लँच अथवा डिनर पर आमंत्रित कर लेता।

गोपालकृष्ण की समझ में आया कि यह ईसाई सुन्दरी इकलौते बेटे को पथ भ्रष्ट करने का प्रयास कर रही है। वह उसको धनी समझ जहाँ अनुचित लाभ उठा सकती है, वहाँ रमेश भी उसके मोह-जाल में फँस कर अपने जीवन के उद्देश्य से विमुख हो जायेगा। दोनों अवस्थाएँ गोपालकृष्ण को रुचिकर नहीं थीं। वह नहीं चाहता था कि उसकी एकमात्र सन्तान पथ भ्रष्ट हो जाये और बिरादरी में तिरस्कृत समझी जाये। वह धार्मिक विचारों का व्यक्ति था और मन से चाहता था कि रमेश उसके सब कार्य को सफलतापूर्वक निभाये। वह युवा लड़के को डाँट भी नहीं सकता था। उसको भय था कि कहीं रमेश उससे घृणा कर विद्रोह न कर दे। वह अपने इकलौते बेटे से बुढ़ापे में

झगड़ा करना भी ठीक नहीं मानता था। अतएव जब उसने रमेश की लोमा के साथ घनिष्टता देखी तो पहले मिस लोमा को काम देना कम कर दिया और धीरे-धीरे उसको यह आभास करा दिया कि उसके योग्य कार्य नहीं रहा। एक मास का वेतन पेशगी दे उसको छुट्टी दे दी।

मिस लोमा को ऐसी कूटनीति से निकाला गया कि किसी को उस बात का सन्देह तक नहीं हुआ जो गोपालकृष्ण अपने मन में निश्चय कर चुका था।

रमेश अब भी मिस लोमा को सिनेमा का निमन्त्रण दे देता था। मिस लोमा कोठी में नहीं आती थी। वह किसी स्थायी साथी की खोज में जुट गई थी।

लोमा के जाने के एक मास पश्चात् रमेश और छाया लाहौर पधारे। गोपालकृष्ण ने छाया का कुछ घण्टों में बदला रूप देखा तो उसको सन्देह हुआ कि यह साड़ी रमेश ने उसको लेकर दी होगी। फिर भी उसे अपने बेटे से पूछने का साहस नहीं हुआ प्रत्युत रमेश के विवाह की बात विचार करने लगा।

रमेश ने रोशन को नौकरी देने का प्रस्ताव रखा तो गोपालकृष्ण का ध्यान छाया की ओर गया। उसके लिए दस कक्षा तक पढ़े युवक को साठ रुपये की नौकरी देना बहुत साधारण बात थी तो भी उसने पूछा, "रोशन की बहिन भी नौकरी के लिए आई है ?"

"नहीं पापा। रोशन ने मुझको पत्र लिखा था कि वह बेकारी से तंग आ गया है। फौज में भर्ती होने के अतिरिक्त कोई रास्ता नहीं। इस कारण मैंने उसको लिख भेजा कि वह यहाँ आ जाये। कोई न कोई काम बन जायेगा। मुझको विदित नहीं था कि वह बहिन को भी साथ ले आयेगा।"

अच्छी बात। तुम रोशन से बात कर लो। उसको कार्यालय ले जाकर दीनदयाल के साथ लगा दो। वह उसको काम बता देगा।" गोपालकृष्ण ने कहा।

साठ रुपये वेतन की बात रमेश ने अपनी ओर से कही थी। गोपालकृष्ण सदा इस युद्ध के काल में चालीस रुपये में क्लर्क रखता था और तीन मास बाद उसका वेतन पचास कर देता था। साठ रुपये तो एक वर्ष तक काम देख कर होने की सम्भावना होती थी। परन्तु रमेश को विश्वास था कि रोशन कोई भी आपत्ति नहीं करेगा। अपने मित्र को कुछ तो अतिरिक्त लाभ होना ही चाहिए। वह रोशन को पित के आदेशानुसार दीनदयाल के सुपुर्द कर आया।

दीनदयाल गोपालकृष्ण के दफ्तर का सबसे पुराना क्लर्क था वह बड़े बाबू के नाम से विख्यात था। रमेश ने दीनदयाल को आदेश देने के बाद खजानची से कह दिया कि रोशन को नये क्लर्क के रूप में रखा है—साठ रुपये मासिक पर।

खजानची ने रोशन का नाम अपने रजिस्टर में लिख लिया रमेश की बात का अर्थ होता था—लाला गोपालकृष्ण का आदेश।

रमेश ने रोशन से एकान्त में सब बातें मालूम कर लीं। छाया के विषय में रोशन ने भी एक मन-गढ़न्त कहानी घड़ कर सुना दी उसने बताया, "छाया की माँ नहीं है। उसके पड़ोस में रहती थी उसके बचपन की साथिन है। अपनी सौतेली माँ के व्यवहार से बहु तंग थी बेचारी। मेरा यहाँ आने का कार्यक्रम उसे पता चला त चुपचाप उसी दिन घर से चली आई। जेहलुम स्टेशन पर मुझे ज्ञा हुआ कि वह उसी गाड़ी में लाहौर चल रही है। मुझको विव उसकी रक्षा के हेतु उसे साथ लाना पड़ा। अब मैं चाहता हूँ कि जह तुमने मुझ पर इतनी कृपा की है, वहाँ एक अनुग्रह और करो हमें कोई किराये पर मकान का प्रबन्ध कर दो। हम वहाँ च जायेंगे।"

"क्यों? यहाँ क्या कष्ट है?"

"हमें कष्ट कैसे हो सकता है रमेश। परन्तु हमारे कारण आ बस को कष्ट अवश्य होगा।"

रमेश मुस्कराया। "मैं तो तुम्हारा और छाया का आभारी हूँ कि तुम यहाँ आये हो। नौकरी तो तुम्हारी इच्छापूर्ति के लिये समय व्यतीत करने का एक साधन मात्र है। वास्तव में तुम मेरे मित्र होने से अकेले में मेरे साथी हो। अकेले मेरा भी मन नहीं लगता मैं तुम्हें न जाने दूँगा। अभी तुम्हारा जाना ठीक भी नहीं है। छाया क्या कहती है ?"

"वह भी यही कहती है।"

रमेश को प्रसन्नता हुई। उसने कुछ विचार कर कहा, "मकान तलाश करूँगा। तब तक यहाँ रहना ही पड़ेगा। रहा प्रश्न तुम्हारे और छाया के सम्बन्ध का वह मैं भली भाँति समझता हूँ। तुम दोनों को पृथक् कमरा दे दूँगा। मैं भला वहाँ कैसे रह सकता हूँ।"

"तुमने उसको मेरी बहिन जो बना दिया है।" रोशन ने अपनी कठिनाई बता दी।

"तो क्या हुआ ! कहने से कोई नहीं बनता। जब तक विवाह न हो, परिचित लड़की बहिन समान होती है। तुम चिन्ता न करो। इस पर भी एक बात का ध्यान रखना—पापा को किंचित मात्र भी सन्देह न होने पाये। वे तनिक पुराने विचारों के हैं।"

रोशन पूर्ण स्थिति को समझ मौन हो गया। इस पर भी एक बात सन्तोषजनक थी कि कमरा पृथक् मिल गया था। सुख और आराम कौन नहीं चाहता। रोशन स्वतन्त्र सुखी जीवन व्यतीत करने की आकांक्षा से लाहौर आया था—नौकरी की खोज में। छाया का भाग्य अच्छा था जो आते ही कोठी में सजा सजाया कमरा और पहनने को सुन्दर वस्त्र तथा खाने को पौष्टिक पदार्थ मिल गए थे। अतः रोशन मित्र के आश्रय अपनी जीवन-नैया छोड़ काम में जुट गया।

रमेश का रोशन को स्वयं कार्यालय पहुँचाने आना अन्य सदस्यों पर प्रभाव जमाने वाला सिद्ध हुआ। सब रोशन को आदर की दृष्टि से देखने लगे।

रोशन को काम मिल गया और रमेश को मित्र की संगत के अतिरिक्त एक सुन्दर अतिथि जिसके दर्शन मात्र से वह कृतकृत्य हो

ता। उसने छाया का विवरण अपने पिता को बताते हुए कहा, ापा। छाया का रोशन के अलावा कोई नहीं। दोनों भाई हन हैं। रोशन उसको अकेला कहां छोड़ कर आता। वह तो यहां ठी पर आना नहीं चाहता था, परन्तु मैंने आग्रह किया तो मान ा। अब मकान खोजेगा।"

"रमेश। इतनी बड़ी कोठी में तुम्हारे मित्र और उसकी बहिन के ाए स्थान नहीं है, ऐसा भाव मेरे मन में नहीं आया। मैं तो तुम्हारी ात सोच रहा था। यदि तुम्हारी शादी हो जाये तो फिर छाया को े साथ मिल जायेगा।"

"किन्तु उसका भी तो विवाह होगा।"

"तुम्हारे लिए वह बात विचारणीय नहीं। तुम्हारी पत्नी आयेगी ो कोठी की शोभा बढ़ेगी। फिर वह स्वयं देख लेगी किसको यहां खना है, किसको निकालना है ?"

"तब तक ये लोग स्वयं चले जायेंगे पापा।" रमेश ने उद्विग्न मन से उत्तर दिया। उसको ऐसे लगा कि पापा को सन्देह हो गया है। उसने विवाह के विषय में अधिक बात करनी उचित न समझी।

गोपालकृष्ण भी समझ गया कि रमेश को उसके मित्र के मामले ें बाप का हस्तक्षेप करना रुचिकर नहीं। उसने बेटे को मौन देख पूछ लिया, "कौन सा कमरा दिया है उनको ?"

"अभी तो मेरे कमरे में हैं। विचार है वे साथ वाले कमरे में रह जायें।"

"तुम मेरे कमरे के साथ वाले कमरे में आ जाओ। उन्हें वहीं रहने दो। "कुछ दिन के लिए क्यों इतनी रद्दोबदल की जाये ?"

"ठीक है पापा। आ जाऊंगा।" रमेश ने कहा और उठ कर चला गया।

"देखो। उसको कह देना कि दफ्तर में किसी से न कहे कि वह यहां रहता है। नहीं तो वे लोग कुछ और मतलब निकालेंगे।"

"वह इतना मूर्ख नहीं है पापा।" रमेश को यह भी पसन्द नहीं था। वह इतना अधिकार तो रोशन और विशेषकर छाया को देना हो चाहता था कि वे कह सकें कि वे रमेश के मित्र हैं। वह सोचता छाया अब रोशन की बहिन विख्यात हो जायेगी यद्यपि यह सरासर झूठ है। इस पर भी उसके लिए मधुर है। वह नहीं चाहता था कि छाया रोशन के साथ कहीं अन्यत्र चली जाये। किसी भी मूल्य पर उन्हें घर से निकालना रमेश को रुचिकर नहीं था।

पिता की इच्छा अनुसार घर पहुँच कर उसने नौकर को कमरा ठीक-ठाक करने को कह दिया और अपना कमरा रोशन और छाया के लिए छोड़ दिया।

रमेश रोशन को दफतर में छोड़ अकेला कोठी पर लौटा था। उसने द्वार खटखटाया। छाया अभी भी सो रही थी। कोमल बिस्तर पर उस कोमलांगी को आराम मिला और वह गहरी नींद सोई थी।

द्वार पर खटखट हुई तो छाया ने आंखें खोलीं। मेज पर पड़े टाइमपीस पर दृष्टि गई। पाँच बज रहे थे। उसने समझा रोशन लौट आया है। वह बिस्तर से उठी और द्वार खोल दिया।

सामने रमेश खड़ा था। वह छाया को देखता रह गया। उसके मुख पर छाये आलस्य ने उसको अधिक आकर्षक बना दिया था।

"आप।" छाया के मुख से निकल गया।

"तुम्हें मैंने जगा दिया। क्षमा चाहता हूँ।" रमेश विनीत स्वर में बोला।

"कोई बात नहीं। यह सोने का वक्त नहीं है। आपने ठीक ही किया।" छाया साड़ी बाँधने लगी। अब उसने सूती धोती निकाली और झटपट लपेट ली।

"मैं तुम्हें बधाई देने आया हूँ छाया।"

छाया उसका भावार्थ समझ मुस्करा कर बोली, "आपकी अनुकम्पा है।"

रमेश ने एक मार्मिक दृष्टि छाया के मुख पर डाली। छाया ने

पूछा, "क्या देख रहे हैं ?"

"तुम्हारा वास्तविक रूप।"

"क्या मतलब ?"

"नारी का वास्तविक रूप उसके हृदय के उद्‌गारों से पता चलता है। वही तुम्हारे मुख से पढ़ने का प्रयास कर रहा हूँ।"

छाया मौन रही।

"कुछ समझ में आया है ?" रमेश ने पूछा।

"हाँ। कुछ कुछ।"

इस पर दोनों हँस पड़े। रमेश ने पुनः उसकी आंखों में देखते हुए पूछा, "घूमने चलोगी छाया ?"

"रोशन आ जाये तो चलेंगे।

"वह देर से आयेगा। काम समझ रहा होगा। नया नया काम है।"

छाया तत्काल कुछ निर्णय न कर सकी। रमेश ने कहा, "तुम तैयार हो जाओ। मैं तब तक बैठक में तुम्हारी प्रतीक्षा करता हूँ।"

"ऐसे ही चलूंगी।"

"नहीं। दूसरी साड़ी पहन लो और तैयार होकर आ जाओ।"

कमरे के साथ बाथरूम था। छाया ने मुंह हाथ धोया। बाल सँवारने के लिए बाथरूम के साथ कमरे में एक ओर रखी ड्रेसिंग टेबुल के सामने आ बैठी। मेज पर क्रीम की शीशी रखी थी। छाया ने खोल कर देखी। मधुर सुगन्ध उसकी नासिका से दिमाग पर छा गई। उसने उँगली से क्रीम निकाल कर मुख पर लगा ली। अब दर्पण में मुख देखा तो अन्तर पता चला। उसका मुख अधिक चमकने लगा।

फिर पाऊडर मुख पर पोत लिया। पाऊडर बहुत लग गया था। छाया को स्वयं अच्छा नहीं लगा। उसने विचार किया क्या इसी अवस्था में उसको घूमने जाना चाहिए ? वह सोच ही रही थी कि रमेश द्वार

था और मेकअप से तो उसके मुख की कान्ति में वृद्धि हुई थी। आज प्रथम बार उसे भास हुआ कि वह भी एक आकर्षक युवती है। चाय का स्वाद लेती हुई वह रमेश से बातें कर रही थी। पेस्ट्री उसने पहली बार खाई थी।

चाय पीकर वे रैस्टोराण्ट से बाहर निकले तो रमेश ने कहा, "आओ माल रोड की सैर करें। यह लाहौर की सबसे विशाल और सुन्दर सड़क है। इसे ठण्डी सड़क भी कहते हैं।"

छाया दूकानों की शोभा देखती हुई चल रही थी। अभी वे कुछ पग गए होंगे कि बीडन रोड के चौराहे पर एक लड़की से उनका साक्षात्कार हुआ।

"हैलो मिस्टर रमेश!" उसने सम्बोधन किया। रमेश अपने विचारों में लीन छाया के साथ धीरे-धीरे चल रहा था। उसने कल्पना भी नहीं की थी कि यहाँ कोई परिचित भी उसे मिल सकता है।

"हैलो! किधर जा रही हो?" रमेश ने उत्तर में पूछा।

"तुम सुनाओ। लड़की ने छाया की ओर दृष्टिपात करते हुए कहा। रमेश ने छाया का परिचय करा दिया। "यह मेरे मित्र की बहिन छाया देवी हैं। अपने भाई के साथ लाहौर घूमने आई हैं।"

दोनों युवतियों ने एक दूसरे को नमस्ते की। यमुना ने कहा "रमेश! मेरा परिचय तो दिया नहीं। अच्छा मैं स्वयं ही करा देती हूँ। फिर वह छाया को सम्बोधन कर बोली, "मैं इनकी बहिन हूँ। भैया कहलवाने में इनकी शान में अन्तर आता है। इस कारण मिस्टर रमेश कहती हूँ। मेरा नाम यमुना है।" यमुना मुस्करा कर रमेश के मुख पर देखने लगी। रमेश ने उसके कथन पर कुछ भी टिप्पणी करना आवश्यक न समझा। बात बदल कर पूछा, "दुकान से आ रही हो?"

"नहीं। घर से।"

मौसी जनक आदि सब ठीक हैं न?"

"हाँ, जनक तुमको बहुत याद करता है। बहुत दिनों से उधर आये नहीं।"

"तुम लोगों की तो जूतियां घिस गयी हैं न ?"

"इसमें सन्देह ही क्या है। अच्छा आओ तुम्हें चाय पिलाऊं।"

"हम पी चुके हैं।"

"तो चलिए। लारेंस गार्डन तक घूम आवें।"

रमेश और छाया यमुना के साथ वापिस घूम पड़े।

मलिका विक्टोरिया के वुत्त के पास पहुँच रमेश ने समय देखा और यमुना को सम्बोधन कर कहा, "अब घर चलना चाहिए। रोशन प्रतीक्षा कर रहा होगा। लारेंस गार्डन कल जायेंगे। तुम आज हमारे घर रह जाना।"

यमुना को विशेष काम तो था नहीं। छाया सदृश्य सुन्दर युवती का साथ उसको रुचिकर लग रहा था। वह मान गई। तीनों टैक्सी में बैठ गए। वहाँ से कोठी बहुत दूर नहीं थी। रमेश एक रसिक रईस की भाँति कोई कसर छोड़ना नहीं चाहता था जिससे उसके व्यक्तित्व का प्रभाव छाया पर सरलता से पड़ सकता था।

सामने एक विशाल और सुन्दर इमारत की ओर संकेत कर छाया ने पूछा तो रमेश ने बताया, "यह पंजाब सरकार का असैम्बली हाल है। अभी हाल ही में यह नई इमारत बनी है।"

छाया और यमुना टैक्सी में भी बातें करती रहीं। यमुना को छाया एक भली लड़की लगी थी और वह मन में विचार कर रही थी कि वह अच्छी सखी बन सकेगी।

रोशन कोठी में उदास चित्त प्रतीक्षा कर रहा था। लाला गोपाल-कृष्ण नहीं आया था। उसने किसी उच्च अधिकारी को होटल में आमंत्रित किया हुआ था।

रोशन कोठी के लॉन में बैठा छाया के विषय में सोच रहा था। उसको नौकर ने बता दिया था, छोटे बाबू बहिन जी को घुमाने ले गए हैं।

कोठी के दोनों नौकर भी जान गए थे कि छाया रोशन की बहिन है। अतः नौकर ने आदर सहित उक्त शब्द कहे थे। परन्त रोशन के

मस्तिष्क में हलचल मच गई थी। वह विचार करता छाया यदि उसके लौटने तक रुक जाती तो कौनसा पहाड़ फट जाता। वह क्यों उसकी अनुपस्थिति में रमेश के साथ चली गई? वह छाया को डाँटने फटकारने के लिए क्रोध से भरा बैठा था। जब उसनें छाया के साथ एक अन्य सुन्दरी को देखा और रमेश ने अपनी मौसी की लड़की बता कर परिचय कराया तो उसका क्रोध ठण्डा हो गया। उसको ऐसा समझ आया कि छाया यमुना के आग्रह पर घूमने चली गई होगी वह आज ही लाहौर आई है। अवसर मिलने पर किसका मन सैर करने को नहीं करता?

परन्तु वह क्या जाने कि रमेश ने उसको आमंत्रित किया। उसे पाऊडर लगाने का ढंग बताया और टैक्सी में बिठा लाहौर के बढ़िया रैस्टोराण्ट में चाय पिलाने ले गया। वह तो छाया की तकदीर अच्छी थी जो यमुना मिल गई।

नौकर ने रोशन को यमुना की बात न बताई थी। यमुना के साथ छाया के जाने की कल्पना रोशन ने अपने को सांत्वना देने के लिए की। यमुना ने जहाँ छाया को रोशन के क्रोध का भाजन बनने से बचा दिया वहाँ रोशन को सन्देह की अग्नि में जलने से मुक्त कर दिया। यमुना कोठी के भीतर गई और थोड़ी देर बाद आकर बोली,

"रमेश। मौसाजी घर में नहीं हैं। उनके जल्दी आने की आशा भी नहीं। वह भीखू को खाने के लिऐ मना कर गए हैं। अब हम क्यों न लारेंस गार्डन चलें।"

संध्या हो चली है। सूर्य क्षितिज में सर्वथा डूबता हुआ दिखाई दे रहा है। इस पर भी गर्मी का प्रकोप वैसा ही है। रमेश की कोठी के लॉन में दोनों किनारे लगे दो वृक्षों पर एक पत्ता भी नहीं हिल रहा है। सब ऊमस के कारण पसीना-पसीना हो रहे हैं। रमेश ने यमुना का सुझाव सुन रोशन से पूछा, "तुमने चाय पी ली है?

रोशन मौन रहा। वह यह कह देने के लिए स्वयं को तैयार

न कर सका कि वह उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। जब रमेश ने उसकी प्रतीक्षा नहीं की और उसकी मनोनीत पत्नी के साथ चला गया। उसे मौन देख यमुना बोल उठी, "इन्हें चाय वहीं पिला देंगे। यहाँ बैठे-बैठे तो गर्मी के कारण बोर हो जायेंगे। तोबा, कितना बुरा हाल है। बिलकुल हवा बन्द है। उसने रुमाल से पसीना पोंछते हुए कहा।

"बहुत देर हो जायेगी। जानती तो हो पापा को मेरा भोजन के समय अनुपस्थित रहना बिलकुल पसन्द नहीं, अगर बैडमिण्टन खेलें तो कैसा रहे!"

यमुना फड़क उठी। रमेश ने नौकर को बुला प्राँगण में बैडमिण्टन का नैट लगाने को कह दिया और यमुना से बोला, "लैमीनेड मंगवा लेते हैं। मैच के बाद ठण्डी लमीनेड उड़ेगी।"

"मैच कैसा?"

"तुम दोनों लड़कियाँ एक तरफ और हम दूसरी ओर।"

"मुझे खेलना नहीं आता।" छाया ने कहा।

"मैं भी नहीं जानता।" रोशन बोला।

"तो ठीक है। एक तरफ छाया रहेगी और एक तरफ तुम।"

यमुना ने छाया की बाँह पकड़ी और एक ओर ले गई। नैट लग चुका था। रमेश ने रैकिट और शटल-कॉक मँगवाई। खेल आरम्भ हो गया।

छाया को लगा यमुना रमेश से भी अच्छा खेल रही है। वह उसके स्थान पर भी कूद कर शटल-कॉक सम्हाल लेती है दूसरी ओर रोशन भी उसकी तरह रैकिट उछाल कर रह जाता है। हर बार मिस करता है और उनकी जीत हो जाती है। यमुना के पूर्ण शरीर से पसीना चू रहा है। छाया भी अपनी ओर से पूर्ण सहयोग देने का प्रयास करती है। यमुना का खेल प्रशंसनीय है।

आध घण्टा के खेल के बाद रमेश और रोशन हार कर बैठ गए यमुना ने ताली बजाते हुए कहा, "बस! बड़े तीसमारखाँ बने फिरते थे

सब खिलखिलाकर हंस पड़े। चारों थक कर पसीना पोंछ रहे थे। जब सामान्य अवस्था में हुए तो नौकर ने उन्हें लैमीनेड खोल-खोल कर पिलाना आरम्भ किया। खेल के बाद इस शीतल पेय का छाया को बहुत आनन्द आया। वह बहुत प्रसन्न दिखाई दे रही है। पहले ही दिन उसकी तकदीर खुल गई है। सब उसका मान और आदर करने वाले हैं। रोशन नौकरी पा गया है। यमुना बहुत हंसमुख लड़की होने से छाया को ऐसे लग रही है मानो वर्षों से उसकी सखी हो। वह इन सब की संगत में आत्म-विभोर हो रही है।

भोजन का समय हुआ। भोजन समाप्त कर सब ड्राइंग रूम में बैठ रेडियो सुनते रहे। छाया और रमेश के लिए यह अद्भुत मनोरंजन है। सोने का समय हुआ तो छाया ने यमुना को अपने कमरे में सोने का निमन्त्रण दे दिया यमुना ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। इस बात का विरोध भला क्यों कोई करता। विवश रमेश और रोशन को एक कमरे में सोना पड़ा।

रोशन को पहले तो नींद नहीं आई। वह पृथक कमरा मिलने पर भी छाया से दूर रहा। सोचता, क्या छाया ने जानबूझ कर ऐसा किया? उसको अभी अधिकार भी नहीं है उसके साथ एकान्तवास करने का। जब तक वह इस कोठी में है सब की दृष्टि में उसका भाई है। उसे आचरण से भी वैसा रहना चाहिए। इस पर भी उसका चित्त प्रसन्न नहीं है। जिस उद्देश्य से वह इतनी दूर आया है, पूर्ण हो जाने पर भी उदास और निराश लेटा है। यदि छाया साथ न आती तो क्या करता। उस अवस्था और वर्तमान में अन्तर क्या हो गया है? फिर वह क्यों छाया का खयाल कर खिन्न हृदय है? रोशन स्वयं अपने अन्तर में इन प्रश्नों का उत्तर टटोलना चाहता है।

सोचते-सोचते उसे नींद आ गई। प्रातः वह बहुत देर से उठा। छाया तब तक शौच आदि से निवृत्त हो स्नान कर चुकी थी। वह रोशन के मुख पर देखती हुई मुस्करा रही थी। समझती थी कि रोशन के मस्तिष्क में क्या घूम रहा है।

रोशन तैयार हो, नाशता ले, दफ्तर चला गया। मन की उसी अवस्था में मनन करता हुआ कि पीछे, रमेश और यमुना छाया के पास हैं। यमुना अपने घर लौट जायेगी। छाया और रमेश इतनी बड़ी कोठी में अकेले रह जायेंगे। वह बेकार की बातें सोचता हुआ कार्यालय पहुँचा।

उसके विस्मय का ठिकाना न रहा। जब आधे घण्टे के बाद उसने रमेश को वहाँ देखा। रमेश ने उसके समीप खड़े होकर पूछा, "कैसा लगा है दफ्तर का काम ?"

"रुचि अनुकूल है।"

"अच्छा। मैं पापा के साथ साइट पर जा रहा हूँ। शाम को मैं तुम्हें मोटर में ले जाऊँगा। मेरी प्रतीक्षा करना।"

दोपहर का भोजन रोशन ने धाबे पर किया। पांच बजे वह रमेश के साथ घर गया।

छाया के वस्त्र सिल कर दर्जी अपने वचनानुसार दे गया था। रोशन ने छाया को सूट पहने देखा तो विचार करने लगा इस अल्हड़ युवती को देख कर कौन विश्वास करेगा कि वह उसकी भावी पत्नी है। वह चुपचाप चाय पीने लगा। अब उसको छाया के साथ बैठने में भी हीन भावना का आभास हो रहा था। कितना अन्तर लगता था उसे अपने, छाया और रमेश के पहरावे में। वह सोचता छाया और उसमें कुछ समानता होने की अपेक्षा छाया की पोशाक की रमेश से समानता अवश्य है। न कोई उसे उसकी बहिन कह सकता है, न प्रेमिका।

अब रोशन का नियम हो गया था कि वह दोपहर का भोजन कार्यालय के समीप धावे पर खाता। उसको स्वाद न आता था। प्रातः अल्पाहार और रात्रि का भोजन रमेश, छाया और गोपालकृष्ण के साथ होता था। रोशन, रमेश और उसके पिता की अनुकम्पा के नीचे स्वयं को दबा अनुभव करता था।

छाया को एक बजे रमेश तथा उसके पिता की अब प्रतीक्षा करनी

होती है—भोजन के समय । कभी रमेश पहले आता, कभी लाला गोपालकृष्ण। कभी दोनों कार में इकट्ठे कोठी पर लौटते । छाया ऐसी दिनचर्या की अभ्यस्त हो गई है, किन्तु रोशन स्वयं को तिरस्कृत समझने लगा है। वह दोपहर को कोठी आने के लिए अपने हैडक्लर्क से भोजन के निमित्त लम्बी छुट्टी नहीं ले सकता । कोठी तक आने जाने में बहुत समय लग सकता है । रमेश अथवा उसके पिता उसे कहते भी नहीं कि वह लंच में घर आ जाया करे। आश्चर्यजनक बात उसके लिए यह हो गई है कि छाया ने भी उससे कभी नहीं कहा कि वह दोपहर को उसकी अनुपस्थिति अनुभव करती है ।

छाया अब गोपालकृष्ण की दृष्टि में बेटी की भाँति मान पाती है। वह भी उनके आराम का खयाल रखती है । भोजन आदि नौकरों से तैयार करवाना, धोबी से वस्त्र सम्हाल कर ठीक स्थान पर रखना, कोठी की सजावट आदि का ध्यान रखना, फटे हुए वस्त्र मरम्मत कर देना, बटन टाँक देना—ये सब छोटे-छोटे आवश्यक कार्य छाया ने सम्हाल लिए हैं। परिणामस्वरूप गोपालकृष्ण उसे अपनी बेटी की भाँति स्नेह करने लगे हैं ।

रोशन को यह सब दिखाई न देता हो, ऐसी बात नहीं । ज्यूं-ज्यूं दिन बीत रहे हैं, वह अधिक उदास और चिन्तित हो रहा है । उसने दफ्तर के समीप मकान लेने की बात पुनः रमेश को याद कराई है । एक दिन रमेश ने उसको कहा, "रोशन ! मैंने बहुत यत्न किया है। कोई सस्ता मकान मिलता नहीं। भाड़ा कम से कम तीस रुपये है ।"

रोशन मौन हो गया । समय बीतता गया । रोशन को वहाँ आये तीन मास बीत चुके हैं । उसने नये वस्त्र सिलवा लिए हैं । छाया के लिए एक साड़ी ले आया है । छाया ने एक दृष्टि में साड़ी देखी और पूछा, "कितने की आई है ।"

रोशन उसकी मुद्रा देख तिलमिला उठा । उसने छाया के इस प्रश्न के पीछे छिपा भाव भांप लिया । उसने कहा, "मैं वैसे कपड़े तो तुम्हें

लाकर दे नहीं सकता, छाया जैसे तुम्हारे पास पहले हैं। इस पर भी मेरा मन किया, ले आया। रात को पहनने के काम तो आ ही जायेगी।"

"मेरा अभिप्राय यह नहीं कि यह घटिया साड़ी है। रात को पहनने के लिए भी मेरे पास वहुत हैं। तुम ये पैसे जमा कर सकते थे।"

"तीन मास हो गए मुझे नौकरी करते। तुम्हें कुछ लेकर नहीं दिया था। बचत तो कुछ न कुछ होती ही है। रात का भोजन और नाशते पर व्यय नहीं होता।" तिरस्कृत सा रोशन बोला। वह छाया के मुख पर छाई गम्भीरता देख विक्षुब्ध सा खड़ा था। उसकी कई मास पूर्व की कल्पना स्वप्न सिद्ध हुई थी। प्रेमिका प्रेमी से प्रथम भेंट पा कर फूले नहीं समाती, ऐसी धारणा वह बनाये हुए था। उसे दुख हुआ था छाया के इस शुष्क व्यवहार से।

एकाएक उसकी दृष्टि छाया के पलंग पर रखे एक डिब्बे पर पड़ी। उसने पूछ लिया, "यह क्या है छाया ?"

"साड़ी है। तुम्हारा मित्र रमेश लाया है।" छाया ने डिब्बा खोल साड़ी दिखा दी।

रोशन ने एक दीर्घ निःश्वास छोड़ा। छाया ने कहा, "मैंने इन्कार किया तो वह कहने लगा, "दो साड़ियों से क्या होता है। कम से कम छः तो होनी चाहिएँ और यहाँ रख कर चला गया।"

रोशन को समझ आ गई। उसकी दी हुई धोती का क्यों दाम पूछा जा रहा था। वह दुखी होकर बोला, "तो ऐसी तीन सुन्दर साड़ियां वह तुम्हारे लिए और लायेगा। एक मास में एक।"

"मैं नहीं लूंगी। मुझे आवश्यकता भी नहीं है।"

रोशन हंस पडा। मन तो दुखी था ही। व्यंग्य भरी हंसी में उसने कहा, "उसे तो है। कैसे इन्कार करोगी, छाया।" इतना कह कर वह भी साड़ी वहीं छोड़ चला गया।

वह सोच रहा था सूती धोती छाया पहन भी नहीं सकती। इन तीन मास में वह अनुभव कर चुका था कि छाया में बहुत परिवर्तन हो गया था

दोनों का कमरा पृथक है। एकान्तवास करते समय छाया उसको पहले ही कह देती, जब तक विवाह नहीं होता, वह कोई ऐसा काम न करे जिसके कारण उन्हें कोठी से बदनाम होकर निकलना पड़े।

अतएव रोशन के मस्तिष्क में गर्मी रहने लगी है। उसको शान्ति नहीं। वह यह भी देखता कि जब उनके कमरे में रमेश आ जाता है, छाया प्रसन्नवदन उसका स्वागत करती है। उसको अपनी मनोनीत पत्नी का यह व्यवहार एक आँख नहीं भाता। रमेश, छाया और रोशन से पहले की भांति स्नेह करता है। उन्हें अपनी कार में घुमाता है। परन्तु रोशन उदास और खिन्न इसलिए है कि वह छाया पर एकाधिकार चाहता है।

दो मास और बीत गए। विशेष कार्यवश रोशन को आगरा जाना पड़ गया। एक बन्द टैण्डर लेकर केन्द्रीय कमान के मुख्य कार्यालय आगरा, में रोशन की सिफारिश पर रोशन को इस कार्य के लिए उपयुक्त माना गया। रमेश का ख्याल था रोशन को जहाँ कुछ यात्रा व्यय बच जायेगा, वहाँ फोकट में आगरा की सैर कर लेगा। इस प्रकार का प्रलोभन दे रोशन को आगरा भेज दिया गया। वहाँ पहुँच कर बन्द टेण्डर तथा एक गुप्त पत्र लाला गोपालकृष्ण की ओर से डिप्टी चीफ इंजीनियर को देना था। बस इतना ही कार्य था। इस पर भी सोलह सत्रह घण्टे का मार्ग था। एक दिन वहाँ घूमने के लिए भी उसे मिल गया।

रोशन ने एक योजना बनाई थी। अब तक वेतन से उसके पास एक सौ चालीस रुपया जमा हो गए थे। पचास रुपया पेशगी यात्रा व्यय उसको कार्यालय से मिला था। वह इस सब धनराशि का उचित प्रयोग करने की योजना बना छाया के पास पहुँच कर बोला, "मेरी इच्छा है इकट्ठे चलें जैसे रावलपिण्डी से आये हैं। दिल्ली और आगरा देखेंगे।"

"एक दिन में क्या देख पाएँगे। अधिक दिन रह नहीं सकते। फिर बहुत से रुपये चाहिएँ।"

"रुपया मेरे पास है।" रोशन का उत्तर था।

"कितने जमा कर लिये हैं ?"

"कुल मिलाकर एक सौ नब्बे हैं।"

"तुम इनमें वृद्धि करने के निमित्त जा रहे हो न ?"

रोशन छाया का मुख देखता रह गया। छाया बात का सूत्र पकड़ बोली, "इतने रुपयों में भी मजा नहीं आयेगा। फिर तुम पृथक मकान कैसे लोगे ?"

रोशन को निराशा हुई। वह छाया की बात समझने लगा। उसने छाया में परिवर्तन अनुभव किया। उसे खर्चीले जीवन का स्वभाव पड़ गया है। इसलिए लगभग दो सौ रुपयों को आगरा की सैर के लिए यथेष्ट नहीं मानती। अब पृथक घर की बात कर दी है। अतः रोशन ने भी विषय बदल दिया। उसने पूछा, "तो तुम मेरे साथ पृथक घर में रहना चाहती हो ?"

"पृथक रहने में मैंने कभी अरुचि नहीं दिखाई रोशन। मैं चाहती हूँ तुम हर प्रकार से संयम रख अपनी दशा अल्प समय में सुधार लो। हर समय कोई मित्र सहायता नहीं करता।"

रोशन निरुत्तर हो मौन हो गया। उसका मन आगरा जाने को नहीं करता था। किन्तु अब इन्कार करना धृष्टता थी। उसमें अपना कार्यक्रम बदलने का साहस न होता था। छाया को अकेला छोड़ना भी उसे पसन्द नहीं था। सबसे बड़ी बात उसे व्यग्र बना देने वाली थी छाया पर उसकी यात्रा की कुछ भी प्रतिक्रिया न होना। उसने एक बार भी तो नहीं कहा कि वह अकेली हो जायेगी। उपदेश ही देने शुरु कर दिये।

उसको प्रातः बम्बई एक्सप्रैस से आगरा के लिये प्रस्थान करना है। लाहौर से विदा होने की आखिरी रात वह बहुत खिन्न और व्याकुल है। वह विचार कर रहा है छाया अकेली कैसे रह सकेगी ? वह छाया के गम्भीर मुख पर देखता हुआ अपने अरमानों को अन्तर में दबाए बैठा है। छाया बिस्तर पर लेटी छत पर दृष्टि जमाये है। कमरे में पूर्णरूपेण नीरवता है। केवल घड़ी की टिक-टिक सुनाई देती है। छाया के हृदय

की धड़कन घड़ी से भी तीव्र गति से हो रही प्रतीत होती है।

"तुम्हारा मन लग जायेगा छाया ?" रोशन के स्वर में सहानुभूति और प्रेम छलक रहा था।

छाया मौन रही। दृष्टि छत से हटा रोशन की ओर अवश्य घुमा दी। रोशन उठ कर छाया के पलंग पर आ गया। वह पूर्ववत लेटी रही। रोशन ने अपना मुख छाया पर अवनत कर पूछा, "क्या सोच रही हो प्रिये ?"

"कुछ नहीं।"

"मैं सब समझता हूँ। क्या हम इस प्रकार तड़पते रहेंगे। मैं नौकरी पाकर भी तुम्हें सुख-सुविधा नहीं दे सकता। कहाँ नकली पिस्तौल के धमाके पर तुम मेरे पास प्रसन्नवदन आ जाया करती थी और अब · · ·" रोशन ने आगे कुछ नहीं कहा। अपने होंठ छाया के मौन अधरों पर रख दिये।

छाया ने नेत्र मूंद लिये। पिस्तौल की बात ने उसे अतीत की स्मृति करा दी। उसके हृदय की धड़कन अधिक तेज हो गई। रोशन ने अपना सिर छाया के वक्ष:स्थल पर रख दिया। दोनों बहुत देर तक मौन रहे। आज छाया में उपेक्षा का साहस नहीं था और न ही लज्जा की वह झलक थी। वह तो अनुरागयुक्त नेत्रों से उसे निहार रही थी। उस निहारने में था निमन्त्रण। रोशन ने उसका आलिंगन कर कहा, "छाया।"

"हूँ।"

"नींद नहीं आ रही ?"

छाया ने नकारात्मक सिर हिला दिया।

"तुमने मेरी बात का उत्तर नहीं दिया, अकेली कैसे रहोगी ?"

छाया ने उत्तर देने की अपेक्षा अपना मुख रोशन की छाती पर रख छुपा लिया।

शीतल हवा का झोंका आया। छाया का ध्यान द्वार की ओर गया। उसने संकेत कर कहा, "द्वार तो बन्द कर दो।"

रोशन ने उठ कर भीतर से चिटखनी लगा दी और पुनः छाया के पलंग पर आ गया। छाया का माँसल शरीर रोशन की बाँहों में था। वह उसके गुलाबी अधरों की सुधा पान कर रहा था।

अगले दिन प्रातः छाया बहुत प्रसन्न दिखाई देती थी। वह स्टेशन पर रमेश के साथ रोशन को विदा करने गई। वहाँ एकाएक उसका मुख उदास हो गया। कुछ देर पहले तो वह गुलाब की पंखुड़ी की भाँति खिली हुई थी। ठीक वैसे ही जैसे कोई अप्रियतम सुन्दरी प्रथम सुहाग रात्रि के अनन्तर होती है।

अब उसको रोशन से बिछुड़ने का ख्याल आ गया था। रोशन गाड़ी में खिड़की के पास बैठा था और छाया रमेश के साथ प्लेटफार्म पर खड़ी उसको निहार रही थी।

गाड़ी चली तो दोनों ने नमस्ते की। रोशन को यह अस्थायी वियोग बहुत दुःखद प्रतीत हुआ। उसके वश की बात होती तो वह अब भी गाड़ी से उतर पड़ता। जिस लड़की ने नौकरी खोजने के लिए भी उसका वियोग सहन नहीं किया, घर छोड़ कर उसके साथ चली आई, वह उसको अपने स्वामी के संरक्षण में छोड़ ड्यूटी पर बहुत दूर जा रहा था। केवल चन्द टकों के लाभ के निमित्त। अब क्या हो सकता था।

गाड़ी चल दी। रमेश ने छाया की बाँह का स्पर्श करते हुए कहा, "चलिए।"

दोनों बाहर आकर कार में जा बैठे। अब छाया रोशन के साथ अगली सीट पर बैठी थी। रमेश घर जाने की अपेक्षा लारेंस गार्डन चला आया।

'रोज़ पार्क' में एक बैंच पर बैठे गुलाब के फूलों की शोभा देख रहे हैं। सूर्य उग कर तनिक ऊँचा हो गया है तो भी पार्क में उन दोनों को गर्मी नहीं लग रही प्रत्युत आनन्द अनुभव होता है। छाया ने बात आरम्भ की।

"कितने सुन्दर फूल ।"

"हाँ। परन्तु तुम इनसे भी सुन्दर हो। रमेश छाया की बड़ी-बड़ी आँखों में झाँकते हुए बोला।

छाया ने नारी-सुलभ लज्जा के कारण नेत्र अवनत कर लिए। रमेश ने देखा उसके कपोल फूल की भाँति गुलाबी हो गए हैं। उसका हाथ अपने हाथों में दबाकर कहा, "आओ। अब उधर चलेंगे।"

छाया उठ खड़ी हुई। लारेंस की शोभा देखते वे मस्ती में चल रहे थे। छाया एक स्थान पर लीचियों से लदे छोटे-छोटे वृक्ष देख रुक गई।

"कितने सुन्दर फल लगे हैं। जी चाहता है, तोड़ लूँ।"

ये देखने के लिए हैं, तोड़ने के लिए नहीं।"

"वहाँ सामने ऊपर क्या है ?"

"शिमला पहाड़ी है। वहाँ से समस्त उद्यान का समस्त दृश्य दिखाई देता है।"

शिमला पहाड़ी की सैर करने के पश्चात् रमेश छाया को चिड़िया-घर दिखाने ले गया। जब वे घर लौटे, गोपालकृष्ण काम पर जा चुका था। उस समय दस बजने वाले थे। रमेश को अपनी भूल का आभास हुआ। ड्राईवर मानक ने उसको बताया, "सेठजी आपकी प्रतीक्षा करते रहे। जब आप आठ बजे के बाद भी नहीं आये तो वे टैक्सी मंगवा चल दिए। मुझको गाड़ी वहाँ लाने को कह गए हैं।"

"नाराज़ तो नहीं थे ?" रमेश ने पूछा।

"नहीं। उन्होंने कुछ कहा नहीं। बस जल्दी गाड़ी लाने को कह गए हैं।"

"तो ले जाओ। रेलगाड़ी लेट आई। इसलिए देर हो गई है। पूछें तो पापा को बता देना।"

मानक कार पर पड़ी धूल को कपड़े से साफ कर उसमें बैठ चला गया। छाया ने कहा, "आपके पापा बहुत अच्छे हैं। फिर भी आपने

झूठ बोला।"

"कुछ कारण तो उनको बताना ही पड़ेगा।"

"कह देना मुझे लारेंस बाग की सैर कराने ले गये थे।"

रमेश मुस्करा कर छाया को देखने लगा। इतना साहस उसमें कहाँ से आता? छाया उसकी भार्या अथवा मंगेतर तो है नहीं जो सत्य बात कह दे। उसको स्मरण हो आया कि मिस लोमा के साथ सैर करने पर उसे कितनी बार अनवर भाषण करना पड़ता था। वह छाया के पीछे उसके कमरे में ही चला आया। उसने कहा, "काश, मैं ऐसा कह सकता। छाया।"

"क्यों? क्या कठिनाई है?" छाया को शरारत सूझी।

"तुम्हें कैसे समझाऊँ। मैं क्या सोचता हूँ।"

"क्या?" छाया ने उदास होकर प्रश्न किया।

"बस यही ··· तुम्हें देखता रहूँ। तुम्हारे साथ घूमूं, बातें करूँ। क्या यह अधिकार पापा मुझको देंगे? तब मैं झूठ नहीं बोलना चाहूँगा।"

"पापा मुझको अपनी लड़की ही समझते हैं।"

"उनकी अपनी लड़की नहीं है इसलिए।"

छाया द्रवित हो गयी। आंखें सजल हो गई उसको अपने पिता की याद आ गई। कितना प्यार करते थे उसे। उनकी वह इकलौती बेटी है। उसने कुछ रुक कर कहा, "आपको पापा से झूठ नहीं बोलना चाहिए।"

रमेश ने उसका हाथ अपने दोनों हाथों में दबाते हुए कहा, "तुम चाहती हो तो ऐसा ही करूँगा। तुम्हारी आंखों में आँसू!"

छाया मौन रही। रमेश विचार करता है कितनी सरल चित्त है! उसे पापा के उद्गारों का अभी से ख्याल है। कितना अपनापन है। काश! वह उसके हृदय की धड़कन को समझ लेती। वह रोशन की प्रेयसी के रूप में यहाँ आई है। क्या रोशन इस रूप की राशि सुन्दर लड़की को सुखी रख सकेगा? क्या इनका प्रेम लैला-मजनूँ का प्रेम

है ? तो उसने उससे सुन्दर साड़ियाँ और वस्त्र क्यों ले लिए ? ये सब प्रश्न रमेश के मस्तिष्क में घूमने लगे। वह छाया के हृदय को टटोलना चाहता था। उसने पूछा, "छाया ! तुमसे डैडी कितना स्नेह करते हैं ? जानती हो क्यों ?"

"आपने कारण स्वयं बता दिया है। मैं भी अपने मन में ऐसा समझने लगी हूँ। एक पिता छूट गया तो भगवान ने दूसरे के संरक्षण में भेज दिया।"

"लेकिन पुत्री पिता से अपना जीवन छिपाये, यह उचित है क्या ?"

छाया सहम गई। आँखें उठा रमेश के मुख पर देखा। रमेश ने प्रश्न किया, "तुम सचमुच रोशन से प्रेम करती हो ?"

छाया ने सिर झुका लिया।

"पापा की दृष्टि में तुम बहिन-भाई हो।"

छाया मौन के कूप में उतर चली। क्या उत्तर देती। रमेश तो आज कुछ निर्णय करने पर तुला हुआ था। उसने कहा, "बोलो न छाया। वे क्या सोचेंगे तुम्हारे बारे में। तुमने मुझसे झूठ न कहने का वचन लिया है।"

कुछ उत्तर नहीं मिला। उसका मुख निष्प्रभ हो गया। आंखों के आगे अंधेरा छाने लगा। रमेश फिर बोल उठा, काश ! तुम इस समस्या को मेरे साथ मिल कर हल करने का यत्न कर सकतीं। पापा तुम्हें स्नेह करते हैं। मुझे भी। रोशन की अवस्था तुम जानती ही हो।"

छाया तड़प उठी। उसके कानों में रमेश के पहले शब्द गूंजने लगे, "बस तुम्हें देखता रहूँ। घूमूं, बातें करूँ। क्या यह अधिकार पापा मुझको देंगे ? तब मैं झूठ नहीं बोलना चाहूँगा।"

छाया लज्जा से पृथ्वी में गड़ी जा रही थी। उसे रोशन की स्मृति हो आई। फिर विगत रात्रि की उसकी संगति में प्राप्त आनन्द की अनुभूति। उसने काँपते हुए होठों से कहा, "मुझको क्षमा कर दो। मैं आपको सलाह देने वाली कौन हूँ।" इतना कह कर उसने मुख मोड़ लिया और बिस्तर पर जा लेटी।

रमेश को छाया के सिसकने का शब्द सुनाई दिया। वह उसके समीप आ उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए बोला, "छाया ! क्या तुम इसी प्रकार अभिनय करती रहोगी अथवा···"

"आप इस समय चले जाइए। मैंने पापा से विश्वासघात किया है। मुझे सोचने दीजिए।" उसने रोते हुए कहा।

रमेश विवश अपने कमरे में चला गया। उसके अन्तर में ज्वाला भड़क रही थी। वह छाया के सौन्दर्य पर मुग्ध था और उसकी संगति की इच्छा करने लगा था। वह छाया को अपने अनुकूल बनाने की समस्या पर विचार करता हुआ कार्यालय जा पहुँचा। उसका ख्याल था कि इस समय छाया को छेड़ना उचित नहीं। साथ ही वह पापा को भी रुष्ट नहीं करना चाहता था।

दूसरा परिच्छेद

: १ :

छाया रमेश के व्यवहार पर विस्मित थी। जब से वह यहाँ आई थी अपने विवाह के विषय में विचार कर रही थी। विवाह से पूर्व वह सहवास से बचना चाहती थी, किन्तु रोशन ने उसको तैयार कर लिया था और वह विगत रात्रि उसकी संगति में रही थी। अब रमेश के उद्गारों से भाँप गई थी कि वह भी क्या चाहता है।

वह रमेश को भला आदमी समझती है। अब तो गोपालकृष्ण के स्नेह तथा सद्व्यवहार से वह स्वयं को इस परिवार का अंग मानने लगी है। वह यह अनुभव करती है कि उसका अब इस कोठी से जाना असम्भव है। वह कल्पना करती है रोशन को उसके भाई के नाते गोपालकृष्ण अपने कार्यालय में ही उन्नति करने का अवसर देंगे और उसे अपनी बेटी समझ कर किसी भले युवक से विवाह कर देंगे।

उसको भी कोठी में रहने की आदत पड़ गयी है। किसी गन्दी गली में साधारण मकान में रह नहीं सकती। मक्खन-टोस्ट खाते-खाते अब दाल-रोटी अथवा आलू-साग पर जीना उसे दुष्कर प्रतीत होता है। वह पहले से अधिक सुन्दर और शरीर में पुष्ट हो गई है। यही कारण है कि वह सदा रोशन की अवहेलना करती रही है।

आज रमेश उससे अधिकार की माँग कर गया है। वह विचार करती है क्या पापा ने इस लिए अपनी बेटी बनाया है कि वह एक दिन उनकी पुत्र-वधु बने ? वह दुविधा में फँसी है। सोचती है यदि ऐसा प्रश्न उपस्थित कर उससे पूछा गया तो वह कैसे कह सकेगी कि वह रोशन से प्रेम करती है। सारा रहस्य खुल जायेगा। उसे चरित्रहीन समझ कर कोठी से निकाल दिया जायेगा। तो क्या वह

छाया मौन रही। रमेश ने उसके कोमल हाथ का स्पर्श करते हुए पूछा, "तुमने विचार कर लिया है?"

छाया के मन में आया कि वह बता दे, वह रोशन को वचन दे चुकी है। उसकी सहवासिन भी बन चुकी है। किन्तु उसके मस्तिष्क ने काम किया। सोचा, इस रहस्योद्घाटन से रमेश केवल उसका भोग एक वेश्या की तरह करेगा। मन में सहानुभूति नहीं रख सकता। जिन परिस्थितियों में वह फँसी है, रोशन से प्रेम निभाना असम्भव हो गया है।

रोशन की संगति में शारीरिक आनन्द की अनुभूति उसे मौन रहने पर विवश कर रही थी। मन को स्वस्थ और प्रबल बनाये रखना कठिन हो गया। वह रोशन और रमेश में तुलना करती। उसके भीतर द्वन्द्व चल रहा था। रमेश भली-भाँति उसके उद्गार उसके मुख पर पढ़ रहा था। उसको लगा कि छाया सामाजिक मर्यादा तथ प्रेम के मध्य संघर्ष में पिस रही है। वह कोई भी ऐसा अवसर खोना नहीं चाहता था। उसके समीप सट कर बैठ गया और पूछा, "क्या बात है छाया? तुम रुष्ट हो क्या?"

छाया ने उत्तर नहीं दिया। रमेश ने पुनः उसको अपने बाहुपाश में जकड़ लिया। रमेश ने देखा छाया की आँखों में आँसू थे। परन्तु उस पर तो पशुपन छाया था। वह उसके इन्कार को अपना अपमान समझ चुका था। उसने वासना से उत्तेजित नेत्रों से छाया के निष्प्रभ मुख पर देखते हुए कहा, "छाया! तुम सब की दृष्टि में रोशन की बहिन हो, पापा तुम्हें अपनी पुत्री समझते हैं। झूठ को सत्य बनाने का यही ढंग है। मैं रोशन को समझा दूँगा। प्रेयसी तुम मेरी ही बन सकती हो।"

"मैं आपको कैसे समझाऊँ? छाया के आँसू टप-टप गिरने लगे। रमेश ने उसका सिर अपनी गोद में रख लिया। वह छाया के अन्तर में उठे बवण्डर को न समझ पाया। छाया उसकी दया पर थी। शोर मचाने पर भी उसे अपना भविष्य अंधकारमय प्रतीत होता था। रमेश

ने अपने होंठ उसके काँपते हुए अधरों पर रख दिये।

कुछ देर बाद छाया की सिसकियाँ सुनाई देने लगी थीं और रमेश उसके आगे गिड़गिड़ाता हुआ सांत्वना दे रहा था।

: २ :

लाला गोपालकृष्ण को आशा थी कि रमेश स्वयं कार लेकर उसके पीछे कार्यालय पहुँचेगा। उसको विस्मय हुआ जब मानक खाली गाड़ी लेकर आया। उसने पूछ लिया, "रमेश नहीं आया, मानक ?"

"नहीं सरकार। वे कहते थे रेलगाड़ी लेट आई थी। इसलिए उन्हें आने में देर हो गई।"

"अच्छा। तुम ठहरो। थोड़ी देर में चलेंगे।"

मानक ने मोटर एक किनारे खड़ी कर दी और सिगरेट निकाल सुलगा ली।

गोपालकृष्ण बहुत चिन्तित दिखाई देते थे। मुनीम हँसराज उनके पास ही खड़ा था, उसने स्वामी की चिन्ता का कारण समझ कर कहा, "हजूर ! गुस्ताखी माफ हो तो अर्ज करूँ ?"

"बोलो, क्या कहना चाहते हो ?"

"छोटे सरकार को कुछ दिन के लिए बाहर भेज दीजिए।"

"क्यों ?"

"उनको स्वतन्त्र रूप में काम सम्हालना चाहिए।"

गोपालकृष्ण हँसराज का आशय समझ रहा था वह उसका सबसे पुराना वफादार कर्मचारी था। मालिक को विक्षुब्ध अवस्था में देख उसने आगे कहा, "मैं रावलपिण्डी से छाया और रोशन के साथ एक ही डिब्बे में बैठकर आया हूँ। जिस समय वह जेहलुम स्टेशन पर रोशन के डिब्बे में घुसी थी, तब से मैं छाया को सन्देह की दृष्टि से देखता रहा हूँ। न जाने उस समय भी उसकी सूरत और हाव-भाव देख क्यों सन्देह हुआ। लाहौर स्टेशन पर रमेश बाबू को उनके स्वागत के लिए देखा तो चकित रह गया।"

"तुम उनको पहले से जानते हो ?" गोपालकृष्ण ने [illegible]

दृष्टि से हँसराज की आँखों में देखकर पूछा ।

"नहीं सरकार । मुझे रेलगाड़ी में ही सन्देह हुआ था कि वे घर से भाग आये हैं । लड़की का रावलपिण्डी स्टेशन से रोशन के साथ बैठने की बजाए जेहलुम स्टेशन पर वहाँ आना किसी भी समझदार व्यक्ति के दिमाग में हल-चल मचा सकता है । वह तो उसकी बहिन है न ।"

हँसराज के तीव्र व्यंग्य से तो गोपालकृष्ण स्तम्भित रह गया । उसने सीधा प्रश्न किया, "तो तुम्हारे विचार से वे भाई-बहिन नहीं हैं ?"

"देख लीजिए हजूर । जो कुछ मैंने देखा, समझा, बता दिया । शेष आप स्वयं जाँच कर सकते हैं ।"

हँसराज के बात करने का ढँग ऐसा था कि गोपालकृष्ण इस दशा में विचार करने के लिए विवश हो गया । वह अपने पुत्र की गतिविधियों पर दृष्टि रखे हुए न हों, ऐसी बात भी नहीं है । परन्तु वे मिस लोमा की भाँति छाया को रमेश की दृष्टि से दूर करने का उपाय अभी तक नहीं खोज सके हैं । उन्हें एक ही मार्ग दिखाई देता है कि रमेश का शीघ्र विवाह कर दिया जाये । छाया तो अब उन्हें अपनी बेटी ही लगती है ।

हँसराज स्वामी को विचार-मग्न देख बोला, "मैंने यह भी सुना है हुजूर, रमेश को आगरा भिजवाने में भी छोटे सरकार की सिफारिश हुई ताकि ..."

"इतना आगे मत बढ़ो हँसराज । गोपालकृष्ण ने उत्तेजना-पूर्ण स्वर में टोका । "तुमने जो कुछ कहा है, मैं उसकी तफतीश करूँगा ।"

हँसराज काँप उठा । उसने स्वामी का इतना विकराल रूप आज से पूर्व नहीं देखा था । उसने बात को सम्हालते हुए कहा, "गुस्ताखी माफ हजूर । मैंने उस छोकरी के बारे में अर्ज की है वरना मैं छोटे सरकार का कोई दोष नहीं समझता ।"

"अच्छा अब जाओ, अपना काम करो। तुम्हारी बात समझ ली है।" गोपालकृष्ण और उत्तेजित होकर बोले। छाया के लिए छोकरी शब्द उन्हें बहुत बुरा लगा। हँसराज के जाने के अनन्तर वे बुदबुदाये, "बदतमीज कहीं का। हरामजादा सी० आई० डी० करने लगा है।"

हँसराज अपना मुख लटकाये वहाँ से खिसक गया पर लाला गोपालकृष्ण विक्षुब्ध मन कार्यालय में बैठे रहे। उनको क्रोध भी आया। रमेश के वहाँ न आने और छाया के कोठी में अकेले होने के विचार ने उन्हें दुखी कर दिया। हँसराज की बातों ने भी अपना पूर्ण प्रभाव डाला था। इस पर भी ऐसे मामले में युवा बेटे को डाँटना वे उचित नहीं समझते थे। वे विचार करते रोशन ने झूठ बोल कर उसकी कोठी में स्थान पा लिया। क्या उसने रमेश से भी धोखा किया; क्या अब उन्हें रोशन को डिसमिस कर लाहौर छोड़ने का आदेश देना चाहिए? ऐसे अनेक विचार उनके मन में उथल-पुथल मचाने लगे। बहुत समय तक किसी प्रकार इस समस्या को सुलझाने की योजना बनाते रहे।

लाला गोपालकृष्ण के पूर्व संस्कार इतने प्रबल थे कि किसी को एक बार आश्रय देकर घर से निकालना उसके वश की बात न थी। उसने आज तक मिस लोमा के अतिरिक्त किसी कर्मचारी को डिसमिस नहीं किया था। उसको निकालते समय भी उसको बहुत दुख हुआ था किन्तु उस समय अपने एक मात्र बेटे को उसके चंगुल से बचाना ही मुख्य उद्देश्य उनकी समझ में आया था।

छाया की बात विलक्षण है। अब तो वह घर का सा प्राणी बन गई है। न केवल उसकी भोली सूरत देख गोपालकृष्ण के मन में वात्सल्यता के भाव उत्पन्न होते हैं प्रत्युत उसमें अनेक गुण हैं जिन्हें देखकर एक बाप को आत्मतुष्टि होती है। छाया का लालाजी की सुख-सुविधा का ख्याल रखना उन्हें अपनी पुत्री की स्मृति करा देता है।

वह रसोई का प्रबन्ध देखती है। गोपालकृष्ण की कमीज़ में स्वयं बटन टाँक कर देती है तो वे आत्मविभोर हो उठते हैं। उन्हें उसके प्रति बेटी की भाँति मोह है अतएव आज तक कभी उसके दुश्चरित्र होने का सन्देह नहीं किया। रमेश की गतिविधि पर अपने स्वभावानुरूप अवश्य दृष्टि रखते हैं। मुनीम ने उनकी भावनाओं को बुरी तरह झँझोड़ दिया है। उन्हें मुनीम पर भी क्रोध आता है।

वे इन्हीं उद्गारों से पिस रहे थे कि रमेश आ पहुँचा। वह भी छायाको अपने अनुकूल न बना सकने के कारण उदास था। गोपालकृष्ण भाँप गए। देखते ही पूछा, "क्या बात है रमेश ?"

"पापा। मुझसे भूल हुई। गाड़ी लेट थी तो मुझको मोटर लेकर कोठी पर लौट आना चाहिए था। आपको खामखाह प्रतीक्षा करनी पड़ी।"

"वह तो ठीक किया तुमने। छाया भी साथ गई थी। उसे अकेला कैसे छोड़ आते। परन्तु मैं तो तुम्हारा मुझाया हुआ मुख देखकर पूछ रहा हूँ कि क्या बात है ?"

रमेश समझ गया कि पापा उसके मन में उठे बवण्डर का अनुमान लगा व्यग्र हो उठे हैं। उसने मुस्करा कर झट बात बनाई।

"पापा ! आज जल्दी उठने से नींद आ रही थी। मानक को गाड़ी देकर मैं सो गया। उठा था इधर चला आया। सिर भारी हो रहा है।"

"तो आना नहीं चाहिए था" गोपालकृष्ण ने सन्तोष की साँस देते हुए कहा।

"आप अधिक व्याकुल होते, प्रतीक्षा करने के कारण।"

"तो ऐसा करो किसी को भेजकर एसप्रो मंगवा कर खा लो। ठीक हो जायेगा।"

रमेश ने पापा का आदेश सहर्ष स्वीकार किया।

लाला गोपालकृष्ण कुछ देर बाद 'साईट' पर काम की प्रगति देखने चले गए। रमेश शाम को अकेला घर लौटा। चाय के समय

छाया से उसकी कोई बात नहीं हुई। भोजन के समय गोपालकृष्ण कोठी पहुँचे तो दोनों को भोजन के लिए अपनी प्रतीक्षा करते पाया दोनों के मुखों से ऐसा पता चलता था जैसे वे अभी-अभी लड़ाई करके मौन हो गए हों। उनकी समझ नहीं आया कि कैसे बात आरम्भ करें। हँसराज की बातें पुनः मस्तिष्क पर उभर आईं। किन्तु दोनों के विशाद् पूर्ण मुख देख चुपचाप गोपालकृष्ण बैठ गए।

छाया स्थिति को समझकर कृत्रिम मुस्कराहट होठों पर लाती हुई बोली, "आज बहुत देर कर दी, पिताजी ?"

"हाँ बेटा। आज काम बहुत था। रमेश ने तुम्हें बताया नहीं कि देर से आऊँगा। इसे तो पता था कि मैं 'साईट' पर गया हूँ।"

छाया ने उत्तर नहीं दिया और उठकर भोजन परोसने लगी। गोपालकृष्ण ने रमेश को सम्बोधन कर पूछा, "अभी सिर दर्द हो रहा है ?"

"पापा ! आज गर्मी बहुत है। किसी काम में मन नहीं लगता। अखबार भी नहीं पढ़ा गया।"

गोपालकृष्ण अधिक क्या पूछते ? रमेश के उत्तर का प्रत्युत्तर था ही नहीं। वे 'हूँ' करके मौन हो गए और भोजन करने लगे।

एक दिन और बीत गया। पिता पुत्र में विशेष बात नहीं हुई। रमेश छाया की संगति के बाद उसकी सिसकियाँ सुन अपने और उसके सम्बन्ध पर विचार कर रहा था। उस दिन भी भोजनोपरान्त वे कोई बात न कर सके यद्यपि रमेश भी पिता के कमरे में बैठा विश्राम करता रहा। रमेश भी पिता को कोई अवसर नहीं देना चाहता था जिससे उन्हें सन्देह हो कि वह छाया से प्रेम करता है। बहुत देर तक बाप बेटा दोनों मौन रहे।

गोपालकृष्ण को सब बातों का एक ही हल सूझता था—रमेश का तुरन्त विवाह। उसको एक युक्ति सूझी। वे रमेश की ओर देखते हुए बोले, "मैं चाहता हूँ तुम्हारा शीघ्र विवाह कर दूं। छाया तो अब घर का प्राणी ही बन गई है। तुम रोशन से बात कर लेना। यदि

तुम्हारी इच्छा है तो मैं उसको पतोहू बनाने में भी आपत्ति नहीं करूंगा रमेश।"

रमेश के विस्मय का पारावार न रहा। वह कैसे रोशन से बात कर सकेगा ? वह छाया पर उसके लिए अपना अधिकार क्यों छोड़ने लगा। यह समस्या इतनी सरल नहीं थी जितनी गोपालकृष्ण ने सुगम समझ कर बात आरम्भ की थी। फिर रोशन तो छाया के माँसल शरीर का भोग भी कर चुका था। उसे इतनी जल्दी पत्नी बनाने की बात पर विचार भी नहीं किया था। उसने पिता के मुख पर देखते हुए कहा "पापा ! छाया को तो आप अपनी बेटी समझते हैं न।"

"हाँ। पतोहू और पुत्री में मेरे लिए कुछ भी अन्तर नहीं। तुम सोच लो।"

रमेश असमंजस में पड़ गया। वह पिता को क्या उत्तर देता उसे यह भी कहने का साहस नहीं हुआ कि वह छाया में रुचि नहीं रखता अथवा वह उसको पसन्द नहीं। गोपालकृष्ण उसके मुख पर टकटकी लगा कर देख रहा था। रमेश के नेत्र अवनत हो गए।

गोपालकृष्ण को समझ आयी कि रमेश छाया को अस्वीकार नहीं करता। अर्थात् उसके सम्मोहन से अछूता नहीं है। अतएव उसने अपने विचारों का विश्लेषण कर दिया। देखो बेटा, "जो कर्म छिप कर किये जायें, मैं उसको श्रेष्ठ नहीं मान सकता। बस इतना तुम्हें सदा स्मरण रखना चाहिए। अपने हृदय की भावना स्पष्ट करके कर्म-क्षेत्र में अवतीर्ण होना ही उचित है।"

"पापा ! मैं छाया अथवा रोशन के विचार नहीं जानता और न ही रोशन से पूछ कर स्वयं को छोटा बनाना चाहता हूँ।"

"मैं भी ऐसा ही सोचता हूँ। तुमने रोशन की जो सहायता की है, उसके प्रतिकार में छाया को उससे माँगना किसी हिन्दू को शोभा नहीं देता। इसलिए मेरा विचार है कि तुम लाला सन्तराम की लड़की देख लो। वह कई बार कह चुके हैं।"

"पापा। अभी एक वर्ष तक मैं विवाह नहीं करूंगा।"

गोपालकृष्ण को यह बात पसन्द नहीं आई। फिर भी उन्होंने कार्यवाही आगे चलने देने के लिए कह दिया, "तुम लड़की देख आओ। सगाई हो जाये। विवाह के लिए एक वर्ष रुकने में वे आपत्ति नहीं करेंगे।"

रमेश चुप रहा। लाला गोपालकृष्ण को समझ आयी, वह राज़ी हो गया हैं। उसने अन्तिम निर्णय करते हुए कहा, "आज तुम तारा को देख आना।"

"पापा ! वे आपके घनिष्ठ मित्र हैं। उनकी लड़की को देखने जाना बुरा लगता है।"

"ऐसे करो। मैं तुमको एक काम से भेजूंगा। उस बहाने वहाँ जा सकते हो। तारा आजकल घर पर ही रहती है। सन्तराम ने मुझको अपने मकान का नक्शा बनवा देने को कहा था। वह नक्शा तैयार हो गया है। तुम वह लेकर चले जाना। तारा को भी देख सकोगे।"

रमेश ने स्वीकार कर लिया। विवाह के विषय में वार्तालाप करने अथवा लड़की देखने के प्रश्न पर किसी युवक के मन में गुदगुदी होना स्वाभाविक है। रमेश की भी ऐसी ही अवस्था है। गोपालकृष्ण ने सोने के निमित्त नेत्र मूंदे और रमेश एक नवीन कोमल उद्‌गार मन में लिए अपने कमरे में लौट आया।

द्वार पर ठिठका, आश्चर्यचकित-सा। उसके पलंग पर छाया लेटी हैं। वह विस्मित हो उसे निहारने लगा। एक घण्टा पूर्व तो वह उससे बहुत क्षुब्ध हुई थी कि रमेश सोचने लगा था कदाचित् उससे कभी न बोलेगी। छाया के विचार से उसने अपने मित्र की पत्नी से बलात्कार किया था। मित्र से विश्वासघात किया था। उसको भी कभी पश्चात्ताप होता था कि उसने उतावली में क्यों यह पग उठाया। इतनी जल्दी क्या थी। छाया उसके घर में ही तो थी। उसे मनाने का यत्न करना चाहिए था। उसे अकेला देख उसकी विवशता का लाभ क्यों उठाया। उसकी सिसकियाँ उसे स्मरण थीं।

छाया से सहवास की अनुभूति और छाया के मन पर हुई प्रतिक्रिया

के कारण वह पिता को उत्तर नहीं दे सका था। छाया में रुचि रखने की बात वह गोपालकृष्ण के सम्मुख स्वीकार न कर सका। उसने रोशन से पूछने में भी अपनी असमर्थता प्रकट कर दी थी। अब भी उसको छाया से पहले बात करने का साहस नहीं हुआ। अतः चुपचाप कुर्सी पर बैठ गया।

छाया भी पलंग पर ही उठकर बैठ गई। लेटी रहना उसको उचित प्रतीत नहीं हुआ। रमेश मुस्करा कर उसके उदास मुख पर देखने लगा। उसको छाया की दो घण्टे पूर्व की भयानक मुद्रा स्मरण हो आई। अब तो वह भोलीभाली प्रेममयी युवती की तरह आकर्षक लग रही थी। कुछ देर पहले उसने रमेश से कहा था, "यह ठीक नहीं किया आपने। अपने मित्र से धोखा किया है।"

"छाया। रोशन भले ही तुम्हारा बचपन का साथी हो, किन्तु तुम सदृश्य सुन्दरी के योग्य नहीं है।"

"तुम्हें अपने धन का अभिमान है।" छाया ने आवेश में कहा।

एक क्षण के लिए रमेश चकराया फिर कृत्रिम मुस्कराहट मुख पर बिखेरता हुआ बोला, "नहीं। प्रेम का अहंकार है। मैं तुमसे बहुत प्रेम करता हूँ।"

"कुछ भी हो, आपने नारी की बेबसी का लाभ उठाया है। मैं आपके घर में अकेली हूँ न।" छाया ने रोते हुए कहा था।

"पगली! इतनी भावुक क्यों बनती हो। जो हो गया सो हो गया। तुम रोशन से कुछ न बताना। यौवन के उन्माद में सभी पागल होते हैं। हमने कोई विलक्षण बात नहीं की।"

"आपने तो बदला लिया है न।"

"किस बात का?"

"घर में आश्रय देने तथा साड़ियाँ लेकर देने का।"

रमेश छाया का मुख देखता रह गया। उसके चरित्र पर यह बहुत बड़ा आक्षेप था। उसने भी आवेश में आकर कहा, तुम बहुत नीच हो। इसलिए नीच नीचता की ही बात करेगा।"

अब उसने दो किश्तियों में पाँव रखे हैं और उसकी जीवन-नैया हिचकोले ले रही है। वह आवेश में रमेश को कोस रही है। रमेश भी अब तक समझ चुका है कि छाया को कोठी में रहने का चसका लग गया है। भाग कर जायेगी भी कहाँ! उसके अन्तिम शब्दों ने उसे मौन कर दिया कि वह उससे प्रेम करता है और सदा करता रहेगा। इस पर भी छाया का हृदय ग्लानि से गला जा रहा है। वह सोचती है, वहुत ही दुर्बल मन की सिद्ध हुई है। अपना घर छोड़ कर रोशन के मोह में यहाँ भगी आई और समर्पण कर दिया एक रईसज़ादे के समक्ष!

वह मौन बैठी पश्चात्ताप कर रही है। गोपालकृष्ण को देखकर न जाने उसे क्यों अपने पिता की स्मृति होती है। वह अत्यधिक लज्जित है। उसने गोपालकृष्ण की रमेश से बातचीत छिप कर सुनी है। उसको समझ आ गई है कि पिता पुत्र पर सन्देह करने लगा है। रमेश सगाई के लिए मान कर भी उसके प्रेम का दम भरता है। क्या यह वंचना है अथवा उससे मौखिक सहानुभूति है। उसने तड़प कर रमेश से पूछ लिया, "तुम तारा से विवाह करोगे?"

रमेश चौंक पड़ा। जैसे चोरी करते पकड़ा गया हो। थोड़ी देर पहले अपने प्रेम की दुहाई के समय उसने कल्पना भी न की थी कि छाया सब कुछ सुन चुकी है।

छाया ने व्यंग्यपूर्ण हंसते-हंसते हुए आगे कहा, "और प्रेम सदा मुझसे करते रहोगे।" उस समय छाया का मुखड़ा कितना विद्रूप दिखाई देने लगा। रमेश विनीत स्वर में स्वयं को सम्हालते हुए बोला, "छाया! पापा से कैसे कहता। वे क्रोध से भर जाते और कोठी में हल्ला होता।"

"मुझको बनाने का यत्न मत करो, रमेश! मैं तुम्हारे विचार सुन कर अच्छी प्रकार समझ चुकी हूँ। तुम में ज़रा भी नैतिक साहस होता तो कह सकते थे, तुम मुझसे प्रेम करते हो। मेरा शरीर तुम्हारा हो चुका है। तुम तो रोशन से पूछ कर स्वयं को छोटा बनाना नहीं

चाहते न !"

रमेश क्षण भर के लिए तो निरुत्तर हो गया। उसकी मनोवृति एक इस वाक्य में छिपी हुई थी। कुछ रुक कर बोला, "और रोशन के आने पर तुम्हारी क्या दुर्दशा होती। मैंने कूटनीति से काम लिया।" रमेश ने एक अपराधी की भाँति अपनी सफाई दी।

"तुम भीरु हो। प्रेमिका की सहायता नहीं कर सकते। रोशन अब तुम्हारा प्रतिद्वन्द्वी है। यदि पापा को मना लेते तो रोशन तुम्हारा क्या बिगाड़ लेता ?"

रमेश के पास युक्ति नहीं थी। उसने कुछ विचार कर कहा, "यदि तुमने निर्णय कर लिया है तो मैं भी अपना विचार बदल दूंगा।"

"देखूंगी, क्या करते हो। सगाई तारा से हो रही है। प्रेम मुझसे करते हो। एक वर्ष बाद विवाह की बात इसी कारण की है। तत्पश्चात् अपमानित कर यहाँ से निकाल दोगे। खूब···छाया हंस पड़ी।"

"क्यों रोशन तुम्हें··"

"बको मत।" छाया आवेश में सभ्यता भी भूल गई। रमेश ने देखा उसकी आँखें लाल हो रही हैं। वह भयभीत हो गया कि कहीं हल्ला न कर दे और पापा को सब बातों का ज्ञान हो जाये। वह आरोप भी लगा सकती है कि उससे बलात्कार हुआ है। लड़की की बात पापा मान ही जायेंगे। उन्हें पहले ही मुझ पर सन्देह है। अतः रमेश सोच धीमे स्वर में बोला, "मेरी बात सुनो छाया। मैं तारा को देखने जाऊँगा और उसको अस्वीकार कर दूंगा। रोशन के लौट आने पर तुमसे सगाई होगी। यह मेरी योजना है।"

: ३ :

छाया को कुछ सन्तोष हुआ। वह आत्म ग्लानि से पागल हो उठी थी। उसकी बुद्धि कहती जब शारीरिक आवश्यकता की पूर्ति रमेश ने उसके मन की दुर्बलता के कारण कर ही ली तो अब वह क्यों उसको निर्दोष कह कर मनमानी करने दे। वह नहीं चाहती थी कि रमेश उसे पतित कह कर अन्यत्र सगाई कर ले। रोशन तो कभी भी भाग कर

ा सकता है। उसमें सामर्थ भी नहीं उसका बोझा ढोने की। अतः उसने निर्णय कर लिया कि वह इस घर की बहू बनने का प्रयास करेगी। उसने रमेश की योजना से सहमति प्रकट करते हुए कहा।

"आप बहुत अच्छे हैं। मैंने क्रोधवश आपका आपमान कर दिया। क्षमा चाहती हूँ।"

रमेश ने मुस्करा कर उसकी आंखों में देखा। छाया उसके साथ लिपटती हुई बोली, "मैंने अपना सर्वस्व आप पर निछावर कर दिया है। अब मैं कहाँ जाऊँगी।"

"तो तुम रोशन को छोड़ दोगी ?"

"निःसन्देह। तुम्हारी निष्ठावान पत्नी बन कर रहूँगी।"

रमेश को पसीना छूटने लगा। छाया सुन्दर अवश्य थी—एक कोमल फूल की भाँति। परन्तु यह पुष्प अब उसे कण्टक की भाँति चुभने वाला प्रतीत होने लगा। उसने कल्पना भी नहीं की थी कि फूल की सुगन्ध लेते समय वह काँटों से इतना उलझ जाएगा कि दामन बचाना कठिन होगा। उसने तो सोचा था फूल की सुगन्धि का आनन्द लेने के उपरान्त उसे मसलने की सामर्थ रखता है। वह धनी है और छाया सदृष्य ललना के मन को सुन्दर वस्त्रों-आभूषणों से भरमा सकेगा। वह उस उद्देश्य में सफल हुआ था तो भी उसे स्थायी पत्नी बनाने की कल्पना कभी न की थी। उसने छाया को प्रेम दुहाई दे तो दी पर मन में कुछ और भावना थी। अब भी वह छाया के बालों में उँगलियाँ फेरते हुए बोला, "तुम मेरी हो। मैं तुम्हारे लिए समाज से लड़ूँगा।"

छाया का मन पुलकित हो गया। उसने झुक कर रमेश की चरण-रज माथे पर लगा ली।

"यह क्या।"

"अब मैं तुम्हारी हो चुकी रमेश ! जिसके पीछे घर छोड़ कर आई थी, उसका भी वलिदान कर दिया।"

रमेश ने उसको खींच कर अपने उर से लगा लिया।

अगले दिन वह पिता से नक्शा ले सन्तराम के मकान पर जा पहुँचा। संयोग से तारा ने ही उसका स्वागत किया।

दोनों की दृष्टि मिली और कुछ क्षण तक एक दूसरे को देखते रहे।

"बहुत बदल गए हो रमेश !" तारा ने मुख खोला।

"तुम भी बदल गई हो। देखता हूँ बम्बई की जलवायु लड़कियों के लिए अधिक लाभप्रद है।"

"ऐसा सभी कहते हैं। कहिए। क्या हालचाल हैं ?"

"सब ठीक हैं। अब तो तुम परीक्षा भी पास कर चुकी हो।"

"हाँ। लाहौर में रहना होगा। होस्टल के जीवन में भी विशेष आनन्द है।"

लाला सन्तराम घर पर नहीं थे। तारा ने रमेश का सत्कार किया। दोनों चाय पीते हुए वार्तालाप करते रहे। इस प्रकार की प्रथम भेंट में तारा ने रमेश पर गहरा प्रभाव छोड़ा। वह एक घण्टा वहाँ बैठा। लाला सन्तराम घर आये तो रमेश के व्यवसाय के विषय में बातें होने लगीं। रमेश ने नक्शा उन्हें दे दिया और विदा हो गया।

तारा उसे द्वार तक छोड़ने आई थी। रमेश ने नमस्ते की तो उसने कहा, "अच्छा। मैं तुमसे मिलने आऊँगी।"

रमेश अब तारा के विषय में विचार करता आ रहा था। तारा बम्बई विश्वविद्यालय से बी० ए० की परीक्षा पास कर आई थी। उसके पिता का वहाँ भी कारोबार था। माल विदेशों से मँगवाया जाता था और लाहौर तथा बम्बई केन्द्रों में बेचा जाता। सन्तराम ने बम्बई में एक कार्यालय खोल रखा था। वर्ष में चार मास वह स्वयं बम्बई में रहता था। तारा भी बम्बई कालेज में प्रविष्ट हो गई थी और होस्टल में रहती थी। बहुत ही स्वतन्त्र विचारों की लड़की थी। रमेश ने तीन वर्ष पूर्व उसको देखा था। अब उसका रूप बहुत निखर आया था। रूपरेखा और शिक्षा के विचार से तारा अच्छी संगिनी बन सकती है। यही विचार रमेश तारा को देखने के बाद अपने मन

में लिए घर पहुँचा।

वह छाया और तारा में परस्पर तुलना करता। छाया यद्यपि कम सुन्दर नहीं थी तो भी एक यतीम लड़की थी—कम पढ़ी-लिखी थी। बार-बार मनन करने पर तारा उसको श्रेष्ट प्रतीत होती थी और उसके पिता की इस विषय में सहमति थी।

छाया ने पुराने साथी का विचार छोड़ दिया, परन्तु रमेश नई लड़की देखकर पुरानी सहवासिन को मार्ग से हटाने की योजना बनाने लगा। इसलिए कि वह पुरुष था। उसने छाया के माँसल शरीर का भोग कर लिया था। वह अब एक मसला हुआ पुष्प थी। रमेश को आवश्यकता थी नये खिले हुए फूल की। उसको पुरानी प्रेमिका के प्रति आकर्षण नहीं था। ठीक उसी प्रकार जैसे छाया को रोशन के प्रति। रही-सही जो कसर थी वह तारा ने स्वयं पूर्ण कर दी।

तीन दिन उपरान्त तारा रमेश से मिलने आई।

छाया रमेश के आश्वासन पर सन्तुष्ट हो गई थी। उसको विश्वास था कि वह तारा को अस्वीकार कर देगा। अतः उसने फिर इस विषय में कोई बात नहीं की। रमेश ने भी अपने व्यवहार से यह प्रकट नहीं होने दिया कि उसकी रुचि कम हो गई है। उसे तो बिना विवाह के पत्नी मिल गई थी। छाया के यौवन और सौन्दर्य से पूर्ण लाभ उठा रहा था। रोशन को उसने लिख दिया वह दिल्ली और आगरा की सैर करके लाहौर लौटे। ऐसे अवसर रोज-रोज नहीं मिलते। साथ उसने सौ रुपये का बैंक ड्राफ्ट रोशन को अपनी ओर से भेज दिया ताकि उसको वहाँ आर्थिक कठिनाई न हो।

रोशन पूर्व कार्यक्रमानुसार लाहौर नहीं लौटा। छाया को भी अब विशेष चिन्ता नहीं थी। वह तो रमेश के संग रंगरलियाँ मनाने में मग्न थी। नारी की स्वाभाविक चंचलता तथा भावुकता सहायक हो रही थी। मन का सन्तुलन एक बार टूट जाये तो मनुष्य किसी पहाड़ से लुढ़के पत्थर की भाँति नीचे को लुढ़कता ही चला जाता है अर्थात् पतोन्मुख हो जाता है।

"यह हैं मेरे परम मित्र रोशनलाल की बहिन छाया देवी ! आज कल यहाँ रहती हैं। रोशन कार्यालय के काम से आगरा गया हुआ है।"

छाया अन्यमनस्क सी नमस्ते कर मौन हो गई। उसके हृदय की गति तीव्र हो गयी थी। चाय पीना उसके लिए कठिन हो रहा था। रमेश ने मुस्करा कर तारा का परिचय भी दिया, 'यह हैं मिस तारा कपूर। इस वर्ष बम्बई विश्वविद्यालय से बी. ए. कर यहाँ आई हैं।"

छाया को दोनों के परिचय का ढंग भी विचित्र लगा। उसे रोशन की बहिन बताया और तारा को मिस तारा कपूर। उसके पीछे बी. ए. की पूँछ लगाने में रमेश ने गर्व अनुभव किया था।

किसी तरह चाय समाप्त हुई। तीनों 'ड्राइंग रूम' में चले आये। जिस प्रकार तारा निस्संकोच रमेश से बातें कर रही थी छाया को लगा कि वह उसकी वर्षों से परिचित है। इन धनी लोगों का क्या विश्वास ! जहाँ मन अटक गया, बहला लिया। सफल तो वे हो ही जाते हैं। छाया ने एक दीर्घ निःश्वास छोड़ा और मार्मिक दृष्टि रमेश पर फेंकी।

रमेश अपने व्यवसाय के विषय में अपना कार्यक्रम तारा को बता रहा था, उसने छाया की ओर नहीं देखा। किन्तु तारा ने यह मुद्रा भली-भाँति भाँप ली और उसके अन्तर में उठी हूक को अनुभव भी किया। वह केवल मुस्करा दी और रमेश को ऐसे लगा कि तारा उसकी बात नहीं सुन रही है। उसका मस्तिष्क कहीं अन्यत्र विचर रहा है। वह मौन हो गया। तारा ने रमेश और छाया दोनों के मुखों पर दृष्टिपात करते हुए कहा, "रमेश ! अगले मास हमारे विश्वविद्यालय का 'कनवोकेशन' (दीक्षांत समारोह) हो रहा है। मेरी इच्छा है, आप भी मेरे साथ चलें, घूम आयेंगे।"

"कब जा रही हो ?"

"अगले मास की बारह तारीख को।"

की भाँति शोभायमान थे। बालों के कुण्डल उसकी लम्बी ग्रीवा का चुम्बन करते प्रतीत हो रहे थे। तारा ने रमेश की आंखों में झाँकते हुए कह दिया, "देखिए ! पहले आपको घोषणा करनी होगी कि आप छाया में कोई किंचितमात्र भी रुचि नहीं रखते और उसका भी आपके जीवन में दखल न होगा।"

"वह मेरे मित्र की बहिन है। पापा उसको अपनी लड़की मानते हैं। फिर मैं तो स्वतन्त्र पंछी हूँ, मुझ पर किसी का क्या अधिकार हो सकता है अथवा मेरी ज़िन्दगी में कोई दखल दे सकता है।"

"आपकी होने वाली पत्नी भी नहीं ?"

"वह भी उतना ही जितना अधिकार वह मुझको देगी।"

तारा को इस उत्तर से सन्तोष हुआ। रमेश चिन्तित हो गया कि वह छाया को कैसे सन्तुष्ट करेगा। उसने रोशन को रुपये भेज कर कुछ दिन बाद आने का सुझाव दिया था—छाया की संगत का लाभ उठाने के लिए। इसी बीच तारा आ टपकी थी। उसका मन इस नवल सुन्दरी के लिए चंचल हो उठा। उसको एक बात समझ में आती थी कि वह पापा को रुष्ट नहीं कर सकता। विवाह करना है तो तारा सदृश्य सुन्दरी से कर लेने में कुछ हानि नहीं। अब वह उसको छाया की तुलना में अधिक सौम्य स्वभाव वाली, मधुर भाषिणी तथा सुशिक्षित लगती थी।

छाया से मुक्ति पाने का उसको एक मार्ग सूझा कि रोशन के लिए अधिक सुविधाएँ उपलब्ध कर, उसके पृथक् रहने का प्रबन्ध कर दे। तब छाया स्वयमेव उसके साथ अपने पृथक् गृह में चली जायेगी। सब से पहले वह रोशन को शीघ्र लाहौर वापिस बुलाना चाहता था। जिस उद्देश्य से, उसने उसको भिजवाया था, वह पूर्ण हो गया था। दूसरा उद्देश्य था तारा को संगिनी बनाना। उसकी पूर्ति के निमित्त रोशन का वापिस बुलाना अत्यावश्यक था। वह विचार करने लगा।

तारा उसके गम्भीर मुख पर मन के भाव पढ़ने का प्रयास कर रही थी। वह स्वयं प्रफुल्लित इस कारण दिखाई देती थी कि वह सफल

हो गई थी। उसने कहा, "चलो तनिक घूम आवें।"

"चलिए ! भोजन के समय तक लौट आयेंगे।"

"मैं यहाँ नहीं आऊँगी। छाया को बुला लो। वापिसी में साथ हो जायेगा।"

"उससे पूछ लेता हूँ।" वह छाया के कमरे की ओर चला गया। ज्यूँही वह द्वार पर पहुँचा, द्वार बन्द हो गया।
रमेश ने धीरे से कहा, "छाया द्वार खोलो।"

कोई उत्तर नहीं मिला। रमेश ने द्वार को खटखटाया। तब भी द्वार नहीं खोला गया। रमेश ने अन्तिम प्रयास किया। "हम घूमने जा रहे हैं, तुम्हें बुलाने आया हूँ।"

उत्तर नहीं मिला प्रत्युत छाया के रोने का शब्द सुनाई दिया। वह बिस्तर में सिर छुपाये जोर-जोर से रोने लगी थी।

रमेश वापिस जा तारा से बोला, "चलो चलें। वह सो रही है।"

दोनों कोठी से बाहर आ गए। तारा ने मुस्कराते हुए कहा, "कोई लड़की असभ्यता पर तभी उतर आती है जब वह किसी से डाह करती हो। छाया को मेरा यहाँ आना अच्छा नहीं लगा। मुझको ऐसा समझ में आया है कि वह आप पर अपना आधिपत्य मानने लगी है।"

"वह मेरे मित्र की बहिन है और मैं समझता हूँ उसको अपनी औकात नहीं भूलनी चाहिए। पापा अपने इकलौते बेटे का विवाह अपने कार्यालय के साधारण क्लर्क की बहिन से करने की कल्पना भी नहीं कर सकते। वे उदार हृदय होने के कारण छाया सदृश्य सुशील लड़की के प्रति वात्सल्यता तथा स्नेह भले ही रखते हों। छाया ने भी पुत्री की भाँति पापा के मन पर प्रभाव जमा लिया है। किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि वे उसको पतोहू बनाने के लिए तैयार हैं। मेरी इच्छा दूसरी बात है। फिर यह तो तुम जानती ही हो कि पापा ने तुम्हारे विषय में मेरी राय पूछी है।"

यद्यपि तारा के मस्तिष्क में बात स्पष्ट हो गई तो भी छाया रमेश के परिवार में पुत्री की पदवी पाना, उसके लिए विस्मयजनक

था। उसने कहा, "आपका अभिप्राय है कि वह आपकी बहिन के स्थान की पूर्ति कर रही है और आपकी पत्नी की ननद होगी।"

"मैं क्या कह सकता हूँ ! वस्तुस्थिति से तुम को अवगत करा दिया है। मेरा अपना विचार है कि रोशन को मकान शीघ्र मिल जायेगा और वे लोग चले जायेंगे।"

इससे अधिक आश्वासन तारा को रमेश नहीं दे सकता था। अब तारा उससे इधर-उधर की बातें करने लगी। रमेश को एक और युक्ति सूझी। वह मालरोड पर तारघर की ओर मुड़ गया। वहाँ पहुँच उसने रोशन को तार दे दिया कि वह शीघ्र ही लौट आये। साथ ही उसने यह भी लिखा कि छाया बहुत उदास है।

तार भेजने के अनन्तर जब दोनों पुनः मालरोड पर टहलने लगे तो तारा ने पूछा, "किसको तार दिया है ?"

"छाया के भाई को।"

तारा के आश्चर्य का ठिकाना न था। वह समझ न सकी कि रमेश उसके समक्ष ऐसा क्यों कर रहा था। क्या वह छाया के प्रति लेषमात्र भी रुचि नहीं रखता ? मनन करने पर जब वह समझी कि रमेश उससे शीघ्र विवाह करने को इच्छुक है तो उसे रोमांच हो आया। उसके उलाहने पर कि छाया उससे प्रेम करती है, रमेश स्पष्टीकरण दे रहा है कि वह छाया से किसी प्रकार का सम्बन्ध न रखता है और न ही लालायित है। उसने तो अपने मुख से उसे बहिन भी स्वीकार नहीं किया, यद्यपि उसके पापा की मुँह बोली बेटी है।

: ४ :

तारा रमेश से विदा ले जब घर पहुँची तो उसके मन में विशेष प्रकार की गुदगुदी हो रही थी। वह मधुर कल्पना में डूबी आराम कुर्सी पर बैठी थी। वह इच्छा करने लगी थी कि रमेश शीघ्र उसका पाणिग्रहण करे और वह जीवन पर्यन्त उसकी संगति में रहे जैसे आज उसने तीन-चार घण्टे उसकी संगति में व्यतीत किये। वह कल्पना की तीव्र उड़ान भरती हुई अनुभव कर रही थी कि रमेश ने उसको अपनी

आँखों में विषाद की झलक स्पष्ट दिखाई दे गई। स्वर भी आर्द्र हो गया था।

लाला गोपालकृष्ण ने छाया को सुन्दर रेशमी साड़ी मँगवा दी थी और इस अवसर पर घर की स्त्रियों के मध्य बैठने का आदेश दिया था। रमेश के स्थानीय सम्बन्धी, मौसी-मौसा तथा उनकी लड़की यमुना उस अवसर पर उपस्थित थे। छाया को रमेश की बहिन घोषित किया गया।

लड़की वालों ने रमेश के सब सन्निकट सम्बन्धियों को भी शगुन दिया। यमुना और छाया दोनों को इकावन-इकावन रुपये मिले। भाई के स्थान पर रमेश के कहने पर रोशन को भी रखा गया। रमेश के मौसी और चाचा के लड़के भी थे। रोशन को उनके समान मान लिया गया। वह रमेश का घनिष्ट मित्र जो था। यह सब कुछ तारा के माता-पिता ने रमेश के मान के निमित्त किया।

छाया ने कितना अपने मन को दृढ़ किया होगा, इसका अनुमान लगाना कठिन नहीं। जब तारा के घर के स्त्री पुरुष चले गए और चहल-पहल कम हुई तो छाया अपने मन के आवेग को रोक न सकी। कमरे में जा कर वह बहुत रोई।

ऊफ़! कितनी अभागन है वह, छाया ने सोचा। मन की बात भी वह मुँह से नहीं कह सकी। यह मनहूस दिन देखने के लिए रोशन के पीछे भागी चली आई। यहाँ पहुँचते ही उसको रोशन की बहिन समझ लिया गया। माता-पिता के रहते हुए अनाथ मान ली गई। कितनी विवश कर दी गई बहिन का अभिनय करने के लिए। अब रोशन के अतिरिक्त रमेश की भी धर्म-बहिन बन उसने रमेश के ससुराल से शगुन ले लिया। कितना झूठा, आडम्बरयुक्त जीवन है उसका। जिनकी वह सहवासिन बनी रही, समाज ने उनकी भगिनी मान, उसका आदर सम्मान किया। वह कह नहीं सकती कि उसकी माँ जीवित है। पिता और भाई रावलपिण्डी में मानयुक्त व्यवसाय करते हैं। रोशन के मोहजाल में फँसने के कारण दूसरों के टुकड़ों पर आश्रित है। वाह, री

भाग्य की विडम्बना !

लाला गोपालकृष्ण उसे अपनी बेटी मानते हैं। उनको जब विदित होगा कि उनकी यह बेटी कितनी नकली है, दुश्चरित्रा है, उन्हें कितना दुःख होगा ? रुपये लेते समय भी उसकी जुबान नहीं खुली। ऐसा कृत्रिम, पाखण्डी का जीवन वह कब तक जियेगी ! छाया सोचते-सोचते निराश हो गई। दम घुटने लगा।

क्या वह गोपालकृष्ण के समक्ष नतमस्तक हो पूर्ण वृत्तान्त बता दे ? अपना काला इतिहास सच-सच सुना दे ? कदाचित इस प्रकार अपने कुकर्मों का कुछ प्रायश्चित हो सके। किन्तु उसी समय उसका अन्तरात्मा कराह उठी। 'नहीं ! वह बदनामी और चरित्रहीनता का तिरस्कार सहन न कर सकेगी। नैतिक साहस और मनोबल के अभाव ने इस भावना को वहीं दबा दिया।

छाया को रजोदर्शन भी न हुए थे। वह वित्रस्त अवस्था में विचार कर रही थी। उसको कुछ करना तो पड़ेगा ही। रमेश का विवाह हो जायेगा तो वह कहां जायेगी ? अपनी आंखों से आशाओं के महल जलते न देख सकेगी। वह सोचती आखिर वह नारी है, दुर्बल है। उसका क्या दोष ! रोशन ने उसको सब से पहले पतित किया। उसकी दबी वासनाओं को उत्तेजित किया। रमेश ने भी उससे उचित व्यवहार नहीं किया। वादा करके मुकर गया। उसके झाँसे में आ गई। गर्भ किसका है ? कौन इसको स्वीकार करेगा ? दोनों उसे चरित्रहीना की संज्ञा दे देंगे। दोनों मित्रों का परस्पर झगड़ा हो सकता है। परिणाम-स्वरूप वह इस कोठी से निकाल दी जावेगी। कहीं ठौर न मिलेगी।

छाया को चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार दिखाई देता था। एक ही सरल रास्ता था—प्राणों का अन्त—पैट्रोल डाल कर इस दूषित शरीर को भस्म कर दे। इस प्रकार की कल्पना कर वह सिर से पाँव तक काँप उठी। भ्रूण हत्या भी होगी। उसके जल मरने पर भी रहस्य खुल जायेगा। सबसे अधिक बदनामी लालाजी की होगी जिनसे उसे पिता का स्नेह मिला। कितने ठाट से वह एक रईस की

बेटी बन कर रहती है ! 'नहीं: वह पापा की बदनामी नहीं होने देगी।' वह बुदबुदाई। तो फिर क्या करे ? यह प्रश्न बारम्बार उठता और वह शून्य में विचरने लगती। मस्तिष्क ठुन हो रहा था। चारों ओर विपत्ति थी उस अभागिन के लिए। कोई मार्ग भी निष्कण्टक नहीं था। वह विचारों में तल्लीन लेटी हुई थी। आँसू कपोलों पर सूख गए थे।

एकाएक उसके कानों में आवाज़ पड़ी, "छाया ! छाया बेटी !!"

छाया ने आँसू दुपट्टे से पोंछ लिए। लाला गोपालकृष्ण पुकार रहे थे। वह उठी। मुँह हाथ धोया और बालों को ठीक कर फूली हुई आंखों से एक अपराधी की भाँति उनके सामने आ उपस्थित हुई।

"क्या हुआ बेटी ? आज भी तुम्हारी आँखों में आँसू।" गोपालकृष्ण ने चिन्तित स्वर में पूछा। उसको रमेश से, छाया को पत्नी बनाने के विषय में हुई वार्ता स्मरण हो आई।

रमेश भी वहीं बैठा था। वह छाया की सूरत देख विस्मित नहीं हुआ। परन्तु छाया ने एक बार पुनः झूठ बोल कर रोशन के सम्मुख इस समस्या को भी हल कर दिया। उसने कहा, "पिताजी ! मुझे बहुत खुशी है। आज मुझे भी जब शगुन मिला तो माता-पिता की याद आ गई। आपके स्नेह और आदर के कारण उन लोगों ने भी इतना मान किया कि मेरा मन भर आया। बहुत कठिनाई से संयम रख पाई। परन्तु ज्यूंही वे लोग विदा हुए मैं कमरे में जाकर खूब रोई—माँ की याद में। पिता का स्थान तो आपने पूर्ण कर दिया है।" इतना कहते हुए छाया की आंखों में पुनः आँसू छलक पड़े। पास बैठी यमुना भी द्रवित हो गई। वह भी आर्त्त हो उससे सहानुभूति करने लगी। उसके गले में बाँह डाल कर बोली, "पगली ! दिल छोटा न करो। मैं तो समझती हूँ तुम बहुत भाग्यवान हो जो मौसाजी तुम्हें पुत्री मात प्यार करते हैं।"

इस उद्गार का उत्तर किसी ने नहीं दिया। उत्तर था भी नहीं। गोपालकृष्ण का मन भी आज रो दिया था। छाया के वेदना से भरे

शब्द सुनकर कि पिता की पूर्ति उन्होंने कर दी, माँ के स्थान की पूर्ति करने वाली नहीं थी।

गोपालकृष्ण को स्वर्गीय पत्नी की स्मृति हो आई थी। आज वह होती तो ऐसे अवसर पर खुशी से फूली न समाती। उन्होंने गला साफ कर कहा, "बेटी ! सब किस्मत का खेल है। परिस्थितियाँ मनुष्य को कहाँ का कहाँ पटक देंगी, पहले कोई नहीं जान सकता। मिलना-बिछुड़ना तो संसार में लगा ही रहता है।"

गोपालकृष्ण ने ये शब्द कहे थे, छाया को सांत्वना देने के लिए, परन्तु छाया तो आत्मग्लानि से गली जा रही थी। वह सोचती थी उसको नैतिक साहस से समस्त कथा सच बता देनी चाहिए थी। इस बार भी उसने अवसर खो दिया और झूठ को छुपाने के लिए पुनः झूठ बोल दिया।

क्या झूठ भी इतना प्रभावशाली होता है ? ये लोग अब भी उससे स्नेह तथा सहानुभूति रखते हैं ? घृणा क्यों नहीं होती उन्हें ! वह तो घृणा की पात्रा है ! पाप का पिण्ड है। उसका प्रमाण उसके पेट में छुपा है। शीघ्र सामने आ जायेगा। तब वह दुत्कारी जायेगी, एक कोढ़ी की भाँति। कोई उसको समीप न बैठने देगा। उसने दृष्टि उठा रमेश की ओर देखा। रमेश ने नेत्र अवनत कर लिए। मन ही मन छाया को धन्यवाद दिया कि उसने उसके कुकृत्य का कच्चा चिट्ठा नहीं खोला। कमरे में सर्वथा मौन छाया था।

गोपालकृष्ण ने कहा, "छाया ! तुमको बुलाया था कि तुम भी मिठाई परोसने में उनकी सहायता करो।"

छाया उसका अभिप्राय समझ गई। वह रमेश की बहिन के स्थान पर जो थी। यमुना और उसकी माँ शगुन में आई मिठाई को लिफाफों में डाल मित्र-सम्बन्धियों के घर भिजवाने के लिए रख रही थीं। यमुना की माँ ने उसे बताया, "ये लिफाफे मुहल्ले में बाँटने के लिए हैं। अभी रमेश के मित्रों और दूर के सम्बन्धियों के लिफाफे बनाने हैं। कार्यालय के लोगों को भी मिठाई भेजनी

छाया भी उनकी सहायता करने लगी। यमुना ने कहा, "माँ! तब तो यह मिठाई थोड़ी होगी।"

"हाँ! वह मैंने पहले ही जीजाजी को कह दिया है।"

छाया मौन धारण किये मिठाई लिफाफों में डाल रही थी। उसका मन रो रहा था, इस झूठे तथा कृत्रिम जीवन पर। शान्ति और आनन्द का प्रश्न ही न था। यदि उसको जीवित रहना है तो यह अभिनय जीवन पर्यन्त करना ही होगा। वर्तमान सुख और आराम के निमित्त उसको अपनी आत्मा का हनन करते ही रहना पड़ेगा।

: ५ :

रोशन को इस कोठी में सब कुछ बदला हुआ दिखाई दिया। उसने पहले भी अनुभव किया था कि छाया उसकी बहिन का अभिनय करती हुई वास्तव में रमेश की बहिन के स्थान की पूर्ति कर रही है। गोपालकृष्ण का उससे पुत्री की भाँति व्यवहार इसकी पुष्टि करता था। यद्यपि रमेश ने उसको कभी बहिन कह कर सम्बोधन नहीं किया था।

आज रमेश की सगाई पर उसने जो कुछ देखा उसको विश्वास हो गया कि छाया वास्तव में गोपालकृष्ण की पुत्री और रमेश की बहिन बन गई है। इसका कारण छाया की चतुराई अथवा उसका भाग्य है? रोशन के लिए समझना कठिन था। इतना वह अनुमान लगाता था कि छाया की सगाई भी गोपालकृष्ण ठाट से करेंगे। वे स्वयं ही उसका कन्यादान करेंगे। इसलिए उसको ऐसा लग रहा था कि उसने छाया को सदा के लिए खो दिया है। रमेश की सगाई की उसको जितनी खुशी थी, उतना ही वह छाया के विषय में चिन्तित था। उसको अभी विदित नहीं था कि उसकी अनुपस्थिति में क्या हुआ है। अतः जो कुछ उसने प्रत्यक्ष में देखा, उस विषय में छाया से वार्ता कर भविष्य की योजना बनाना चाहता था।

परन्तु उसके विस्मय का पारावार न रहा जब रात्रि को वह उसके कमरे में गया तो छाया ने उसको वहाँ से अपना बिस्तर रमेश के कमरे में ले जाने का आदेश दे दिया। वह कुछ क्षण तक तो उसका

मुख देखता रहा। तत्पश्चात् उसने पूछा, "क्या बात है छाया ?"

"युवा भाई-बहिन को एकान्तवास नहीं करना चाहिए।"

"ओह ! यह धन का नशा है या हृदय परिवर्तन हो रहा है ?"

"धन तो मेरे पास इकट्ठा हुआ नहीं, हृदय परिवर्तन ही समझ लो।"

"अब तुम किसी अन्य से विवाह करने की कल्पना करने लगी हो।"

नहीं रोशन ! मैं अपने जीवन को यथार्थ बनाने का यत्न करना चाहती हूँ। अभिनय कब तक करती रहूँगी। पहले तो भूल कर चुकी हूँ उसका प्रायश्चित आवश्यक है।"

"अभिनय करने को कौन कहता है, छाया ! यथार्थ में हम पति-पत्नी हैं। तुम मुझे इस अधिकार से वंचित करके भी बहिन कैसे बनोगी ? तुम मेरी बहिन हो नहीं।"

"पत्नी भी तो नहीं हूँ।" छाया ने कहा।

"तो यहाँ किस लिए आई हो ?"

परिस्थितियाँ खींच लाई हैं। वर्तमान परिस्थिति में फँसी हुई सत्य पर चल कर, उसके अनुरूप स्वयं को ढालने का यत्न करना चाहती हूँ।"

"यदि असफल रहीं तो ?"

"प्राणों का त्याग कर दूँगी।"

रोशन खिलखिला कर हँस पड़ा। उसको अभी भी यही समझ में आया कि छाया उसको बना रही है। वह बहुत दिनों के बाद लौटा था और छाया की संगति के लिए व्याकुल हो रहा था। उसने छाया को पकड़ अपने उर से लगा लिया। छाया उसको पीछे धकेलती हुई बोली, "रोशन ! मुझे मत छुओ। भूल का प्रायश्चित करने दो।"

"क्या भूल हुई है तुमसे ?"

"यही कि आत्म समर्पण कर दिया। इस को
प्रभाव है।"

"ओह ! तो मेरी अनुपस्थिति में रमेश ने···"

"नहीं। मैं तुम्हारी और अपनी बात कहती हूँ।" छाया ने मन दृढ़ कर झूठ बोल दिया।

"तुम यही भूल करने मेरे साथ आई थीं। जब हम बाल्यकाल के साथी हैं तो तुम्हारा मन क्यों विरक्त हो गया है ? तुम क्यों मुझसे दूर रहना चाहती हो ? घर से भागते समय तुम्हारे मन में बहिन बनने की भावना थी छाया।" रोशन ने फिर उसको अपनी ओर खींचा।

छाया हाथ छुड़ा पलंग पर जा गिरी और आवेश में आकर बोली, "मैं कहती हूँ, निकल जाओ इस कमरे से।"

"मैं नहीं जाऊँगा। मुझसे सहन नहीं हो सकता कि तुम यहाँ रहती हुई मेरी भर्त्सना करो। मुझको भी ढंग आता है। मुझे भाई कहने से काम न चलेगा। सच बताओ किसके सम्मोहन में फंस कर यह कह रही हो ?"

"बता तो दिया है। मैं उस भूल की पुनरावृत्ति नहीं करना चाहती। मुझको पहले भी गर्भ रह गया है।"

रोशन किंकर्तव्यविमूढ़-सा खड़ा रह गया। कुछ बोला नहीं। छाया ने पूछा, "बोलो। चुप क्यों हो गए। कह दो किसी और का होगा। शर्म नहीं आती। पति बनने के स्वप्न देख रहे थे। धनी मित्र के टुकड़ों पर पलने वाले स्वार्थी। काश ! तुमने पहले दिन ही मुझको बहिन न माना होता। आज मेरी मानसिक अवस्था ऐसी उद्विग्न न होती। बताओ। अब क्या करोगे ?"

रोशन के पांव तले से भूमि खिसकने लगी। वह विचार करने के हेतु कुर्सी पर बैठ गया। उसके माथे से पसीना चू रहा था। छाया व्यंग्य भरी मुस्कान से उसके अन्तर में चल रहे बवण्डर को समझ रही थी। वह सोचती जीवन का आनन्द लूटना कितना सुलभ है, कितना सुखप्रद है पुरुष के लिए नारी के साथ एकान्तवास। किन्तु जीवन की समस्याओं से जूझना कितना कठिन है ! रमेश भी धनीवर्ग की सुन्दरी देख अपनी पहली सहवासिन को त्यागने के लिए तैयार हो गया।

यह बाल्य-काल का साथी गर्भ की बात सुन ऐसे घबरा गया है मानों सट्टे में सर्वस्व हार गया हो।

क्या यह नारी की ही दुर्बलता है जो इन जैसे स्वार्थियों की प्रत्येक इच्छा के समक्ष समर्पण करती है ? छाया मौन धारण किये रोशन के उत्तर की प्रतीक्षा करती रही। रोशन की समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करे ? वह छाया के साथ एकान्तवास कर सेठ गोपालकृष्ण की नौकरी तथा रमेश की मित्रता का लाभ अनिश्चित काल तक उठाने के लिए तैयार है। वह चाहता है कि छाया सबकी दृष्टि में बहिन होते हुए भी उसकी सहवासिन बनी रहे किन्तु गर्भ ठहरने की सम्भावना पर न उसने विचार किया और न अब इस समस्या से जूझने के लिए वह अपने मन को दृढ़ कर सका। वह सोचता यदि छाया को लेकर पृथक रहने लगे तो लाहौर में यह सम्भव न हो सकेगा। गोपालकृष्ण भी कदाचित उससे सर्वथा सम्बन्ध तोड़ने को तैयार न होंगे। वे शायद उसे दूर जाने भी न देंगे। जब छाया को बच्चा हो जायेगा तो वह क्या मुख दिखायेगा। इस नकली पिता-पुत्री का स्नेह उसके लिए जहाँ हानिकारक सिद्ध हुआ है, वहाँ गर्भ की बात गोपालकृष्ण को पता चलने पर दोनों को हानि हो सकती है। उसकी नौकरी भी जायेगी और दोनों को जूते लगा कर कोठी से निकाल दिया जायेगा। रोशन विचार करता कि उसके लिए एक ही रास्ता खुला है। छाया को लेकर कहीं अन्यत्र भाग जाये। वहाँ जीविका के लिए पुनः नौकरी करे और छाया के साथ गृहस्थी का सुख भोगे। इसके लिए धन की आवश्यकता थी फिर जो सुख और आराम उसे इस कोठी में मिल सकता था उसका मोह उसके स्नायुओं को जकड़े हुए था।

बार-बार मनन करने पर एक बात समझ आती कि केवल रमेश ही सहायता कर सकता है। न जाने छाया के विषय में उसका मन रमेश से सहायता माँगने को क्यों न करता था। वह धनी है। कदाचित सहायता का कुछ मूल्य माँगे। रोशन के मस्तिष्क पर दबाव पड़ता कि

वह छाया को पहले भी साड़ियाँ लेकर देता रहा है तो अवश्य उसकी अनुपस्थिति में छाया जैसी भोली लड़की का लाभ उठाया होगा। छाया में परिवर्तन भी उसकी अनुपस्थिति में हुआ। अतः वह रमेश को अपनी कठिनाई बताने तथा सहायता लेने का साहस न कर सका।

रोशन के विचारों ने फिर पलटा खाया। वह सोचने लगा सम्भव है रमेश अब उससे कोई सहानुभूति न रखता हो। कदाचित उसने इसलिए तार दिया कि छाया उदास है। उसे शीघ्र लौटना चाहिए। रमेश की सगाई का तो तार में उल्लेख ही नहीं था। अवश्य कुछ गड़बड़ है। इस प्रकार सोचता हुआ रोशन रमेश की मित्रता को हीन समझने लगा। हतोत्साहित-सा वह छाया से पूछ बैठा, "रमेश तुम्हारी इस अवस्था को जानता है ?"

"नहीं, उसको मैं कैसे बता सकती हूँ।" छाया ने सतर्क होकर उत्तर दिया।

रोशन फिर विचार करने लगा। दोनों के मध्य झूठ और बनावट की इतनी सुदृढ़ प्राचीर आ गई थी कि उसको विध्वंस किये बिना उनका परस्पर पति-पत्नी के रूप में जीवन यापन करना असम्भव सा लगता था। बहुत देर तक सोचने के पश्चात् उसको किसी डाक्टर, वैद्य की सहायता लेने से आशा की कुछ झलक दिखाई देने लगी। उसने साहस बटोर कर कहा, छाया! मैं किसी हकीम या डाक्टर से मिल कर तुम्हारे लिए दवाई ला दूँगा। इस अवस्था में मैं तुमको पृथक रखने में भी लाभ नहीं समझता। भेद खुल ही जायेगा।"

"तो तुम भ्रूण-हत्या करोगे ?" छाया तमक कर बोली।

"ऐसा न करोगी तो समाज तुम्हारी हत्या कर देगा। मेरा-तुम्हारा तो जन्म जन्मान्तर का साथ है।"

"तुम भीरु हो रोशन। तुम्हें तो अपनी नौकरी का भय है परन्तु मेरे प्राण जाने का डर है। मैं उसकी हत्या नहीं करूंगी।"

"और अपनी मूर्खता की डुग्गी पीटोगी। एक दिन धक्के मार कर तुम्हें यहां से निकाल दिया जावेगा।"

छाया मौन रही। उसने कुछ उत्तर नहीं दिया। वह यह निर्णय करने में भी समर्थ नहीं थी कि गर्भ रोशन का है अथवा रमेश का। गर्भपात कराने से होने वाले बच्चे के पिता की समस्या जहाँ हल होने वाली थी, वहाँ स्वयं बदनामी से बच जाती। एक बार तो उसने भी सोचा, सुझाव तो अच्छा है। उसके अनन्तर ऐसी भूल न करेगी। उसने पूछा, "किस डाक्टर से दवाई लाओगे?"

"पता करूँगा। मैं किसी से परिचित तो हूँ नहीं। हमें रमेश की सुसराल से एक सौ दो रुपये मिले हैं। उस धन राशि से हम इस मुसीबत से छुट्टी पा सकेंगे।"

: ६ :

उस रात रोशन छाया के कमरे में ही सोया। दोनों में कोई परस्पर बात नहीं हुई। दोनों के दिमाग इस नवीन समस्या को सुलझाने में लगे थे। रोशन यह निर्णय कर कि गर्भपात कराना ही सबसे उत्तम उपाय है, निद्रा में लीन हो गया।

अगले दिन वह कार्यालय से जल्दी छुट्टी लेकर लाहौर की सड़कें नापने लगा। जहां कहीं भी बोर्ड पढ़ता, सोचने लगता। वह घूमता हुआ लाहौरी दरवाजे जा पहुँचा। वहाँ दो चार हकीमों की दुकानें थीं। एक दुकान पर रुक कर बोर्ड पढ़ने लगा। लिखा था स्त्री-पुरुषों के गुप्त रोगों का इलाज यहाँ तसल्लीबख्श किया जाता है। बाँझपन का शर्तिया इलाज।

रोशन विचार करने लगा, उसे तो गर्भ गिराने के लिए दवा चाहिए। हकीम साहब चश्मा लगाये अकेले बैठे थे। रोशन सुअवसर जान परामर्श के लिए दुकान के भीतर चला गया।

"आइए बाबूजी।" हकीम ने चश्मे को ठीक करते हुए कुर्सी की ओर संकेत किया।

रोशन कुर्सी पर बैठ तो गया, किन्तु उसके दिल की धड़कन तेज़ हो गई। घबराहट के मारे आवाज़ नहीं निकली। हकीम ने कहा, "घबराओ नहीं बेटा! साफ-साफ कहो। हम किसी दूसरे को अपने

मरीजों का हाल नहीं बताते ।"

"जी। स्त्री को......" आगे कुछ नहीं कह सका।

"तुम्हारी स्त्री को कोई रोग है ?"

"जी नहीं। गर्भ हो गया है।" रोशन ने साहस बटोर कर कहा।

"अब समझा।" हकीम साहब कुर्सी से उठ खड़े हुए और चश्मा उतार कर मेज पर रखते हुए बोले, कभी न फेल होने वाली अक्सीर दवा है हमारे पास। शर्तिया लड़का होगा। कितने मास का गर्भ है।"

"अभी कुछ दिन ही हुए हैं मगर मैं तो.......।"

"तुम चिन्ता मत करो। आज़मा कर देखो नहीं तो दाम वापिस।" हकीम ने बीच में ही बात को टोकते हुए कहा और औषधि तैयार करने लगा।

रोशन की घबराहट बढ़ने लगी उसने पुनः बोलने की चेष्टा की। "हकीम साहब। मुझे तो गर्भ गिराने की दवा चाहिए।"

"क्या कहा ?" हकीम के हाथ वहीं रुक गए।

"जी ! वह बच्चा नहीं चाहती।"

हकीम पुनः कुर्सी पर बैठ गया। रोशन को सिर से पाँव तक देखा।

"शादी हो गई है बरखुरदार ?"

"नहीं।" रोशन ने नकारात्मक सिर हिला दिया।

"हूँ। समझ गया।" हकीम ने एक घृणात्मक दृष्टि रोशन पर फेंकते हुए कहा।

रोशन झेंप गया। उसको समझ आया कि वह गलत दुकान पर आ गया है। वह उठ कर जाने ही वाला था कि हकीम ने उसकी ओर झुक कर कहा, "देखो लड़के। गर्भपात कराना कानूनी अपराध है। लेकिन तुम्हारी कठिनाई को मैं समझ रहा हूँ। दवाई ले जाओ मगर किसी को बताना मत। तीन दिन खानी होगी। सब साफ हो जायेगा।"

रोशन कृतज्ञ नेत्रों से हकीम को देखने लगा। हकीम ने एक पुड़िया

में बाहर गोलियाँ बाँध दीं और रोशन की ओर बढ़ाता हुआ बोला, "यह लो। इतनी ही काफी हैं। चार गोलियाँ एक दिन में—पानी के साथ तीन-तीन घण्टे बाद। पूरा कोर्स है। कोई कष्ट न होगा।"

रोशन ने दाम पूछे तो वह बोला, "केवल बारह रुपये। लोगों से बीस लेता हूँ। तुम अभी नासमझ हो। फिर ऐसी हरकत मत करना।"

बारह रुपये देकर रोशन विदा हुआ। मार्ग में वह हकीम की प्रशंसा करता हुआ विचार कर रहा था कि छाया की बात ठीक है। ऐसी भूल पुनः नहीं करेगा अन्यथा फिर ऐसी मुसीबत में फँस जायेंगे। घर पहुँच कर उसने छाया को दवाई दी और खाने की विधि भी बता दी। साथ ही वह हकीम की योग्यता की प्रशंसा करने लगा जैसे उसको विश्वास हो कि यह दवाई अवश्य सफल होगी।

छाया ने भी औषधि इस कारण सेवन करनी आरम्भ कर दी कि इस पाप-पिण्ड से मुक्ति पाना चाहती थी। तीन दिन बीत गए, किन्तु कुछ लाभ नहीं हुआ, प्रत्युत उसको मचली होने लगी। मन उलटी करने को करता और भूख कम होने लगी। शरीर में आलस्य छा गया और कुछ खाने में अरुचि-सी हो गई। वह दिन भर लेटी रहती—एक रोगी की भाँति।

रोशन अधिक चिन्तित हो गया। छाया को जब लाभ नहीं हुआ तो उसने रोशन अथवा रमेश से बात करनी ही बन्द कर दी। रोशन को छाया के प्रति अधिक रोष जा। वह अब रमेश के साथ भी कहीं घूमने नहीं जाता था।

रमेश एक दिन दोपहर को कार्यालय से कोठी पर आया और छाया के सम्मुख अपनी स्थिति स्पष्ट करने का यत्न किया, जैसे वह सर्वथा निर्दोष हो।

छाया उस समय उद्विग्न मन अपनी माँ की स्मृति में खोई हुई थी। उसके लम्बे सूक्ष्म बालों की चोटी पलँग से नीचे की ओर ऐसे लटक रही थी कि फर्श पर बिछे सुन्दर कालीन का चुम्बन करना

चाहती हो। उसकी बड़ी-बड़ी सुन्दर आँखों के कोर गीले दिखाई दे रहे हैं मानो आँसू बाहर उछल पड़ने के लिए व्याकुल हो रहे हों।

बस ! आँसू बाहर आना ही चाहते हैं किन्तु उन्हें आज्ञा नहीं मिली। एकाएक स्प्रिंग वाला द्वार खुला और रमेश ने मधुर मुस्कान के साथ छाया के मुखड़े पर अपनी दृष्टि गाढ़ दी। उसने बात आरम्भ करने के लिए कहा, "देखता हूँ चाँद को बादलों ने घेर रखा है।"

छाया पलंग पर ही उठ कर बैठ गई। यह अभिवादन था अथवा मन में आदर की भावना, कहना कठिन है। दोनों ने एक दूसरे को देखा। मुख से मन के भाव पढ़ने का यत्न किया। छाया के नेत्र झुक गए। धीमे स्वर में पूछा, "इस समय कैसे आ गए, रमेश बाबू ?"

"तुम्हें देखने। आज 'साईट' पर नहीं गया। यहाँ तुम्हारे पास चला आया हूँ।"

"इसकी आवश्यकता थी क्या ?" दृष्टि नीचे किये छाया ने कहा।

"हाँ ! मेरा मन कर आया। यहाँ आकर देखता हूँ तुम बहुत उदास हो। तुम्हारी आँखों में आँसू देख तो मैं डर गया। रोने के लिए क्या तुम ही रह गई हो। रोएँ तुम्हारे दुश्मन।"

"मुझे आज माँ की याद आ रही है, रमेश !"

"तुम माँ को पीछे छोड़ आई हो ?" रमेश आश्चर्यजनक दृष्टि से छाया को देखने लगा था।

छाया ने उसके हाव-भाव देखे। मां के वियोग की कल्पना पर धनी बाप का बेटा भी तड़प सकता है। छाया को विस्मय हुआ। उसने पूछा, "तुम नहीं जानते क्या ?"

"नहीं ! यह आज पता चला। ऊफ़ ! कई मास बीत गए ! ! तुम्हारी माँ कैसे जीवित रही होगी !"

छाया ने दृष्टि उठाई। यह देखने के लिए कि रमेश पहले की भाँति अभिनय कर रहा है अथवा उसके सीने में रखे हृदय में कुछ हो रहा है। उसने देखा कि रमेश के नेत्र भी सजल थे।

रमेश की माँ नहीं है। शैशव से वह धन के सम्बल से आया की गोद में पल कर बड़ा हुआ है। कदाचित इस कारण माँ शब्द उसके मर्म-स्थल को छू गया है। वह मौन बैठी रही। रमेश खड़ा था। वह छाया को चुप देख उसके समीप पलंग पर ही बैठ गया।

"रोशन तो कहता था तुम्हारी माँ नहीं है। इसलिए मुझे तुमसे अधिक सहानुभूति हो गई थी।"

"काश ! वह तुमसे झूठ न कहता और तुम्हें कृत्रिम सहानुभूति न होती।" छाया ने एक दीर्घ निःश्वास छोड़ते हुए कहा।

रमेश ने छाया का हाथ दबाते हुए कहा, "यह गलत है। सहानुभूति कृत्रिम नहीं। मेरा प्रेम भी कृत्रिम नहीं।" इतना कह कर उसने पकड़े हुए हाथ का स्पर्श अपने कपोल से किया। छाया ने हाथ छुड़ा लिया। "छाया ! तुम विश्वास रखो। लेकिन एक बात का अभी भी मुझको विश्वास नहीं आता, तुम इतने काल तक माँ को भूली कैसे रहीं। क्या सचमुच तुम कठोर हृदय हो ?" रमेश भावुकता में बह चला।

"तुमने भुलाये रखा। धोखा ! साफ धोखा।" विचित्र दृष्टि से देखती हुई छाया आवेश में आ गई।

रमेश पलंग से उठ खड़ा हुआ।

"छाया ! मैं धोखा किसी से नहीं करता। पापा कलकत्ते से लौट आयें, मैं तुम्हें तुम्हारी माँ के पास छोड़ आऊँगा।" इतना कहकर वह पागलों की भाँति तेज़ी से पग उठाता कमरे से बाहर चला गया।

छाया फूट पड़ी। आँसू अविरल बहने लगे। धोखे के बाद धोखा। 'किस मुख से माँ के सामने जाऊँगी।' वह बुदबुदाई और तकिये में मुख छुपा रोती रही। आँसू थमने को न आते थे। पन्द्रह मिनट तक यही क्रम चला। आँखें फूल गयीं। वह पुनः सोचने लगी सिर पीड़ा से फट रहा था। किसी निर्णय पर उसकी बुद्धि टिक न रही थी। वह किस पर दोष लगाये। रोशन को अथवा रमेश को ? परिस्थितियाँ ही ऐसी बन गयीं। वह परिस्थितियों का मुकाबला न कर सकी। अब इस पाप के पिण्ड से कैसे मुक्ति प्राप्त करे ? उसे कोई मार्ग न सूझता था।

आत्म-हत्या ही इस नरक की यातना से बचने का एकमात्र उपाय समझ आता था। उसका कोई साथी नहीं था। रोशन उसको पत्नी बनाने का इच्छुक था। उसने उसे भाग चलने का सुझाव दिया था। वह संध्या को घर आया और छाया को पहले की अपेक्षा अधिक चिन्तित और उदास देख पुनः उसको लाहौर से भाग चलने का विचार बताया। छाया ने पूछा, "यह कैसे सम्भव है ?"

"जैसे रावलपिण्डी में हुआ। यहाँ तो अधिक सरल है। सेठजी कलकत्ते गए हुए हैं। कोठी में हम अकेले हैं। रमेश के जाने के अनन्तर मैं टैक्सी ले जाऊँगा और चुपचाप चल देंगे। रमेश के लिए मैं पत्र छोड़ जाऊँगा। वह समझ जायेगा।"

"नहीं रोशन ! मेरा मन किसी पर विश्वास करने को तैयार नहीं होता।"

इस दो टूक उत्तर ने तो रोशन का मुख बन्द कर दिया। उसका रहा-सहा उत्साह जाता रहा। उसका मन बुझ-सा गया। अब वह छाया से स्वयं दूर चले जाने में भलाई समझने लगा अन्यथा बहिन से सहवास के अपराध में उसका अनिष्ट हो सकता था। वह एक दिन लंच के समय हलवाई की दुकान पर दूध पी रहा था कि किसी ने उसके कंधे पर हाथ रखा। रोशन ने घूम कर देखा। यह मुनीम हंसराज था। अपनी पैनी दृष्टि से उसको घूर रहा था जैसे जेहलुम स्टेशन पर छाया द्वारा डिब्बे में प्रवेश करने पर रोशन ने अनुभव किया था। उसने मुनीम का अभिवादन किया। "आओ, मुनीम जी ! दूध पीजिए।"

दोनों दूध पीकर लौट रहे थे। हंसराज ने बात आरम्भ की। "अब तो छाया को उलटियाँ होने लगी हैं। एक और प्राणी कोठी में आने वाला है। न शादी, न ब्याह और न कोई दावत हुई मगर बच्चे की आमद की गूंज मची है, रोशन बाबू। सबके मुंह पर रमेश का नाम है।"

रमेश का नाम सुन रोशन काँप उठा। अंधेरा छा गया उसकी आँखों के सम्मुख। बैठ गया वह एक पुलिया पर। क्रोध से

काँपता हुआ। अपने मन में उठे उद्‌गारों को नियन्त्रण में रख, उसने मुनीम की ओर देखा, कुछ उत्तर देने के निमित्त।

परन्तु मुनीम जा चुका था। जिस वार ने गोपालकृष्ण पर काम न किया, रोशन पर गहरा प्रभाव डाला। किन्तु प्रतिक्रिया वैसी नहीं हुई जिसकी आशा मुनीम हंसराज सदृश्य कुटिल व्यक्ति करता था।

रोशन का हृदय विषण्ण हो गया। वह सोचने लगा क्या यह गर्भ रमेश का है? इस कारण उसने सगाई भी कर ली। क्या छाया ने उसके साथ भागने के लिए यही सोच कर, इन्कार कर दिया कि वह बच्चा उसका नहीं? रोशन के मस्तिष्क में आँधी चल पड़ी। उसको छाया के शब्द 'मेरा मन किसी पर विश्वास करने को तैयार नहीं होता' स्मरण हो आये। छाया के मन में चोर है। उसका अन्तरात्मा दोषी है। उसे सन्देह है कि मैं बच्चे का रहस्य खुलने पर उसको छोड़ दूँगा।" रोशन पूर्ण स्थिति को समझने का प्रयास करता हुआ एक अज्ञात दिशा को चलता गया। अब कोठी अथवा दफ्तर में उसके लिए कुछ भी आकर्षण नहीं था। उसे हँसराज की बात में सार प्रतीत हुआ। छाया के गर्भ में बच्चा अवश्य रमेश का है। दोनों ने उसे उल्लू बनाया है। ऐसे कमीने लोगों के वह क्यों मुंह लगता फिरे।

एक मील पैदल चलने के पश्चात् वह एक 'रिक्रूटिंग आफिस' के सामने रुक गया। बहुत लम्बे चौड़े बोर्ड पर सिख सिपाही का चित्र बना था और नीचे लिखा था—'अच्छा वेतन, अच्छी गिज़ा और उज्ज्वल भविष्य।'

रोशन अन्यमनस्क-सा कार्यालय के भीतर चला गया। वह कुछ पूछने ही वाला था कि एक लम्बे-तगड़े पुरुष ने उसको सम्बोधन कर कहा, "आइए भाई साहब! आज भीड़ ज्यादा नहीं है। शीघ्र काम हो जायेगा। वर्दी, राशन और रहने को खुला स्थान—सब कुछ फ्री। फिर दुनिया की सैर मुफ्त। ऐसा अवसर फिर न मिलेगा। सबसे बढ़ कर देश की सेवा।"

रोशन ने मुस्कराने का यत्न किया। एक बार छाया ने उससे न

बोलने की शपथ लेकर उसे भर्ती होने से रोक दिया था। अब छाया की अनिच्छा तथा तिरस्कार उसको यहाँ तक खींच लाया था। वह अभी विचार ही कर रहा था कि उसी भद्र पुरुष ने हाथ पकड़ कर कहा, "आइये देर मत करो वरना डाक्टरी आज न हो पायेगी। समय कम रह गया है।"

रोशन उसके साथ खिचा चला गया। एक फौजी वर्दी पहने अफसर ने उससे नाम, धाम, जाति और शिक्षा इत्यादि सबका विवरण पूछा और एक फार्म भर उससे हस्ताक्षर करवा लिये। तत्पश्चात् उसका नाप-तोल हुआ। क़द, छाती, भार आदि देखकर लिख लिया गया। डाक्टर ने डाक्टरी मुआयना किया और सब कागजात भर कर उसे सैनिक गाड़ी में बिठाकर 'मिलिट्री यूनियन' में भेज दिया। वहाँ क्वार्टर-मास्टर से वर्दी का पूरा 'किट' मिल गया और उसे मैस में भोजन कराया गया।

उस रात गोपालकृष्ण की कोठी में भोजन की मेज़ पर रोशन का स्थान रिक्त पड़ा था। रोशन सैनिक शिविर में उस रात सो नहीं सका। अगले दिन प्रातः हवालदार मेजर ने उसको जगाया और वह अन्य रिकरूटों के साथ परेड का ढंग सीख रहा था।

दिन भर सैनिक के कठोर प्रशिक्षण कार्यक्रम के अनुसार वह परिश्रम करने से थककर चूर हो जाता और रात्रि को लेटते ही उसे नींद आ जाती। छाया के बारे में सोचने का न अवकाश था और न शक्ति। प्रातः उठकर परेड पर भागना पड़ता।

तीन दिन के उपरान्त उसको महू के फौजी कैम्प में भेज दिया गया। जब वह दूसरे दिन भी कोठी अथवा कार्यालय नहीं आया तो रमेश ने उसका पता लगाने का यत्न किया। गोपालकृष्ण कलकत्ते से लौटा तो उसे भी रोशन के भाग जाने की सूचना दी गई। पूछताछ करने पर अन्त में उन्हें पता चल गया कि रोशन सेना में भरती हो, म[ह]ू चला गया है।

छाया का दुखी होना स्वाभाविक था। फिर दुनियादारी भी तो

रखनी थी। रमेश जानता था कि छाया को उसका दुख नहीं है। उसने तो बहुत पहले रोशन को हृदय से निकाल दिया था यदि उसकी अपनी सगाई तारा से न होती तो छाया उसकी अभी तक सहवासिन होती। इस पर भी रमेश को रोशन के लिए सहानुभूति थी जिसने चतुराई से प्रेमिका के रहस्य को ही केवल प्रकट नहीं होने दिया, प्रत्युत अपने मित्र का भी मान रख लिया।

किन्तु वह छाया के लिए एक नासूर छोड़ गया। छाया इसका दोषारोपण रोशन पर करे तो पापा कदाचित उसे क्षमा कर दें। कोई भाई बहिन से बलात्कार करे तो अबला क्या कर सकती है। रमेश की इच्छा थी कि छाया उसको क्षमा कर एक मित्र की भाँति रहे ताकि वह उसका भोग कर सके। वह पापा को छाया की विवशता तथा रोशन के कुकृत्य के विषय में अवगत कराने के लिए अवसर खोजने लगा।

हँसराज उससे पहले बाज़ी मार ले गया। रोशन का पता करने के लिए भी गोपालकृष्ण ने उसको भेजा था। हंसराज ने जहाँ रोशन के सेना में भरती होकर महू चले जाने की बात बताई, वहाँ यह भी रहस्योद्घाटन किया। उसने बताया, "छाया गर्भ धारण कर चुकी है। भाई के लिए बहिन की यह अवस्था असह्य हो गई तो वह छाया को आपके आश्रय छोड़ फौज में चला गया।"

गोपालकृष्ण को मुनीम द्वारा रमेश पर लगाये पहले आरोप की भी याद आ गई। अब उसको समझ आया कि मुनीम यह सब उत्तरदायित्व रमेश के गले मढ़ कर सिद्ध करना चाहता है कि यह गर्भ रमेश का है। वह एक नीति-कुशल ठेकेदार था। पूर्ण जाँच करने के उपरांत इस मुँहफट मुनीम से छुट्टी पाने की बात सोचने लगा।

इसी बीच एक और घटना घटी। एक इमारत के निर्माण पर किसी मिलिट्री इंजीनियर से गोपालकृष्ण का मतभेद हो गया। मतभेद उग्र

रूप धारण कर गया तो ठेकेदार को काम बन्द करना पड़ा। इंजीनियर इन्चार्ज ने चीफ इंजीनियर को रिपोर्ट कर दी और कार्य निश्चित तिथि तक पूरा न होने के कारण उस पर जुर्माना हो गया। जमानत जब्त हो गई। सारा मामला आर्बीट्रेटर (मध्यस्थ) के पास चला गया। गोपालकृष्ण को काम बन्द रहने के कारण डेढ़ लाख की हानि हुई और इतनी ही धन-राशि का भुगतान रोक दिया गया।

इस सब हानि का बोझ गोपालकृष्ण के मस्तिष्क पर इतना अधिक हुआ कि उसका रक्तचाप बढ़ गया। डाक्टरों ने उन्हें विश्राम करने को कहा। छाया उनकी सेवा शुश्रूषा करने लगी।

रमेश पिता के सब काम देखने लगा। 'आर्बीट्रेशन' के लिए सब तैयारी रमेश के विचाराधीन होने लगी। गोपालकृष्ण को पूर्ण विश्राम की आवश्यकता थी। छाया एक पुत्री की भाँति उनकी सेवा कर रही थी। जिस दिन उनकी तबीयत खराब हुई, छाया बहुत रोई। वह जानती थी उनके अतिरिक्त कोई भी उसका हितचिन्तक नहीं। वह जिस लगन से उनकी सेवा-शुश्रूषा करती थी, देखने वालों को विस्मय होता था।

गोपालकृष्ण इस अवस्था में छाया से कुछ पूछ कर उसको दुःखी नहीं करना चाहता था। उसकी उदारता और धर्मपरायणता ने उसको यह विचार करने पर विवश कर दिया कि छाया के साथ कैसी भी घटना घटी हो, छाया क्षमा और दया की पात्रा है। यदि रमेश की कुटिलता के कारण वह गर्भ भार सहन कर रही है तो मानवता की माँग है कि वह छाया की सहायता करे। वह धर्म संकट में फँसा, बिस्तर पर लेटा-लेटा मनन करता रहता था। छाया के मुख और शरीर में परिवर्त्तन देख वह अति चिन्तित था। इस पर भी छाया का उसकी सेवा में रत रहना अधिक प्रभावशाली सिद्ध हो रहा था। उसके स्वास्थ्य में भी सुधार हो रहा था।

गोपालकृष्ण की बुद्धि कहती यदि रमेश ही छाया की इस अवस्था के लिए उत्तरदायी है, तो रमेश की सगाई टूट सकती है और वह

इसे ठीक नहीं समझता था। वह इस बात के कुख्यात होने से पहले रमेश का विवाह कर देना चाहता था। लाला सन्तराम, उसकी पत्नी और तारा उसे देखने आये तो उसने स्वयं बात चला दी, "लालाजी! जीवन का कुछ भरोसा नहीं। आप पण्डित से पूछ कर शीघ्र तिथि निश्चित कर दीजिए। आब्रीट्रेशन एक मास तक बैठेगी। मैं इससे पूर्व रमेश का विवाह कर देना चाहता हूँ।"

लाला सन्तराम स्वयं इस प्रसंग को उठाने की बात विचार कर ही रहा था। गोपालकृष्ण की बात सुन उसने कह दिया, "इस मास की अठारह तारीख पण्डित ने बताई है। आपको असुविधा न हो तो यह शुभ कार्य हो जाना चाहिए। आज तीन तारीख है। दो सप्ताह पड़े हैं।"

"मुझे स्वीकार है।"

इस प्रकार रमेश का विवाह निश्चित हो गया। अगले दिन गोपालकृष्ण ने मुनीम को बुला कर एकान्त में कहा, "मुनीम जी! यह लीजिए सौ रुपये बच्चों के वस्त्रों के लिए। रमेश का विवाह निश्चित हो गया है और सब काम आपको करना होगा। जब हम पर सरकार की ओर से संकट आया है, मैं चाहता हूँ आप पुराने कर्मचारी और साथी होने का प्रमाण दें कि आप नमकहराम नहीं हैं।"

मुनीम हंसराज सौ रुपये का नोट पकड़ कृतज्ञ नेत्रों से अपने स्वामी की ओर देखते हुए बोला, "सेठजी! मेरी जान चली जाए, पर मैं नमकहरामी नहीं करूँगा।"

"तो प्रोपेगेण्डा बन्द कर दीजिए।"

"मैंने केवल आपकी भलाई के लिए आपसे कहा था। किसी बाहर के आदमी से मैंने कभी कुछ नहीं कहा। छाया को एक दिन मैंने उलटी करते देखा तो मुझ को शंका हुई। पहले भी मैंने आपको अपना सन्देह बताया था कि रोशन छाया का भाई नहीं। मैंने ही रोशन को यह सूचना दी कि कोठी में एक नया जीव आने वाला है। कदाचित इसलिए वह डर के मारे भाग गया और फौज में भरती हो

धारण कर गया तो ठेकेदार को काम बन्द करना पड़ा। इंजीनियर
ार्ज ने चीफ इंजीनियर को रिपोर्ट कर दी और कार्य निश्चित तिथि
पूरा न होने के कारण उस पर जुर्माना हो गया। जमानत जब्त
गई। सारा मामला आर्वीट्रेटर (मध्यस्थ) के पास चला गया।
ालकृष्ण को काम बन्द रहने के कारण डेढ़ लाख की हानि हुई
र इतनी ही धन-राशि का भुगतान रोक दिया गया।

इस सब हानि का बोझ गोपालकृष्ण के मस्तिष्क पर इतना अधिक
ा कि उसका रक्तचाप बढ़ गया। डाक्टरों ने उन्हें विश्राम करने
कहा। छाया उनकी सेवा शुश्रूषा करने लगी।

रमेश पिता के सब काम देखने लगा। 'आर्बीट्रेशन' के लिए सब
यारी रमेश के विचाराधीन होने लगी। गोपालकृष्ण को पूर्ण
श्राम की आवश्यकता थी। छाया एक पुत्री की भाँति उनकी सेवा
र रही थी। जिस दिन उनकी तबीयत खराब हुई, छाया बहुत रोई।
ह जानती थी उनके अतिरिक्त कोई भी उसका हितचिन्तक नहीं।
वह जिस लगन से उनकी सेवा-शुश्रूषा करती थी, देखने वालों को
विस्मय होता था।

गोपालकृष्ण इस अवस्था में छाया से कुछ पूछ कर उसको दुःखी
नहीं करना चाहता था। उसकी उदारता और धर्मपरायणता ने
उसको यह विचार करने पर विवश कर दिया कि छाया के साथ कैसी
भी घटना घटी हो, छाया क्षमा और दया की पात्रा है। यदि रमेश की
कुटिलता के कारण वह गर्भ भार सहन कर रही है तो मानवता की
माँग है कि वह छाया की सहायता करे। वह धर्म संकट में फँसा, बिस्तर
पर लेटा-लेटा मनन करता रहता था। छाया के मुख और शरीर में
परिवर्तन देख वह अति चिन्तित था। इस पर भी छाया का उसकी
सेवा में रत रहना अधिक प्रभावशाली सिद्ध हो रहा था। उसके
स्वास्थ्य में भी सुधार हो रहा था।

गोपालकृष्ण की बुद्धि कहती यदि रमेश ही छाया की इस अवस्था
के लिए उत्तरदायी है, तो रमेश की सगाई टूट सकती है और वह

इसे ठीक नहीं समझता था। वह इस बात के कुख्यात होने से पहले रमेश का विवाह कर देना चाहता था। लाला सन्तराम, उसकी पत्नी और तारा उसे देखने आये तो उसने स्वयं बात चला दी, "लालाजी ! जीवन का कुछ भरोसा नहीं। आप पण्डित से पूछ कर शीघ्र तिथि निश्चित कर दीजिए। आर्बीट्रेशन एक मास तक बैठेगी। मैं इससे पूर्व रमेश का विवाह कर देना चाहता हूँ।"

लाला सन्तराम स्वयं इस प्रसंग को उठाने की बात विचार कर ही रहा था। गोपालकृष्ण की बात सुन उसने कह दिया, "इस मास की अठारह तारीख पण्डित ने बताई है। आपको असुविधा न हो तो यह शुभ कार्य हो जाना चाहिए। आज तीन तारीख है। दो सप्ताह पड़े हैं।"

"मुझे स्वीकार है।"

इस प्रकार रमेश का विवाह निश्चित हो गया। अगले दिन गोपालकृष्ण ने मुनीम को बुला कर एकान्त में कहा, "मुनीम जी ! यह लीजिए सौ रुपये बच्चों के वस्त्रों के लिए। रमेश का विवाह निश्चित हो गया है और सब काम आपको करना होगा। जब हम पर सरकार की ओर से संकट आया है, मैं चाहता हूँ आप पुराने कर्मचारी और साथी होने का प्रमाण दें कि आप नमकहराम नहीं हैं।"

मुनीम हंसराज सौ रुपये का नोट पकड़ कृतज्ञ नेत्रों से अपने स्वामी की ओर देखते हुए बोला, "सेठजी ! मेरी जान चली जाए, पर मैं नमकहरामी नहीं करूँगा।"

"तो प्रोपेगेण्डा बन्द कर दीजिए।"

"मैंने केवल आपकी भलाई के लिए आपसे कहा था। किसी बाहर के आदमी से मैंने कभी कुछ नहीं कहा। छाया को एक दिन मैंने उलटी करते देखा तो मुझ को शंका हुई। पहले भी मैंने आपको अपना सन्देह बताया था कि रोशन छाया का भाई नहीं। मैंने ही रोशन को यह सूचना दी कि कोठी में एक नया जीव आने वाला है। कदाचित इसलिए वह डर के मारे भाग गया और फौज में भरती हो

गया। यदि आप हुक्म दें तो मैं छाया को वाहर ले जाऊँगा। प्रसव का प्रवन्ध करवा दूँगा। इस प्रकार हम सब वदनामी से वच जायेंगे।"

"नहीं! इसकी आवश्यकता नहीं। आप अपनी ज़वान वन्द रखें, मैं केवल इतना चाहता हूँ।"

"जो हुक्म सरकार! आप निश्चिन्त रहें।" हंसराज अपनी वफ़ादारी का आश्वासन दे चला गया।

लाला गोपालकृष्ण छाया को दोषी नहीं मानता था। अतः उसको कोठी से निकालने की वात विचार नहीं सका। वह सव कुछ भगवान पर छोड़ देना चाहता है। कर्मों के फल से वचना असम्भव है। इस कारण छाया को छुपाना उसको अच्छा नहीं लगा और न ही उसने छाया से कुछ पूछने की आवश्यकता समझी।

छाया से उसका व्यवहार भी पहले जैसे था। प्रत्युत अधिक नम्र और मधुर हो गया था। जव वह स्वयं सामान्य अवस्था में हुआ तो एक लेडी डाक्टर छाया के लिए नियुक्त कर दी। वह उसका निरीक्षण कर दवाई देकर चली गई। सप्ताह में एक दिन उसको देखने आ जाती थी।

छाया के विस्मय का पारावार न रहा। वह लालाजी की उदारता पर प्रायः मनन करती रहती। कुछ पूछने का उसे भी साहस न होता।

आखिर वह दिन आ गया जव रमेश की वारात तैयार हो रही थी। छाया उस दिन रो रही थी। गोपालकृष्ण ने उससे कहा, "वेटी! भूल भी इन्सान से होती है। जव तक मैं जीवित हूँ तुम्हारी प्रतिष्ठा पर आँच न आयेगी। रोशन ने तुमसे धोखा किया है। उससे प्रतिकार का विचार छोड़ तुम्हें अपने स्वास्थ्य का ख्याल रखना चाहिए।"

छाया वह सुनकर स्तव्ध रह गई। क्या रमेश ने लालाजी को सव कुछ वता दिया है? अपने आप से प्रश्न किया। वे क्या सोचते होंगे कि छाया कितनी नीच है। कोई पिता पुत्री की चरित्रहीनता की गाथा नहीं सुन सकता। उन्होंने उससे पूछा तक नहीं। उसको

अपनी सफ़ाई देने का अवसर भी नहीं दिया। यह जाने बिना कि दया की पात्रा हूँ अथवा नहीं, दया कर दी। कितने उदार हृदय है। अभी तक वैसे ही स्नेह करते हैं। छाया अपने उद्‌गारों में खोई भविष्य के विषय में विचार करने लगी। उसका मस्तिष्क कोई अन्तिम निर्णय करने में अशक्त था। उसने अपने जीवन की नैया गोपालकृष्ण के कथनानुसार भगवान भरोसे छोड़ दी। भाग्य का सम्बल पकड़ वह जीवन में शान्ति पाने की आशा करने लगी।

वह सोचती क्या रोशन ने उससे सचमुच धोखा किया है? उसने अनेक बार उसे भागने पर बाध्य किया। वह स्वयं तैयार नहीं हुई। उसने स्वयं ही रमेश के मोह-जाल में फंस कर रोशन से विश्वासघात किया। रोशन के साथ अपने को आत्मसात् करने और उसकी संगिनी बनने के लिए तो वह घर छोड़ कर भागी थी। रोशन का विशेष दोष नहीं। वह स्वयं दुर्बल मन की स्वामिन, विलासिनी धनी तथा सुन्दर युवक के जाल में फँस कर अपना जीवन बरबाद कर बैठी। रोशन तो फिर भी उसके साथ कोठी से भागने के लिए तैयार था।

इस प्रकार अपने विचारों का अवलोकन करने पर उसको समझ आया कि रमेश ने उस से धोखा किया। उसके पेट में पल रहा बच्चा रमेश का है। उसका मन ऐसा मानता था, यद्यपि निश्चय से यह बात कहनी कठिन थी। वह मनन करती भी क्या? रोशन यह जानता था कि उसका सम्बन्ध रमेश से रहा है। क्या रमेश ने स्वयं उसे बता कर भगा दिया? और अब अपने पिता को झूठ बता कर रोशन के प्रति उसके मन में घृणा भर दी है। लालाजी तभी उससे सहानुभूति रखते हैं। उनके विचार से बच्चा हराम का है। वे समझ रहे होंगे, भाई ने ही अपनी वासना तृप्ति के निमित्त बहिन में नये जीव का बीजारोपण किया होगा। छाया का हृदय चीत्कार कर उठा।

ऊफ़! इस पर भी वह जीवित है और लालाजी के स्नेह की पात्रा है। उसका मन रमेश की बारात देखने अथवा उसमें सम्मिलित होने को भी नहीं किया।

अगले दिन भी वह दारुण दुख के कारण रमेश की पत्नी का स्वागत भी न कर सकी। तारा को यह बहुत बुरा लगा और वह इस ननद के प्रति ईर्ष्या तथा घृणा से भरी अन्य सम्बन्धियों के मध्य बैठी थी।

तारा कोठी में घर की स्वामिन बन कर आई थी। छाया को अपना भविष्य सर्वथा अन्धकारमय दिखाई देने लगा था। वह बहुत कम बोलती और चिन्ता के कारण उसके समस्त स्नायुओं पर बोझ सा बना रहता। तारा जब भी उसकी ओर देखकर रमेश से कुछ बात करती छाया की कल्पना सजग हो उठती कि शायद वह उसके विषय में ही उसे कुछ कहने वाली है। उसका ऐसे वातावरण में दम घुटने लगा था।

तृतीय परिच्छेद

: १ :

छाया की जीवनचर्या सर्वथा बदल गई है। वह किसी से अधिक बात करने अथवा बे मतलब बोलने में भी रस नहीं पाती। उसका शरीर गर्भभार के कारण यद्यपि बढ़ता जा रहा है तो भी वह पीतवर्ण जीर्ण सी दिखाई देती है। मानसिक अवस्था भी अति क्षीण है। जटिल परिस्थितियों के वश अपने दारुण दुख के कारण कभी कराह उठती है। नारीजन्य ईर्ष्या के कारण जहाँ उसका मन जलता है, वहा अपनी विवशता पर आँसू निकल पड़ते हैं।

घर में तारा की चलती है। रमेश और कोठी के नौकरों पर पूर्ण नियन्त्रण है उसका। वह आदेश जारी नहीं कर सकती तो केवल छाया के लिए। न जाने दोनों को क्यों एक दूसरे से चिढ़ है। जब तारा रमेश की बाँह में बाँह डाले घूमने जाती है अथवा रमेश की बगल मैं बैठ कार चलाती है तो छाया के हृदय में हूक-सी उठती है। यह अवस्था ईर्ष्या और द्वेष की प्रतीक है, छाया भली-भाँति समझती है। तारा ने उसके प्रेमी पर अधिकार कर लिया है। जिस साथी की उसने कल्पना की, तारा ने उसको छीन लिया है। अब वह इस संसार में एकाकी है। रमेश अथवा तारा उसको शिष्टाचार के नाते भी नहीं कहते कि उनके साथ घूमने चली चले। जब छाया उन्हें हंसता खेलता देखती है तो गीली लकड़ी की भाँति जलती है। तारा को देख नाक चढ़ा लेती है। उसको भी छाया की भर्त्सना करने में आनन्द आता है।

तारा को कोठी में आये एक मास बीत चुका है। इस अवधि में

जब भी वह मायके गई है, रमेश को साथ ले जाती रही है जैसे उसको छाया पर विश्वास नहीं तो अपने पति पर भी अभी तक विश्वास नहीं कर सकी है।

छाया को कभी रमेश से बात करने का अवसर नहीं मिलता। उसका मन ऊब सा गया है। उसे तारा को अपनी ओर घूर कर रमेश के कान में कुछ कहते देख सन्देह होता है कि वह उसको जलाने के लिए ही ऐसा करती है। एक दिन तारा अल्पाहार करती हुई रमेश से कहने लगी, "छाया के हृदय में अभी भी आप बसे हैं। उस बेचारी से बहुत अन्याय हुआ है।"

छाया उस समय अल्पाहार लेने उधर आ रही थी। उसने तारा के उक्त शब्द सुने। परदे की ओट में ठिठक कर खड़ी हो गई। वह जानने के लिए कि रमेश क्या उत्तर देता है। उसने अनुभव किया कि तारा की घृणित दृष्टि परदे के बीच में से उसे घूर रही है। रमेश उसके मुख पर देखता हुआ मुस्कराने लगा। तारा ने फिर कहा, "वह हमें देखकर अपने दुर्भाग्य पर आँसू बहाती है। उसकी मौन दृष्टि मेरे मन में इस प्रकार उथल-पुथल मचाती है जैसे वह मेरी सौत हो।"

"पगली। तुम ऐसा क्यों सोचती हो। पढ़ी-लिखी होकर रूढ़िवादियों जैसी बातें क्यों करती हो, तारा।" रमेश ने खेद प्रकट करते हुए कहा।

"इसमें कारण है, रमेश! वह सदा भगवान की मूर्ति के आगे बैठ कुछ बुदबुदाती रहती है। क्या माँगती है? मैं सुन नहीं सकती। मुझको सन्देह होता है, कुछ मेरा अनिष्ट ही उसको वांछनीय है। अपने भाई से लैंगिक सम्बन्ध बनाने वाली लड़की क्या कुछ नहीं कर सकती, मुझ जैसी पढ़ी-लिखी अनुमान लगा सकती है।"

छाया इससे अधिक सुन नहीं सकी। उसको चक्कर आ गया। वह दीवार के सहारे रुक गई। क्या यह जीवन जीने योग्य रह गया है? उसके अन्तर से प्रश्न उठा। वह वापिस अपने कमरे की ओर लौट

जाना चाहती थी कि रमेश ने पुकारा, "आओ छाया ! नाशता ठण्डा हो रहा है।"

वह अन्यमनस्क-सी आकर कुर्सी पर बैठ गई। रमेश ने तारा की ओर दृष्टि घुमा कर कहा, "मैं जानता हूँ छाया भगवान से क्या माँगा करती है। यह हमारे परिवार की हित-चिन्तिका है। भगवान से पापा के 'आर्बीट्रेशन' में जीत जाने की प्रार्थना करती है।"

तारा ने घृणात्मक दृष्टि छाया पर डाली मानो उसको छाया का अपने ससुर का हित-चिन्तक होना भी भला न लगता हो।

रमेश को इस प्रतिक्रिया पर खेद हुआ। उसने तो ये शब्द छाया के घायल हृदय पर मरहम रखने के निमित्त कहे थे और यह सत्य भी था। अपनी पत्नी का यह व्यवहार उसे नहीं भाया। वह छाया को सहानुभूति और दया की पात्रा समझने लगा था। अतीत की स्मृति होने पर उसकी कल्पना सजग हो उठी और वह छाया के भविष्य पर मनन करता हुआ उसे निहारने लगा। छाया की पलकों में रुके आँसुओं ने उसके हृदय को खिन्न कर दिया। वह आज की छाया से उस दिन की छाया से तुलना कर रहा था जब उसने उसके छिछोरे प्रेम के समक्ष समर्पण किया था। उसने विषय को बदलते हुए छाया को कुछ खाने केलिए कहा और स्वयं सबके लिए चाय बनाने लगा। उसको ऐसे घृणात्मक वातावरण में आशा नहीं थी कि तारा छाया के लिए चाय की प्याली बनाना भी चाहेगी।

रमेश द्वारा आज इतनी सहानुभूति का यह प्रभाव अवश्य हुआ कि तारा ने वहाँ से उठ कर एकान्त में आँखों में छिपे आसूओं को बहाने की अपेक्षा, रमेश और तारा के साथ अल्पाहार ले लिया। विक्षुब्ध होने पर भी उसको उठकर चले जाने का साहस नहीं हुआ।

परन्तु इस दिन के बाद छाया के मन में तारा के लिए पूर्णरूपेण घृणा भर गई। वह उसको अपना शत्रु समझने लगी। यद्यपि रमेश ने उससे विश्वासघात किया था तो भी वह रमेश पर गिला करने की अपेक्षा स्वयं को अधिक दोषी मानती थी। किन्तु तारा के दुर्व्यवहार और

जब भी वह मायके गई है, रमेश को साथ ले जाती रही है जैसे उसको छाया पर विश्वास नहीं तो अपने पति पर भी अभी तक विश्वास नहीं कर सकी है।

छाया को कभी रमेश से बात करने का अवसर नहीं मिलता। उसका मन ऊब सा गया है। उसे तारा को अपनी ओर घूर कर रमेश के कान में कुछ कहते देख सन्देह होता है कि वह उसको जलाने के लिए ही ऐसा करती है। एक दिन तारा अल्पाहार करती हुई रमेश से कहने लगी, "छाया के हृदय में अभी भी आप बसे हैं। उस बेचारी से बहुत अन्याय हुआ है।"

छाया उस समय अल्पाहार लेने उधर आ रही थी। उसने तारा के उक्त शब्द सुने। परदे की ओट में ठिठक कर खड़ी हो गई। वह जानने के लिए कि रमेश क्या उत्तर देता है। उसने अनुभव किया कि तारा की घृणित दृष्टि परदे के बीच में से उसे घूर रही है। रमेश उसके मुख पर देखता हुआ मुस्कराने लगा। तारा ने फिर कहा, "वह हमें देखकर अपने दुर्भाग्य पर आँसू बहाती है। उसकी मौन दृष्टि मेरे मन में इस प्रकार उथल-पुथल मचाती है जैसे वह मेरी सौत हो।"

"पगली। तुम ऐसा क्यों सोचती हो। पढ़ी-लिखी होकर रूढ़िवादियों जैसी बातें क्यों करती हो, तारा।" रमेश ने खेद प्रकट करते हुए कहा।

"इसमें कारण है, रमेश ! वह सदा भगवान की मूर्ति के आगे बैठ कुछ बुदबुदाती रहती है। क्या माँगती है ? मैं सुन नहीं सकती। मुझको सन्देह होता है, कुछ मेरा अनिष्ट ही उसको वांछनीय है। अपने भाई से लैंगिक सम्बन्ध बनाने वाली लड़की क्या कुछ नहीं कर सकती, मुझ जैसी पढ़ी-लिखी अनुमान लगा सकती है।"

छाया इससे अधिक सुन नहीं सकी। उसको चक्कर आ गया। वह दीवार के सहारे रुक गई। क्या यह जीवन जीने योग्य रह गया है ? उसके अन्तर से प्रश्न उठा। वह वापिस अपने कमरे की ओर लौट

जाना चाहती थी कि रमेश ने पुकारा, "आओ छाया ! नाशता ठण्डा हो रहा है।"

वह अन्यमनस्क-सी आकर कुर्सी पर बैठ गई। रमेश ने तारा की ओर दृष्टि घुमा कर कहा, "मैं जानता हूँ छाया भगवान से क्या माँगा करती है। यह हमारे परिवार की हित-चिन्तिका है। भगवान से पापा के 'आर्ब्रीट्रेशन' में जीत जाने की प्रार्थना करती है।"

तारा ने घृणात्मक दृष्टि छाया पर डाली मानो उसको छाया का अपने ससुर का हित-चिन्तक होना भी भला न लगता हो।

रमेश को इस प्रतिक्रिया पर खेद हुआ। उसने तो ये शब्द छाया के घायल हृदय पर मरहम रखने के निमित्त कहे थे और यह सत्य भी था। अपनी पत्नी का यह व्यवहार उसे नहीं भाया। वह छाया को सहानुभूति और दया की पात्रा समझने लगा था। अतीत की स्मृति होने पर उसकी कल्पना सजग हो उठी और वह छाया के भविष्य पर मनन करता हुआ उसे निहारने लगा। छाया की पलकों में रुके आँसुओं ने उसके हृदय को खिन्न कर दिया। वह आज की छाया से उस दिन की छाया से तुलना कर रहा था जब उसने उसके छिछोरे प्रेम के समक्ष समर्पण किया था। उसने विषय को बदलते हुए छाया को कुछ खाने केलिए कहा और स्वयं सबके लिए चाय बनाने लगा। उसको ऐसे घृणात्मक वातावरण में आशा नहीं थी कि तारा छाया के लिए चाय की प्याली बनाना भी चाहेगी।

रमेश द्वारा आज इतनी सहानुभूति का यह प्रभाव अवश्य हुआ कि तारा ने वहाँ से उठ कर एकान्त में आँखों में छिपे आसूओं को बहाने की अपेक्षा, रमेश और तारा के साथ अल्पाहार ले लिया। विक्षुब्ध होने पर भी उसको उठकर चले जाने का साहस नहीं हुआ।

परन्तु इस दिन के बाद छाया के मन में तारा के लिए पूर्णरूपेण घृणा भर गई। वह उसको अपना शत्रु समझने लगी। यद्यपि रमेश ने उससे विश्वासघात किया था तो भी वह रमेश पर गिला करने की अपेक्षा स्वयं को अधिक दोषी मानती थी। किन्तु तारा के दुर्व्यवहार और

घृणा ने उसका जीना दूभर कर दिया।

कुछ दिन के अनन्तर गोपालकृष्ण के केस का निर्णय उसके पक्ष में हो गया। पिछले बिलों के भुगतान की आशा बंध गई। इस सफलता का श्रेय तारा को मिला। गोपालकृष्ण की अपने सम्बन्धियों तथा मित्रों के मध्य यही बात होती और प्रायः सब कहते कि रमेश की पत्नी लक्ष्मी बन कर उसके घर आई है। विपत्ति के समय भी उन्होंने विवाह कर ठीक ही किया।

इस चर्चा से तारा का स्वाभिमान चरम सीमा पर आ गया। छाया की यह बहुत बड़ी पराजय थी। जो भगवान से प्रार्थना करती रही, उसके लिए किसी ने एक शब्द भी नहीं कहा। सब श्रेय मिला उस घृणा की मूर्ति—तारा को।

छाया का हृदय चीत्कार कर उठा। रो-रोकर उसकी आँखें सूज गयीं। तारा की प्रसन्नता का पारावार न था। छाया को अब जीवन बोझ-सा प्रतीत होने लगा था। उसके हितचिन्तक धर्म के पिता गोपालकृष्ण ने भी उसके विचार से उसके साथ अन्याय ही किया था। और अपनी पुत्र-वधु की श्लाघा की थी। छाया को एक कटु अनुभव हुआ। रक्त पानी से गाढ़ा होता है। तारा लालाजी की पतोहू है। वह तो कुछ नहीं है। उसका अस्तित्व ही क्या है। उनकी दृष्टि में वह अपने भाई की सहवासिनी के अतिरिक्त कुछ भी नहीं। चरित्रहीन लड़की। एक निकृष्ट अबला।

वह अपने विगत दस मास के जीवन में घटी घटनाओं का पुनरावलोकन करती तो उसकी समझ आता कि लाला गोपालकृष्ण उस पर दया कर उसे आश्रय दिये हुए हैं। अभी तक कदाचित तारा यह नहीं जानती है कि उसके पेट में पलने वाला बच्चा उसके पति का है। जिस दिन उसको पता चलेगा उस दिन वह शायद उसको घर से निकल जाने का आदेश देगी क्योंकि वह घर की मालकिन है। उस समय लालाजी भी उसकी सहायता न कर पायेंगे। पुत्रवधु का विरोध वे कैसे करेंगे। क्यों न वह स्वयं ही चली जाये और रावी नदी में कूद अपने प्राणों का

अन्त कर दे । लेकिन नहीं । इस गन्दे शरीर को राख होना चाहिए । जिसने इसे गन्दा किया । जिससे वह अब भी प्रेम करती है, वही उसका अपने हाथों दाह-संस्कार करे और साथ ही उसको इस बात की अनुभूति हो जायेगी कि पेट में पलने वाले बच्चे की हत्या के लिए भी वही जिम्मेदार है ।

तो क्या वह रमेश की मोटर से पैट्रोल निकाल, अपने ऊपर छिड़क, जल मरे । छाया के मस्तिष्क में इस प्रकार के विचार हलचल मचाने लगे ।

जीवन को अपने हाथों समाप्त करने के लिए बुद्धि के प्रयोग की आवश्यकता नहीं । जहाँ बुद्धि कार्य करती है, वहाँ आत्म-हत्या करने वाला प्राणी ऐसा कृत्य नहीं कर सकता । यह तो मन की विशेष अवस्था और भावुकता के कारण क्षणिक उन्माद उठता है । मनुष्य उसी आवेग में ऐसा दुःसाहस कर बैठता है ।

छाया तो इस दिशा में विचार करने लगी थी । इस कारण तैयार न हो सकी । वह साहस न बटोर सकी ऐसा कृत्य करने के लिए । उसको जीवन से अब मोह हो आया । रमेश ने उससे धोखा किया । उसने स्वयं रमेश के लिए रोशन की भर्त्सना की । परिणाम स्वरूप वह उसको छोड़ कर चला गया । अब वह रमेश को किसी अन्य स्त्री की संगति में नहीं देख सकती । काश ! वह अँधी हो जाती ताकि देख तो न सकती । वह इन्हीं उद्गारों से पिस रही थी कि मुनीम हंसराज वहाँ आ पहुँचा ।

हंसराज बहुत दिनों से छाया से बात करने का अवसर ढूँढ रहा था । आज वह नगर में आया तो कोठी चला आया । उस समय तारा कोठी में नहीं थी । छाया लॉन में ही विचारों में तल्लीन बैठी थी । उसकी आँखों के कोर गीले थे । हंसराज ने समीप आकर पुकारा, "छाया ।"

"ओह ! आप ।"

"मैं तुमसे कुछ कहने आया हूँ ।"



छाया उसका मुख देखने लगी। हंसराज ने हाथ में पकड़ा झोला वहीं रख दिया और बैठ कर बोला, "देखो छाया। तुम यह तो मानोगी ही कि तुम मेरी बेटी समान हो और यह भी जानती हो कि मैंने तुम्हें पहले देखा और पहचाना। रमेश और लालाजी के सम्पर्क में तुम बाद में आईं।"

"आप कहना क्या चाहते हैं, मुनीम जी।"

"मुझे तुमसे हार्दिक सहानुभूति है। मैं तुम्हारे दुख को भली भाँति जानता हूँ। मेरी इच्छा है कि तुम मेरे घर चलो। प्रसव के समय मेरी पत्नी तुम्हारी सेवा करेगी। बच्चा होने पर मैं बच्चे के बाप की खोज करूँगा और उससे सम्पर्क बनाकर उसे यहाँ ले आऊँगा।"

"आपको लालाजी ने ऐसा करने का आदेश दिया है ?" छाया ने पूछा।

"नहीं। मैं मन की प्रेरणा से कह रहा हूँ।"

छाया सोचने लगी। मुनीम उसके उत्तर की प्रतीक्षा करता रहा। छाया को कुछ सूझ नहीं रहा था। हंसराज ने उसको विचारों का मन्थन करते देख कहा, "मान जाओ बेटी। मेरे घर में तुम्हें कोई कष्ट न होगा। तुम रमेश की बहू के उलाहने सहने से बच जाओगी। सेठजी की बदनामी भी न होगी। तुम्हें शान्ति मिलेगी।"

छाया को ऐसा समझ आया कि यह पूर्ण योजना लाला गोपाल-कृष्ण की बनाई हुई है। उन्होंने ही बदनामी से बचने के लिए मुनीम से सहायता माँगी होगी। वह इस कीचड़ से निकलने का उपाय इस जीवन रूपी कांटे को निकालना ही ठीक समझती थी। उसको मुनीम की योजना कुछ जंची नहीं। वह अपनी आँखों से रमेश को तारा से प्रेम करता नहीं देख सकती थी। उसका मन जलने लगता था।

हँसराज ने उसको मौन देख कर फिर कहा, "तुम तैयार हो जाओ मैं अभी ताँगा ले कर आता हूँ।"

छाया ने कुछ उत्तर नहीं दिया और मुनीम उठ कर चल दिया। छाया हँसराज को कोठी के फाटक से बाहर जाता देख रही थी परन्तु

कुछ बोली नहीं।

मुनीम जा चुका था और छाया अब भी विचार कर रही थी कि यह लाला गोपालकृष्ण की योजना की प्रथम कड़ी है अन्यथा मुनीम को क्या सूझी है कि उसकी सहायता करे। इस शुभ कार्य के लिए गोपाल-कृष्ण ने अवश्य उसको मोटी धनराशि दी होगी। क्या यह उनका उसके प्रति स्नेह है ?

अभी तक वह मुनीम के साथ जाने के लिए अपने मन को तैयार न कर सकी थी। मुनीम अपना थैला वहीं कुर्सी के साथ लटका गया था। छाया अन्यमनस्क-सी उसका थैला देखने लगी। वह अपने सन्देह की पुष्टि करना चाहती थी कि मुनीम को उसके पास लालाजी ने भेजा है अथवा मुनीम का कथन सत्य है या वह मन की प्रेरणा से ऐसा कर रहा है। वह उसकी अनुपस्थिति में थैला देखना अनधिकार चेष्टा मानती हुई भी इस विचार से देखने लगी कि शायद कोई चिन्ह मिल जाये जिससे हँसराज के वहाँ आने के उद्देश्य का पता चल सके।

थैले में घर गृहस्थी के प्रयोग का सामान था। दियासलाई का डिब्बा, नमक-मिर्च इत्यादि और साथ में दो शीशियाँ एक लिफ़ाफ़े में लिपटी हुई थीं। दवाइयाँ प्रतीत होती थीं। छाया ने शीशी के ऊपर लगे कागज पर पढ़ा—लिखा था 'तेजाब'।

छाया शीशी को हाथ में पकड़ ठिठक-सी गई। अपने आस-पास देखा। कोई नहीं था। उसके मन में आया क्यों न वह इसे अपनी आँखों में डाल कर अपने पाप का प्रायश्चित करे। उसके जीवन में तो अंधेरा है ही। वह इस संसार को, जहाँ सुख और आनन्द है, कब तक इन आँखों से देखती रहेगी। रमेश सदृश्य धोखेबाज उसके सम्मुख जीवन का आनन्द लूटते हुए उसे जलाते रहेंगे। उसने कई उपन्यासों में पढ़ा था कि प्रतिद्वन्द्वी प्रेमी ने दूसरे प्रेमी पर किसी दुष्ट गुण्डे द्वारा तेजाब डलवा दिया और वह अन्धा हो गया। वह इस तेजाब का तारा अथवा रमेश पर प्रयोग नहीं कर सकती पर अपने लिए तो कर सकती है। वह रमेश को तारा के साथ देख न सकेगी। वह यौवन के उन्माद में

अंधी हो गई। परिणामस्वरूप कितनी निराश और दुःखद अवस्था दिन व्यतीत कर रही थी। अब इन आँखों से अपने दुर्भाग्य का तमाश कब तक देखती रहेगी। मुनीम कुछ देर न आया तो सम्भव है उस प्राण निकल जायें। तब तो उसको समस्त दुःखों से मुक्ति मि जायेगी।

वह आत्म ग्लानि से पागल हो उठी। भावुकता के आवेग में शीश का ढकना खोल लिया और उसके मुख पर उँगली रख आँख में उंडे दीया। तीन बूँद तेजाब एक साथ आँख में पड़ा ही था कि उसका हा शिथिल पड़ गया। छाया की चीख निकली और वहीं घास पर ले गई। तेजाब की शीशी दूर जा पड़ी। । आँख के बाहर का भाग भ झुलस गया। वह ऐसे तड़पने लगी जैसे जल के बिना मछली तड़पती है

मुनीम ताँगा ले आया था। छाया को इस प्रकार तड़पते देख घबरा गया। पहले तो उसको समझ नहीं आया कि क्यों तड़प रही है उसके समीप पहुँचा तो उसे आँख पर हाथ रखे देख चकित रह गया। उसका थैला खुला पड़ा था और तेजाब की शीशी घास पर पड़ी थी कुछ तेजाब अभी भी उसमें दिखाई दिया। वह सब कुछ समझ गया कोठी के भीतर जा सब से पहले अपने डाक्टर को टेलीफोन किया और तत्पश्चात गोपालकृष्ण को सूचना दे दी।

तारा प्रातः से ही रमेश के साथ कहीं बाहर गई हुई थी।

डाक्टर आया। आँख को साफ कर दवाई डाल दी और इन्जैक्शन लगा दिया। छाया की पीड़ा कुछ कम हो गई परन्तु डाक्टर का कहना था कि आँख को काफी क्षति पहुँची है। आशा नहीं कि दृष्टि रहे।

मुनीम बहुत घबराया हुआ था। वह भय के मारे काँप रहा था कि उसका कार्यालय के समय में बिना बुलाये कोठी में होना ही सन्देह का कारण है। कहीं लाला गोपालकृष्ण ने क्रुद्ध हो पुलिस में रिपोर्ट लिखवा दी तो वह अवश्य पकड़ लिया जायेगा। डाक्टर गोपालकृष्ण से पहले पहुँचा था। जब गोपालकृष्ण पहुँचा तो डाक्टर पट्टी कर चुका था। उसने गोपालकृष्ण को देख कहा, "मैं कुछ कह नहीं सकता कि

यह आत्महत्या की चेष्टा थी। इसके पेट में बच्चा है न।"

"हाँ! डाक्टर खन्ना। आपका अनुमान ठीक है। मिसेज़ डा० सरला खन्ना ही इस केस की निगरानी कर रही हैं।"

"उसने मुझे बताया था। अभी फोन आया तो मैं घर पर आराम कर रहा था। पहले तो मैं आने के लिए तैयार नहीं हुआ। फिर सरला ने बताया कि वह गर्भवती है, मुझे जाना चाहिए। मैं उसी समय चला आया।"

"तो हमें डा० सरला का भी धन्यवाद करना चाहिए। वह इस दुखयारी का इतिहास जानती है। फिर स्त्री की स्त्री से सहानुभूति होना स्वाभाविक भी है।"

"ठीक कहते हो सेठ साहब!" डाक्टर खन्ना ने मुस्कराते हुए कहा, "संसार इन्हीं के सहारे चल रहा है। जब अनर्थ करती हैं तो भगवान बचाये स्त्रियों से। इस मूर्ख लड़की ने यह नहीं सोचा कि परिणाम क्या होगा। आँख से देखने की शक्ति शून्य होने की सम्भावना है। अच्छा मैं चलता हूँ। कल पट्टी फिर करवा लेना।"

लाला गोपालकृष्ण चिन्तातुर अवस्था में मुनीम का मुख देखने लगे। मुनीम का इस दुर्घटना के समय इस कोठी में उपस्थित होना उसको विचित्र-सा लग रहा था। वह प्रश्न भरी दृष्टि से हँसराज के मुख पर एक सी० आई० डी० अधिकारी की भाँति देखे जा रहा था।

"मुझे क्षमा कीजिए, सरकार। मैं बैंक के काम से माल रोड तक गया तो घर के लिए कुछ चीज़ें खरीदने का विचार आया। नमक मिर्च इत्यादि लेकर आया तो छाया......"

'झूठ मत बोलो हँसराज। बैरे का कहना है कि तेज़ाब की शीशी तुम्हारे थैले में थी।"

"हाँ सरकार। पूरी बात तो सुनिए हजूर। लड़का सर्राफ का काम करता है। छोटी-मोटी दूकान भी बना रखी है, आपको मालूम ही है। तेज़ाब उसने मँगवाया था।"

"तो तुम यहाँ आये कैसे?"

"बहूरानी की कुशल क्षेम पूछने।"

"बहूरानी या छाया की। सच-सच कहो। किस के लिए लाये थे तेज़ाब और ताँगा किसलिए आया था ?"

मुनीम कुछ उत्तर न दे सका। गोपालकृष्ण का मुख क्रोध से लाल हो रहा था।

"नमकहराम ! झूठे-बईमान !" गोपालकृष्ण ने मुनीम को फटकारा।

"सरकार ! आप छाया बेटी से पूछ लेना। मैं किसी बुरी नियत से यहाँ नहीं आया।"

"बको मत। दूर हो जाओ मेरी नज़रों से।" गोपालकृष्ण की आवाज़ काँप रही थी। वह एक आराम कुर्सी पर आकर बैठ गया। मुनीम चला गया।

थोड़ी देर में रमेश और तारा शॉपिंग कर टैक्सी में लौटे। गोपालकृष्ण को सोफे पर हताश लेटे देख रमेश डर गया।

"क्या हुआ पापा !" उसने पूछा।

कुछ उत्तर नहीं मिला। गोपालकृष्ण का मन अति उद्विग्न था। उसको ऐसा समझ आया कि छाया आत्महत्या करने की कुचेष्टा करना चाहती थी और कदाचित मुनीम उसकी सहायता कर रहा था। पर क्यों ? मुनीम ऐसा क्यों चाहता था ? इस प्रश्न का उत्तर गोपालकृष्ण की बुद्धि खोजने में अशक्त थी।

रमेश को सन्देह हुआ कि पापा की तबीयत फिर खराब हो गई है। उसकी घबराहट का कारण गोपालकृष्ण का ऐसी अवस्था में एकाकी होना भी था। अतः उसने पूछा, "डाक्टर को बुलाऊँ, पापा ?"

"नहीं। वह अभी अभी गया है।"

"छाया कहाँ है ?"

"अपने कमरे में।"

"नौकर कहाँ मर गए हैं। आपके पास कोई तो होना चाहिए था।" रमेश आवेश में बोला।

"तुम मेरी चिन्ता मत करो, रमेश !" गोपालकृष्ण ने उठ कर बैठते हुए कहा, "मुझे कोई कष्ट नहीं। छाया ने अपनी आँख फोड़ ली है।"

"आँख फोड़ ली है।" रमेश और तारा एक साथ बोले। रमेश स्तब्ध रह गया।

"हाँ। इस समय अपने कमरे में है।"

रमेश और तारा उसके कमरे में आ गए। गोपालकृष्ण फिर सोचने लगा। छाया से क्यों उसको पुत्री की भाँति इतना मोह है ! कब तक यह इस कोठी में पड़ी रहेगी ? बदनामी के भय से क्या उसको निकाल देना चाहिए ? 'नहीं ! यह अन्याय होगा।' गोपालकृष्ण के अन्तर से आवाज़ उठी। यदि वह उसकी अपनी बेटी होती तो वह क्या करता ? उसको वैसा ही व्यवहार छाया से करना चाहिए।

गोपालकृष्ण ने निर्णय किया कि वह किसी भी अवस्था में छाया को कोठी से नहीं भेजेगा। उसको सन्देह होता कि रमेश अथवा तारा ने भी उससे अपमानजनक व्यवहार किया होगा। इसलिए उसने अपने प्राणों का अन्त कर देने की कुचेष्टा की। मुनीम कैसे बीच में टपक पड़ा। वह उसकी जाँच करना चाहता था। उसको विगत घटनाओं पर मनन करने से आशंका बारम्बार उभर आती कि रमेश का बच्चा ही छाया के पेट में है। भाई बहन से ऐसा अमानवीय व्यवहार नहीं कर सकता। रोशन के भागने का कारण भी यही रहा होगा। बहिन की यह अवस्था उसके लिए असह्य हो उठी होगी। सम्भव है रमेश ने मुनीम की सहायता से इस काँटे को सदा के लिए निकालने का यत्न किया हो। अपने पुत्र के विषय में इस प्रकार की कल्पना कर दुखी हुआ। छाया के प्रति उसकी सहानुभूति बढ़ गई।

गोपालकृष्ण भूला नहीं था कि छाया उसकी बीमारी के दिनों में अपने आराम की बात भूल उसकी सेवा-शुश्रूषा में जुटी रही थी। जब सरकार से झगड़ा हुआ तो वह नित्य भगवान से प्रार्थना करती कि यह विपत्ति टल जाये। उसमें सदैव परिवार के हित की भावना कार्य

करती रही। अतः ऐसी कर्त्तव्यपरायण लड़की को घर से इस कारण निकालना अन्याय ही न होगा प्रत्युत जघन्य अपराध हो जायेगा कि वह किसी के सम्मोहन में फंस कर नये जीव का निर्माण करने में व्यस्त है। अपराध दोनों का हो सकता है। फल केवल स्त्री ही क्यों भुगते? यदि वह गर्भ रमेश का है तो उसको भी फारखती देनी चाहिए। इन सब बातों पर मनन करने के उपरान्त गोपालकृष्ण ने यह परिणाम निकाला कि वह छाया से अन्याय न होने देगा और उसकी सन्तान—दौहता है अथवा पोता उससे पालन-पोषण का उचित प्रबन्ध करेगा। ऐसी सुशील बेटी का त्याग तो महा पाप हो जायेगा। गोपाल-कृष्ण अपने मन की ऐसी उत्कृष्ट भावनाओं से ओत-प्रोत हो सोफे पर से उठ खड़ा हुआ। उसके मुख पर सन्तोष झलकने लगा। वस्त्र बदल, समाचार-पत्र उठा, पढ़ने बैठ गया। उसने एक निश्चित दिशा सोच ली थी। उसका निर्णय सदा अटल रहा है। कार्यालय लौट जाने को उसका मन नहीं किया।

: २ :

रमेश और तारा दोनों ने छाया के कमरे में पदार्पण किया। छाया अभी भी धीरे-धीरे कराह रही थी। रमेश ने पुकारा, "छाया।"

छाया ने आवाज़ पहिचानी और उसकी आंख से आँसू टपक पड़े। उस दायीं आँख से, जिससे वह रमेश को देख सकती थी। तारा एक शब्द नहीं बोली। छाया ने आँख खोल कर उन्हें देखा और बन्द कर ली। दूसरी आँख पर तो पट्टी बँधी ही थी। जैसे वह अब भी दोनों को एक साथ देख जल उठी हो। काश! वह दूसरी आँख से भी न देख सकती! छाया ने मन ही मन कहा और एक दीर्घ निःश्वास छोड़ा।

रमेश उदास चित्त अपनी पुरानी सहवासिनी की दुर्दशा देख रहा था। वह सोचने लगा ऐसी युवति का भी क्या जीवन है? गर्भ धारण करने के पश्चात् उसने सब कुछ खो दिया। बचपन का साथी रोशन भी उसको छोड़ कर चला गया। इसलिए जीवन को नीरस समझ उसने आँखें फोड़ने का प्रयास किया ताकि वह इस संसार के सुखों

लोगों को देख कर दुःख अनुभव न करे। रमेश को अपने विचारों में विमग्न पा तारा उठ खड़ी हुई और चुपचाप कमरे से बाहर खिसक गई। एकान्त में तो रमेश अतीत को स्मरण कर भावुकता के आवेग में फफक उठा। छाया के हाथ का स्पर्श करते हुए बोला, "यह तुमने क्या किया छाया ?"

"तुम नहीं समझ सकोगे, रमेश ! पुरुष तो नारी के प्रेम का मज़ाक उड़ाना जानता है। मुझसे सहन नहीं होता। अतः इन आँखों को सदा के लिए बन्द कर देना चाहती थी ताकि तुम्हें देख न सकूं।"

"मुझ से इतनी घृणा हो गई थी क्या ?" रमेश का गला भर आया।

"अपने से घृणा हो गई है। मेरी नजर तुम्हें न लग जाये, इसलिए दृष्टि समाप्त करने का निर्णय किया। जीवित तो मैं रहना चाहती थी तुम्हारे बच्चे के लिए।"

रमेश की पूर्ण देह पसीने से भीग गई। उसने साहस बटोर कर पूछा, "तुम्हें विश्वास है यह बच्चा मेरा है ?"

"हाँ। तुम्हें क्यों सन्देह है ?"

रमेश निरुत्तर हो गया। उसको स्मरण हो आया कि उसने छाया को जीवन संगिनी बनाने का वचन दिया था।

कमरे में निस्तब्धता छाई रही। छाया की आँखों से आँसू बह रहे थे। उसने मुस्कराने का यत्न करते हुए कहा, "एक बात पूछूँ रमेश।"

"हाँ, अवश्य।"

"तुम प्रसन्न हो न।"

रमेश उसके पीतवर्ण मुख पर देखता रह गया। तत्पश्चात् बिना उत्तर दिये उठ कर चला गया। बाहर तारा टहलती हुई मिल गई। रमेश स्तब्ध रह गया। उसका मुख एकाएक काला पड़ गया। वह समझा कि तारा उसकी छाया से वार्ता छुप कर सुन रही थी। उसे आशंका हुई कि रहस्य खुल गया है। वह चुपचाप कमरे में चला

आया ।

शाम को लेडी डाक्टर सरला खन्ना छाया को देखने आई। उसक स्वागत तारा द्वारा हुआ। कुछ देर बाद वह विदा होने लगी तो तार ने पूछा, "क्या हाल है छाया का ?"

"ठीक है। गर्भवती का विशेष ख्याल रखना ही चाहिए।"

तारा का मुख खुला रह गया। 'गर्भवती'। वह बुदबुदाई। लेड डाक्टर जा चुकी थी। तारा कमरे में लौट गई। वहाँ रमेश को उदास चित्त पलंग पर लेटे देखा।

"यह घर है या हस्पताल ! जिधर जाओ रोगी पड़े हैं।" व आवेश में बोल उठी।

"क्या हुआ है ?"

"उधर पापा लेटे हैं। उस कमरे में वह चुड़ैल और वहाँ आ बिस्तर पकड़े हैं। घर अच्छा खासा हस्पताल बना हुआ है।"

"आप तो स्वस्थ हैं न !" रमेश ने व्यंग्य करते हुए पूछा।

"ऐसे वातावरण में मन से स्वस्थ रह सकना कठिन है।"

"क्या कष्ट होने लगा है आपको ?"

"मेरी बात छोड़ो। यह बताओ छाया ने आँख क्यों फो ली है ?"

"तुम्हें एक आँख नहीं भाती न !"

"ओह ! तभी गर्भ धारण कर लिया है।" तारा खिलखिला कर हँस पड़ी। रमेश कुछ बोल नहीं सका। तारा ने ही कहा, "लेडी डाक्टर का कहना है आपको गर्भवती का विशेष ख्याल रखना चाहिए।"

"क्या बकती हो।"

"घबराइए नहीं श्रीमान् जी। मैंने तो पहले ही दिन आपको कहा था, वह आपसे प्रेम करती है। प्रेम का कुछ परिणाम तो निकलना ही था।"

"तारा तुमको शर्म नहीं आती।"

"शर्म तो आपको आनी चाहिए।"

"तो तुम मेरा अपमान करने आई हो !"

'अपमान से बचने का सरल उपाय है, छाया से मेरे सामने पूछिए। यदि वह इस तथ्य से इन्कार करेगी तो मैं अपने शब्द वापिस लेकर क्षमा माँग लूँगी।"

"तो तब तक तुम्हें ज़बान बन्द रखनी चाहिए थी।"

"अब भी कुछ नहीं बिगड़ा। आप उससे पूछ लीजिए।"

"उसको स्वस्थ होने दो।"

"मैं इसका निर्णय आज ही करना चाहूँगी। मेरे मन में आग लगी है। मैं पापा से बात करूँगी।"

"जो मन में आए करो। तुम्हारा नाम बढ़ेगा नहीं।"

अगले दिन भोजन के समय यह विषय पुनः उपस्थित हुआ। लाला गोपालकृष्ण के पूछने पर आँख में तेज़ाब डालने की पूर्ण घटना सच सच बता दी थी कि मुनीम ने उसको अपने घर चलने का निमंत्रण दिया। थैला छोड़ ताँगा लेने गया तो वह उसका थैला देखने लगी। उसमें तेज़ाब की शीशी देखी तो अपने अन्धकारमय जीवन को वास्तव में अन्धकारमय बनाने की ठान ली। इसका परिणाम यह हुआ कि गोपाल-कृष्ण ने मुनीम को झूठा और उसके पारिवारिक मामलों में हस्तक्षेप करने वाला व्यक्ति समझ नौकरी से निकाल दिया। इस पर भी तारा का छाया को सहन न करना और अपने पति के उससे पूर्व सम्बन्ध की चर्चा ने गोपालकृष्ण को दुखी कर दिया। वह पुत्र-वधु के समक्ष लज्जित था। उसकी पतोहू उसके सामने ही उसके रक्त को चुनौती दे रही थी।

पहले तो कुछ देर गोपालकृष्ण सुनता रहा। तत्पश्चात् उसने तारा को समझाते हुए कहा, "एक हाथ कोई भूल कर बैठे तो उसको काटा नहीं जा सकता। छाया को मैं बेटी मान चुका हूँ। यदि कोई दुर्घटना उसके साथ हुई है तो वह उसकी निजी बात मान तुम्हें महसूस नहीं करना चाहिए। रही रमेश की बात इसका मैं प्रमाण चाहता हूँ। सन्देहात्मक बुद्धि सदैव घातक होती है, बहू! तुम अपनी गृहस्थी को

रखने लगा था।

वह तारा के व्यवहार से भी क्षुब्ध हो गया। वह सदा अपनी बात पर हठ कर अपना निर्णय ही अन्तिम समझती और अपनी ही बात मनवाने पर ही उसे चैन आता। छाया जैसी सुहृदयता और महानता उसमें न थी। वह तो बात-बात पर अधीर हो उठती थी। उसके बाहरी रूप की गरिमा कम होने पर रमेश को भी उसकी संगति फीकी प्रतीत होने लगी थी। इसके विपरीत छाया का अब भी उसके प्रति अनुराग रखना तथा हृदय की व्यथा से विवश हो अंधे बनने की कुचेष्टा ने रमेश के मन पर गहरा प्रभाव डाला था। परिणाम-स्वरूप वह पुनः छाया की ओर खिचने लगा था।

तारा को प्रत्येक बार मासिकधर्म के दिनों में गर्भ स्थित होने का सन्देह होता। कुछ दिन बाद उसे इस सन्देह से मुक्ति मिल जाती और वह सामान्य अवस्था में तितली की भाँति फुदकने लगती। ज्यूं-ज्यूं समय बीत रहा था, रमेश का मन बुझता जाता था। तारा से उसका प्रेम भी शिथिल होता जा रहा था। उसको ऐसा लगता कि तारा उनका वंश आगे चलाने की सामर्थ्य नहीं रखती। उसको तारा के मन को टटोलने से पता चल गया कि वह गर्भ धारण करने से डरती है। वह एक स्वतंत्र पंछी की भाँति विचरने में आनन्द पाती है। रमेश हर महीने तारा से शुभ सूचना पाने की प्रतीक्षा करता। वह यह भी अनुभव करता था कि पापा भी पोते का मुख देखने के लिए व्यग्र रहते हैं।

एक बार उसने तारा से पूछ लिया "तारा! तुम्हारा मन हर स्त्री की तरह माँ बनने को नहीं करता?"

"मेरी इच्छा का तो प्रश्न नहीं परन्तु देखती हूँ आप बेचैन दिखाई देते हैं। मैं समझती हूँ आपकी यह इच्छा छाया शीघ्र पूर्ण करने वाली है। अतः आप की इच्छा पूर्ति का श्रेय मैं नहीं लेना चाहती।"

रमेश को यह कटाक्ष अच्छा नहीं लगा। उसको फिर क्या इस प्रसंग में चर्चा करने का भी साहस नहीं हुआ। वह तारा की निष्ठुरता सहन नहीं कर सका।

यथा समय छाया ने एक सुन्दर बालक को जन्म दिया। तारा अभी भी इस निर्माण कार्य से कोसों दूर थी।

बालक की रूप रेखा बहुत कुछ रमेश से मिलती थी। तारा उसी दिन अपना अटैची केस उठा मायके चली गई। इस नवीन परिवर्तन से परिवार के सब सदस्यों को चिन्तातुर बना दिया।

छाया को प्रसव के समय बहुत कष्ट हुआ था, परन्तु बालक का सुन्दर मुखड़ा देख वह अपना समस्त कष्ट भूल गई। बालक गौर-वर्ण था। उसको ध्यानपूर्वक देखने से छाया को भी ऐसा लगा कि निश्चय ही रमेश इसका पिता है। जिस दिन शिशु का जन्म हुआ, रमेश छाया के कमरे में नहीं गया।

तारा ने रमेश को मायके जाने का कारण नहीं बताया था। उसको नर्स की बात चुभ गई थी। उसने कहा था, 'बच्चा तो बहुत स्वस्थ और सुन्दर है। कितना प्यारा है। बिल्कुल अपने पिता पर गया है। वैसा माथा, वैसी ही लम्बी नाक !"

तारा क्रोधपूर्ण मुद्रा में शिशु को देखती रही थी। वह स्वयं भी नर्स की बात का खण्डन नहीं कर सकी प्रत्युत उसको दुख हुआ कि नर्स और लेडी डाक्टर भी उसके पति पर सन्देह करते हैं। वह सोचने लगी उसके श्वसुर का धन के बल पर छाया के प्रसव के समय इतना सुन्दर प्रबन्ध करना ही लेडी डाक्टर तथा नर्स के मन में सन्देह उत्पन्न करने में सहायक हुआ। उनकी बातें इस सन्देह की पुष्टि करती थीं कि गोपालकृष्ण यह जानते हुए कि छाया का बच्चा उसके पुत्र रमेश का बच्चा है, उसके हेतु इतना कुछ करने के लिए उद्यत हुए हैं। अतः तारा एक शब्द भी नहीं बोली। अपना आवश्यक सामान उठा गोपालकृष्ण के कमरे में आ कर बोली, "मैं जा रही हूँ, पापा।"

"कहाँ ?"

"माँ के घर। मैं इस कोठी में अपमानजनक जीवन व्यतीत नहीं कर सकती।"

"क्या हुआ है बहू ?" गोपालकृष्ण ने विस्मय भरी दृष्टि से तारा

को देखते हुए पूछा।

"इस पूर्ण नाटक का निर्देशन स्वयं करने के बाद आप मुझ से पूछते हैं कि क्या हुआ ? अब तो मैं समझती हूँ कि खेल समाप्त हो गया है।"

"कुछ बताओगी भी ! मैं कुछ नहीं समझा। कैसा नाटक मैंने किया है।"

"भीतर जाकर छाया के बालक के दर्शन करिए। सब कुछ मालूम हो जायेगा।" इतना कह तारा विदा हो गई।

गोपालकृष्ण को यह भला प्रतीत नहीं हुआ। उसने भी ऐसी मुँह-फट पुत्रवधु को रोकने का यत्न नहीं किया। वह रमेश के पास आकर बोला, "तारा तुमसे पूछ कर गई है ?"

"क्या हुआ पापा ! मैंने तो उसे प्रातः से देखा ही नहीं।"

"वह अपनी माँ के पास चली गई है। कह रही थी कि यहाँ अपमानजनक जीवन व्यतीत नहीं कर सकती।"

रमेश के पाँव तले से भूमि खिसकने लगी। उसका मन तारा के प्रति क्रोध से भर गया। उसको ऐसा समझ आया कि वह छाया को बनते देख ईर्ष्या से जल उठी होगी यद्यपि उसको बच्चों के प्रति कोई आकर्षण नहीं। कदाचित् इसी कारण यहाँ से चली गई है। उसने भी निर्णय किया कि वह स्वयं तारा के पीछे नहीं जायेगा। उसको अपनी पत्नी का यह घृणात्मक व्यवहार बहुत ही बुरा लगा था।

वह उदास चित्त उस दिन तारा से अपना भविष्य जोड़े रखने की बात पर मनन करता रहा। गोपालकृष्ण भी गम्भीर मुद्रा धारण किये हुए था। वह रमेश से कुछ नहीं बोला। वह अभी पति-पत्नी के मामले में हस्तक्षेप करना नहीं चाहता था। इस पर भी नर्स के निमत्रण पर वह बच्चे को देखने गया तो नर्स ने मुस्कराते हुए कहा, "देखा, चाँद-सा मुखड़ा है।"

गोपालकृष्ण को बालक सर्वथा रमेश की प्रतिलिपि प्रतीत हुआ। तारा का एकाएक घर से चले जाने में कारण उसको समझ आ रहा था। उसे तारा द्वारा रमेश पर लगाये आरोप स्मरण हो आये। छाया

यथा समय छाया ने एक सुन्दर बालक को जन्म दिया। तारा अभी भी इस निर्माण कार्य से कोसों दूर थी।

बालक की रूप-रेखा बहुत कुछ रमेश से मिलती थी। तारा उसी दिन अपना अटैची केस उठा मायके चली गई। इस नवीन परिवर्तन से परिवार के सब सदस्यों को चिन्तातुर बना दिया।

छाया को प्रसव के समय बहुत कष्ट हुआ था, परन्तु बालक का सुन्दर मुखड़ा देख वह अपना समस्त कष्ट भूल गई। बालक गौर-वर्ण था। उसको ध्यानपूर्वक देखने से छाया को भी ऐसा लगा कि निश्चय ही रमेश इसका पिता है। जिस दिन शिशु का जन्म हुआ, रमेश छाया के कमरे में नहीं गया।

तारा ने रमेश को मायके जाने का कारण नहीं बताया था। उसको नर्स की बात चुभ गई थी। उसने कहा था, 'बच्चा तो बहुत स्वस्थ और सुन्दर है। कितना प्यारा है। बिल्कुल अपने पिता पर गया है। वैसा माथा, वैसी ही लम्बी नाक!"

तारा क्रोधपूर्ण मुद्रा में शिशु को देखती रही थी। वह स्वयं भी नर्स की बात का खण्डन नहीं कर सकी प्रत्युत उसको दुख हुआ कि नर्स और लेडी डाक्टर भी उसके पति पर सन्देह करते हैं। वह सोचने लगी उसके श्वसुर का धन के बल पर छाया के प्रसव के समय इतना सुन्दर प्रबन्ध करना ही लेडी डाक्टर तथा नर्स के मन में सन्देह उत्पन्न करने में सहायक हुआ। उनकी बातें इस सन्देह की पुष्टि करती थीं कि गोपालकृष्ण यह जानते हुए कि छाया का बच्चा उसके पुत्र रमेश का बच्चा है, उसके हेतु इतना कुछ करने के लिए उद्यत हुए हैं। अतः तारा एक शब्द भी नहीं बोली। अपना आवश्यक सामान उठा गोपालकृष्ण के कमरे में आ कर बोली, "मैं जा रही हूँ, पापा।"

"कहाँ?"

"माँ के घर। मैं इस कोठी में अपमानजनक जीवन व्यतीत नहीं कर सकती।"

"क्या हुआ है वह?" गोपालकृष्ण ने विस्मय भरी दृष्टि से तारा

को देखते हुए पूछा ।

"इस पूर्ण नाटक का निर्देशन स्वयं करने के बाद आप मुझ से पूछते हैं कि क्या हुआ ? अब तो मैं समझती हूँ कि खेल समाप्त हो गया है ।"

"कुछ बताओगी भी ! मैं कुछ नहीं समझा । कैसा नाटक मैंने किया है ।"

"भीतर जाकर छाया के बालक के दर्शन करिए । सब कुछ मालूम हो जायेगा ।" इतना कह तारा विदा हो गई ।

गोपालकृष्ण को यह भला प्रतीत नहीं हुआ । उसने भी ऐसी मुँह-फट पुत्रवधु को रोकने का यत्न नहीं किया । वह रमेश के पास आकर बोला, "तारा तुमसे पूछ कर गई है ?"

"क्या हुआ पापा ! मैंने तो उसे प्रातः से देखा ही नहीं ।"

"वह अपनी माँ के पास चली गई है । कह रही थी कि यहाँ अपमानजनक जीवन व्यतीत नहीं कर सकती ।"

रमेश के पाँव तले से भूमि खिसकने लगी । उसका मन तारा के प्रति क्रोध से भर गया । उसको ऐसा समझ आया कि वह छाया को बनते देख ईर्ष्या से जल उठी होगी यद्यपि उसको बच्चों के प्रति कोई आकर्षण नहीं । कदाचित् इसी कारण यहाँ से चली गई है । उसने भी निर्णय किया कि वह स्वयं तारा के पीछे नहीं जायेगा । उसको अपनी पत्नी का यह घृणात्मक व्यवहार बहुत ही बुरा लगा था ।

वह उदास चित्त उस दिन तारा से अपना भविष्य जोड़े रखने की बात पर मनन करता रहा । गोपालकृष्ण भी गम्भीर मुद्रा धारण किये हुए था । वह रमेश से कुछ नहीं बोला । वह अभी पति-पत्नी के मामले में हस्तक्षेप करना नहीं चाहता था । इस पर भी नर्स के निमंत्रण पर वह बच्चे को देखने गया तो नर्स ने मुस्कराते हुए कहा, "देखा, चाँद-सा मुखड़ा है ।"

गोपालकृष्ण को बालक सर्वथा रमेश की प्रतिलिपि प्रतीत हुआ । तारा का एकाएक घर से चले जाने में कारण उसको समझ आ रहा था । उसे तारा द्वारा रमेश पर लगाये आरोप स्मरण हो आये । छाया

के प्रति भी उसने घृणा का प्रदर्शन किया था। अब सब बातें गोपाल-कृष्ण के मस्तिष्क में स्पष्ट हो गयीं कि तारा क्यों अपने पति पर सन्देह करती थी और तारा के पिता ने उसे छाया को नारी-आश्रम भिजवाने का सुझाव दिया था।

वर्तमान विकट परिस्थिति में गोपालकृष्ण अपने समधियों से झगड़ा होने की आशा कर रहा था। इस पर भी वह रमेश के सम्मुख उसको यह नहीं कह सका कि जो कुछ हुआ, बहुत बुरा हुआ है और बिरादरी में उसकी नाक कटने वाली है।

: ३ :

अगले दिन गोपालकृष्ण के कार्यालय चले जाने के अनन्तर रमेश ने छाया के कमरे में पदार्पण किया। छाया कलेवा करने के बाद आँ- मूंदे विश्राम कर रही थी। मुन्ना सो गया था। रमेश चुपचाप उस पलंग के समीप पड़ी कुर्सी पर बैठ गया। इस पर भी छाया व आभास हुआ कि कोई कमरे में आया है। उसने आँखें खोलीं औ रमेश को देख मुस्करा दी।

"कैसी हो छाया !" रमेश ने पूछा।

"मुन्ने को देखने आये हो ?" छाया ने उलटा प्रश्न कर दिया।

रमेश मौन रहा।

"लो, देखिए !" छाया मुन्ने के पास से उठ कर एक ओर बैठती हुई बोली।

रमेश टकटकी लगाये शिशु को देखता रहा—बिना कुछ बोले। आँखों को निश्चित किए हुए। बालक नींद में भी मुस्कराता प्रतीत होता था। छाया के कहा, "है न आपकी प्रतिलिपि !"

"इसकी सूरत रोशन से मिलती है।" रमेश एकाएक बोल पड़ा।

"नहीं ! वह तो मेरा भाई होने से इसका मामा है। सगा भाई होता तो रक्त में साम्य के कारण कुछ सूरत में भी समानता की सम्भावना होती। नर्स और डाक्टर का तो कहना है यह दूसरा रमेश

है। पापा भी इसकी सूरत देख विस्मय करते रहे। कुछ बोल नहीं पाये।"

रमेश ने गम्भीर मुद्रा धारण कर ली। वह छाया के विश्लेषण पर चकित था। कुछ क्षण तक विचार करने के उपरान्त उसने पूछा, "रोशन को तुमने भाई कब से मान लिया है ?"

"जब से आपने मुझे अपनाने का वचन दिया। आपके विश्वातघात करने पर भी वह भावना बदल तो सकती नहीं थी मुझ अभागन की।"

"पापा के सामने अभिनय तो बहुत सफलतापूर्वक करती रही हो छाया" रमेश ने व्यंग्य किया।

"हाँ और लगन से भी। सफलता का श्रेय तो आपको है। निर्देशक भी आप ही थे।"

रमेश मुस्करा दिया। उसको पहले दिन छाया का अपने पिता को परिचय देना स्मरण हो आया। वह छाया के मुख को निहारने लगा। वैसी ही सरलता थी परन्तु जब वह दृष्टि घुमा कर देखती तो एक आँख तनिक कुरूप दिखाई देती थी। एक आंख दूसरी से कुछ छोटी भी प्रतीत होती थी। छाया कुछ कृष भी हो गई थी—प्रसव के कारण। इस पर भी वह शान्त और प्रसन्न दिखाई देती थी। रमेश सोच रहा था कदाचित माँ बन जाने पर वह प्रफुल्लित दिखाई देती है। क्या हर स्त्री माँ बनना चाहती है ? इस प्रश्न के साथ उसके हृदय-स्थल में टीस सी उठी। उसे तारा के ख्याल ने व्याकुल कर दिया।

छाया अपनी आँख में तेजाब डालने के उपरान्त रमेश के व्यवहार में परिवर्तन अनुभव करने लगी थी। जब कल उसने सुना कि तारा मायके चली गई तो वह आशा करती थी कि रमेश अवश्य उसकी कुशलक्षेम पूछने आयेगा। उसने रमेश को उधेड़-बुन में लगे देख पूछ ही लिया, "तारा क्यों चली गई है ?"

"मैं नहीं जानता। मुझसे मिले बिना ही गई है।"

"उसको आपके पूर्व सम्बन्ध का पता चल गया है, मुन्ने का माथा आपसे मिलता है। वह इसको देखने आई थी। तत्पश्चात् पापा ने

बताया वह मायके चली गई है।"

"छाया ! मुझको विदित नहीं था कि तुम इतना सफल अभिनय कर सकती हो अन्यथा मैं तुमसे कभी विश्वासघात न करता। पापा को अभी भी विश्वास है कि रोशन तुम्हारा भाई है। भाई बहिन को इस प्रकार पतित नहीं कर सकता। अतः उन्हें भी सन्देह है कि हमारा परस्पर सम्बन्ध रहा है। यही कारण है उन्हें तुमसे अधिक सहानुभूति है। सच पूछो तो नाटक तुमने तेज़ाब आँख में डाल कर रचा। उससे तो पापा अपने समधियों तथा समाज की भी परवाह न करते हुए तुम्हारे सुख की बात सोचने लगे। अतएव इन परिस्थितियों में भी तुम्हें आश्रय दिये हुए हैं।"

"वे बुद्धिमान, सरल चित्त तथा प्रत्येक अवस्था में धर्म का पालन करने वाले हैं और उनका अनुमान गलत भी तो नहीं है।" छाया ने मुस्कराते हुए कहा।"

रमेश भी मुस्करा दिया और बोला, "परन्तु चिन्ता की बात यह है कि तुम पापा की पुत्री होने से समाज की दृष्टि में मेरी बहिन हो। मेरी सुसराल वाले भी यही समझ कर तुम्हें आदर देते रहे हैं। अब तारा ऐसी धारणा बना यहाँ से गई है कि उनकी भावनाओं को यहाँ ठेस लगेगी। हम सबकी बदनामी होना भी निश्चय है"

"मैं इसे न अपनी अथवा आपकी बदनामी समझूंगी क्योंकि यह सत्य है। रहा प्रश्न पापा की बदनामी का। उससे बचने के लिए एक बार मैंने प्रयत्न किया था, किन्तु ईश्वर को स्वीकार न था। मैं शेष कुकर्मों का फल भुगतने के लिए रह गई। अब भी मेरा निर्णय है, मैं पापा की मान प्रतिष्ठा पर आँच न आने दूँगी और स्वयं यहाँ से दूर चली जाऊँगी।"

"पर मैं तो कुछ और सोचता हूँ, छाया !"

छाया ने अपने नेत्र रमेश के मुख पर गाड़ दिए।

"मैं अपनी भूल सुधारने की बात सोचता हूँ। तारा के स्वभाव को मैं जानता हूं। वह लौट कर नहीं आयेगी जब तक मैं उसे

मनाने न जाऊँगा।"

"नहीं रमेश ! पापा की प्रतिष्ठा का प्रश्न मुख्य है। फिर तुम इस कुरूप स्त्री को लेकर करोगे भी क्या ?"

तुम्हारे लड़के का पालन-पोषण करूँगा। झगड़ा होने की सूरत में मैं तारा को खर्चा दे दूँगा यद्यपि वह अपनी इच्छा से गई है। मुझे वदनामी की परवाह नहीं।" रमेश भावुकता के आवेश में वह चला।

"कौन तुमको वदनाम कर रहा है ?" छाया ने उसके हृदय को टटोलने का प्रयास किया।

पूर्व इसके कि रमेश उत्तर देता, कुछ खटका होने से दोनों सतर्क हो गए। दृष्टि घुमाई तो यमुना को मुस्कराते हुए द्वार पर खड़े देखा।

"आओ यमुना ! वहुत दिनों वाद आई हो।"

"हाँ, ! पिछली वार तुम अनारकली वाज़ार में मिले थे। मैंने वताया था कि जितनी वार तुम भाभी के साथ हमारे घर आओगे, उतनी वार ही मैं आ सकूँगी। तुम आये नहीं, इसलिए मैं भी न आ सकी।"

"ओह ! आज आने का कोई विशेष कारण है क्या ?"

"हाँ ! भाभी मिली थी। उसने मुझसे कहा कि मैं भैया की कुशलक्षेम पूछ आऊँ। साथ ही उसने यह भी वताया कि छाया वहिन के लड़का हुआ है। अतः मुन्ने को देखने चली आई हूँ।" यमुना छाया के पलंग पर वैठ मुन्ने को देखने लगी।

"वहुत सुन्दर बालक वनाया है, वहिन।"

छाया यमुना के मुख पर उसके मन के भाव पढ़ने का यत्न करने लगी। वह इतना तो जानती थी कि रमेश के सव सम्वन्वियों को ज्ञात हो गया था कि लाला गोपालकृष्ण की मुख-ज्ञोली वेटी गर्भवती थी परन्तु उसे विस्मय होता था कि किसी ने उसकी निन्दा नहीं की थी। सव यही कहते सुने गए कि 'मनुष्य भूल करता है। मनुष्य का कर्त्तव्य है कि भूल की पुनरावृत्ति से वचे, परन्तु जव तक वह दूसरों को

हानि नहींपहुँचाता, घृणा का पात्र कैसे हो सकता है। फिर छाया साथ तो धोखा हुआ है। सभी गोपालकृष्ण की धर्मपरायणता की प्रश करते थे। क्या ये लोग आर्यसमाजी हैं ? इस कारण उदार विच के हैं अथवा गोपालकृष्ण से डरते हैं ? उनका दवदवा है सव सम्वन्धि पर। छाया ने कई वार इस विषय में विचार किया था।

यद्यपि यमुना को छाया पहली भेंट में ही सरल चित्त लड़की र और दोनों घुल-मिल गई तो भी यमुना का उसके पास आना बहुत वार हुआ। रमेश विवाह के वाद तो वह भी अपने निर्णय पर अ रही कि जैसा रमेश उनकी खवर लेने आयेगा वैसे ही वह उसके जायेगी।

जिस दिन छाया द्वारा आँख फोड़ लेने की सूचना पाई उस वह आने से रुक न सकी। तब उसको विदित हुआ था कि छाया भार से दुःखी थी और इस पाप के पिण्ड से मुक्ति पाने की इच्छ थी। सम्वन्धियों में यह वात विख्यात हो गई थी कि उसके भाई ने पतित किया। इस पर भी यमुना को नारी के नाते छाया से सहानु थी। उसके लड़का होने का समाचार पा वह सीधी कोठी में आ घ थी।

तारा ने उसको यह नहीं वताया था कि वह स्वयं रूठ कर म जा वैठी है।

छाया को यमुना के मधुर व्यवहार से प्रसन्नता हुई। उसने स्पष्ट करने के निमित्त कहा, "यमुना वहिन ! तारा भाभी तो व को देखते ही घर से भाग गई। मैं सोचती हूँ क्या तुमको भी अपशकुन ही प्रतीत होता है क्योंकि यह पाप का प्रतीक है।"

"ये व्यर्थ की वातें मैं नहीं मानती। इन्सान की भी कुछ कीम या नहीं।"

"सवल तथा चरित्रवान की कीमत होती है। मेरे इस कृत्य तो कोई ठीक वुद्धि रखने वाला व्यक्ति इन्सानियत की परिधि मे नहीं मानता।"

मेरा विचार इससे उलटा है। तुम्हारा इसमें क्या दोष है। इस सुन्दर बालक को देख कर इन्सान का क्या कर्त्तव्य है। क्या इसका गला घोंट दिया जाये अथवा इसको जन्म देने वाली माँ से दुर्व्यवहार किया जाये ? कल मैं इंग्लैंड के जीवन पर एक पुस्तक पढ़ रही थी। उसमें लिखा था वहाँ तीस प्रतिशत सन्तान वर्णसंकर होती हैं किन्तु उनका पालन-पोषण सरकार वैसे ही करवाती है जैसे सामान्य बच्चों का होता है। इतिहास साक्षी है कि वर्णसंकर सन्तानें भी देश की महान नागरिक बनी हैं। मुख्य बात उनकी शिक्षा-दीक्षा और आत्मा तथा मन पर अच्छे संस्कार डालने की है। उदाहरणार्थ महाऋषि व्यास, गुरु द्रोणाचार्य आदि ये वर्णसंकर ही तो थे। यदि उस दृष्टि से देखा जाये तो पाँचों पाण्डव भी वर्णसंकर ही थे।"

छाया यमुना को अपने पक्ष में युक्तियाँ देते सुन गद्‌गद् हो गयी। वह भीरु निकला जिसने एक अबला सुन्दरी को अपनी सहवासिनी बनाने में सफल होने के अनन्तर एक अन्य तरुणी से विवाह कर लिया। अब वह भी उसको छोड़कर चली गई है। न प्रेम निभाया न गृहस्थ। वह अपने अतीत पर मनन करता हुआ चुपचाप बैठा था। मुन्ना जाग पड़ा था और यमुना उसको गोद में उठा मुस्कराने, पुचकारने लगी। परन्तु वह चिल्ला उठा।

"इसको भूख लगी है।" छाया ने कहा और उसकी गोद में डाल वक्ष के साथ लगा, दूध पिलाने लगी। बच्चा शान्त हो गया। छाया और यमुना तारा की बातें करने लगीं। यमुना की पढ़ाई की बात चली तो उसने कहा, "पढ़ाई समाप्त कर चुकी हूँ। अब सिलाई सीखती हूँ और अवकाश में पुस्तकें पढ़ती हूँ। तुम ठीक हो जाओ तो कुछ दिन मेरे पास आकर रहो।"

"आऊँगी यदि तुम्हारी माताजी पसन्द करेंगी तो।"

"उन्हें क्यों आपत्ति होगी ? उनको तो तुम सदृश्य स्त्रियों से हार्दिक सहानुभूति है। वह अधिक पढ़ी हुई नहीं। रामायण, महाभारत आदि ग्रंथ का खूब अध्ययन करती हैं। उनका कहना है नारी की अवस्था

आदि काल से क्षीण रही है। अनुशासन, संयम, लाज आदि शब्द कदाचित हमारे पूर्वजों ने नारियों के लिए ही बनाये होंगे। भूल सभी इन्सान करते हैं लेकिन नारी यदि कोई भूल कर बैठे तो समाज और परिवार की प्रतिष्ठा पर वज्रपात होना समझा जाता है। इस कारण माँ अपने जीजाजी अर्थात् रमेश के पापा के उदार विचारों का बहुत आदर करती है।

"तुमने रमेश की सगाई तथा विवाह के अवसर पर देखा होगा, कितनी शान्तिपूर्वक वह सब कुछ करती रहीं। किसी प्रकार का झगड़ा नहीं हुआ अन्यथा ऐसे अवसरों पर जहाँ चार स्त्रियाँ इकट्ठी होती हैं, वहाँ झगड़ा अवश्य होता है।"

छाया मौन धारण किये सुनती रही। वह मन ही मन ईश्वर का धन्यवाद करती थी कि ऐसी पतित अवस्था में पहुँच कर भी उसको गोपालकृष्ण तथा यमुना जैसे सहायक मिले अन्यथा उसकी क्या दुर्दशा होती। तारा का दुखी होना अथवा ईर्ष्या की अग्नि में जलना वह स्वाभाविक मानती थी। वह स्वयं भी तो उसको हंसता-खेलता देखकर जलती थी। नारी पुरुष पर एकाधिकार चाहती है। इसलिए किसी अन्य स्त्री का उनके मध्य होना उसके लिए असह्य है। उसने अपने मन की बात यमुना के सम्मुख भी कह दी।

"तारा का यहाँ से चले जाना मुझे बेचैन कर रहा है।"

यमुना ने रमेश की ओर देखा। वह आँखें मूंदे विचारों में तल्लीन था। देखने से ऐसा लगता था वह सो रहा है। अतः यमुना ने धीमे स्वर में कहा, "यह तो वह मेरी भाभी पर उलटी खोपड़ी की है। अमीर घर की है तो भी इन्सानियत छू तक नहीं गई। हर समय अपने माता-पिता की श्रेष्ठता जतला कर दूसरों को निकृष्ट सिद्ध करने का प्रयास करना भला कहाँ की सुहृदयता है। माता-पिता की महानता का गर्व सन्तान को होता ही है परन्तु तारा भाभी तो अभिमान की पुतली है।"

"वह तुम्हारे भैया से पूछ कर भी नहीं गई। पापा इससे चिन्तित हैं।"

"चयन भी तो उन्होंने ही किया था।" यमुना ने व्यंग्य कसा।

छाया ने अधिक बात करनी उचित नहीं समझी। मुन्ना दूध पी चुका तो यमुना ने उसको अपनी गोद में ले लिया।

"इसकी नाक तो रमेश से मिलती है।" वह रमेश की ओर देखती हुई बोली।

शब्द रमेश के कानों में पड़े— हृदय में बाण की भाँति चुभे। वह वहाँ से उठकर चला गया और अपने कमरे में जा भविष्य के विषय में मनन करने लगा।

इन्हीं दिनों एक और परिवर्तन हुआ। गोपालकृष्ण ने अपनी वसीयत लिखने और काम से अवकाश ग्रहण करने की घोषणा कर दी। उसकी आयु साठ वर्ष की हो रही थी। एक बार रक्तचाप बढ़ने के कारण वह बहुत चिन्तित हो गया था कि किसी दिन उसकी जीवन-लीला समाप्त हो सकती है। अतः अपनी पूर्ण सम्पत्ति और ठेकेदारी का स्वामी अपने पुत्र रमेश को बना दिया। ठेकेदारी का कार्य एक फर्म के नाम से चलता था। उसके भागीदारों में रमेश का नाम पहले भी था। वसीयत के बाद रमेश ही इस फर्म का सर्वेसर्वा हो गया।

जब तक छाया ने मुन्ने को जन्म नहीं दिया, गोपालकृष्ण छाया के नाम कुछ धनराशि अपनी वसीयत में लिखने की इच्छा रखता था। अब उसके इस विचार में तनिक परिवर्तन आया। उस बालक को देख कर गोपालकृष्ण के सन्देह की पुष्टि होती थी कि छाया को पतित करने वाला रमेश ही है। तारा का उस दिन पति से मिले बिना चले जाना उसके मस्तिष्क में हलचल मचाने वाला सिद्ध हुआ था। इस कारण उसको ऐसा समझ आया कि यह दुर्घटना परिवार पर अपना प्रभाव निकट भविष्य में अवश्य डालेगी और छाया को अपनी सम्पत्ति से भाग देना उचित नहीं। इस पर भी उसने वसीयत में यह लिख दिया कि जब तक छाया का पुत्र जीविकोपार्जन के योग्य नहीं होगा, डेढ़ सौ रुपया मासिक उसको फर्म की ओर से मिलता रहेगा।

रमेश ने इस वसीयत को पढ़ा और छाया की समस्याओं पर

सामूहिक रूप में विचार करने लगी। कभी वह यह भी सोचता कि पापा ने उसके रहस्य को जानने के अनन्तर भी छाया के लिए आर्थिक व्यवस्थापक कर दी है तो वे निकट भविष्य में यह भी मान लेंगे कि छाया उनकी पतोहू का स्थान गृहण कर ले। रमेश के हृदय में छाया के प्रति क्यों सहानुभूति और प्रेम उमड़ रहा था, वह स्वयं भी न समझ सका। छाया का रूप पहले से कुछ बिगड़ा ही था। कदाचित रमेश सन्तान चाहता था जो तारा उसको न दे सकी थी और न ही उसके लौट आने की वह उपेक्षा करता था। अत: किसी अन्य को जीवन संगनी बनाने की बजाय पुरानी प्रेयसी का पाणिग्रहण करना अधिक सुगम और रसमय था। इस प्रकार छाया से किए गए अन्याय का प्रायश्चित भी किया जा सकता था।

रमेश इस स्तर पर विचार करता था। यद्यपि यमुना की छाया से वार्ता ने इस विचार को गति प्रदान की थी, तो भी कई दिन बीतने पर उसको पिता से आँखें चार करने का साहस न होता। वह तारा की सुध लेने ससुराल भी नहीं गया। उसकी अवस्था एक अपराधी की सी थी।

छाया अब चलने फिरने लगी थी। मुन्ना चालीस दिन का हो गया था। छाया ड्राइंग रूम में आकर बैठने लगी थी। रमेश से बातें भी कर लेती। रमेश अनुभव करता कि पापा ने मुन्ने के जन्म पर खुशी नहीं मनाई। यदि उसका छाया से विवाह हुआ होता तो इस बालक के जन्म पर समस्त बिरादरी में लड्डू बाँटे जाते। उस समय कितनी खुशियाँ मनाई जातीं और छाया भी कितनी प्रसन्न होती। तो क्या यह सब कुछ उसकी भूल का परिणाम है? एक परिवर्तन वह और भी देख रहा था कि पापा को उसका छाया के साथ बैठना अथवा बात करना भी बुरा लगता है। वह स्वयं जहाँ छाया के साथ अधिक समय व्यतीत करने की इच्छा करता, वहाँ गोपालकृष्ण उसका कार्यालय के समय कोठी पर रहना ठीक नहीं मानता था।

दो सप्ताह के बाद तारा का पिता सन्तराम गोपालकृष्ण और रमेश

से मिलने आया। कुशलक्षेम पूछे जाने के अनन्तर तारा के विषय में बात चली।

"तारा कब तक मेरे घर में बैठी रहेगी, गोपालकृष्ण जी ?"

"अभी तो थोड़े ही दिन हुए हैं।" गोपालकृष्ण व्यंग्य भरी हँसी हँस कर बोला, "मेरे घर के द्वार सदैव उसके लिए खुले हैं। मैं आशा करता था जब आप अथवा आपके घर से कोई इधर आयेगा, तारा साथ चली आयेगी।"

"लेकिन हमारी भावनाओं को गहरी चोट लगी है, लालाजी।"

"उसका उपचार मैं करने को तैयार हूँ यद्यपि मैं इसे भ्रम मात्र ही समझता हूँ।"

पूर्व इसके लाला सन्तराम कोई उत्तर देता, रमेश बोल पड़ा। उसने कहा, "पापा ! यह आश्वासन देना आपकी उदारता है। मैं जानना चाहता हूँ कि तारा को शिकायतक्या थी। उसने क्या आरोप हम पर लगाया है, जिस कारण इनकी भावना को ठेस लगी है।"

"बरखुरदार ! कोई भी पत्नी अपने दाम्पत्य जीवन में किसी अन्य स्त्री का हस्तक्षेप सहन नहीं कर सकती। उसके विचार से तुमने एक आदर्श पति का कर्तव्य पालन नहीं किया।"

"मैं इस आरोप का खण्डन करता हूँ। उसको भ्रम हुआ है और वह एक आदर्श पत्नी का कर्तव्य भूल आपकी शरण में जा पहुँची। मुझ से अपने मन की बात कहती तो मुझे सफाई देने का अवसर मिलता। यह तो आपकी ज्यादती है, पापा।"

"बेटा ! स्त्री का मन काँच के समान है। उस पर हलकासा प्रहार हुआ और वह टूटा। तुम्हारी सफाई उसको जोड़ न सकती थी। इसलिए वह अपना दुखड़ा रोने माँ के पास जा पहुँची। तुममें तनिक व्यावहारिक बुद्धि होती तो वहाँ आकर उसको समझाते और हम भी उसे तुम्हारे साथ भेजने पर विवश करते।"

"मुझमें कितनी बुद्धि है, आपको बहुत पहले सोचना चाहिए था। आपकी लड़की के पाँव की तो मेंहदी उतरती थी न। मुझे उपदेश देने के

बजाय लड़की के दिमाग की चिकित्सा कीजिए। मैं विवश हूँ" रमेश भी आवेश में आकर बोला।

गोपालकृष्ण ने हाथ के संकेत से उसको मौन रहने को कहा। रमेश उठकर चला गया। गोपालकृष्ण ने सन्तराम को विनीत स्वर में कहा, "आजकल के लड़कों को यह पसन्द नहीं, लालाजी ! उनकी बीवियाँ बिना उनसे मिले मायके भाग जायें। बात कुछ होती तो मैं स्वयं चला आता। जैसे आपकी लड़की, वैसे मेरी लड़की।"

"आपकी लड़की के लच्छन तो सारी बिरादरी ने देख लिए हैं। भला सोचिए ऐसी अवस्था में तारा कैसे यहाँ रहेगी। आपने एक अज्ञात जाति की लड़की को लड़की बनाया और मेरी लड़की उसकी सौत बन कर इस घर में नहीं रह सकती।" सन्तराम भी आवेश में बोला।

"यह सब झूठ है। आप तनिक सम्हल कर बोलिए।" गोपालकृष्ण को क्रोध चढ़ आया।

"मैं नहीं, सारी बिरादरी में यही चर्चा है कब तक उस 'गलती' को घर में रख सकोगे, मैं भी देख लूँगा।" सन्तराम उठते हुए बोला।

"हाँ ! हाँ, देख लेना। गोपालकृष्ण भी क्रोध में कुर्सी से उठ कर खड़ा हो गया। छाया दोनों की वार्ता छुप कर सुन रही थी। वह दोनों महानुभावों को आपे से बाहर होते देख सहमी हुई वहाँ आ खड़ी हुई। पहले गोपालकृष्ण ने उसे देखा और उसके मुख से निकल गया, 'तुम'।

"हाँ ! पिताजी ! मैं आज यहाँ से जा रही हूँ। मेरे कारण आप रमेश भैया का जीवन बरबाद मत करिए।"

"नहीं। तुम नहीं जाओगी, मेरा आदेश है। तुम्हें जाने की स्वीकृति देने का अर्थ होगा कि हम लाला सन्तराम के आरोप को स्वीकार करते हैं। तुम यहीं रहोगी, छाया।"

रमेश भी अब फिर वहाँ आ गया था। वह अपने पिता के पक्ष में पुनः बोलने पर विवश हो गया। उसने कहा, "तारा सन्देहात्मक वृत्ति वाली है। यदि उसको कोई शिकायत है तो मुझसे निर्णय करे अन्यथा किसी प्रकार की जिम्मेदारी हम पर न होगी।"

यह एक प्रकार की धमकी थी। सन्तराम का दिमाग ठिकाने आ गया। वह उक्त बात का अभिप्राय भली भाँति समझ गया कि यदि तारा को ससुराल न भेजा गया तो रमेश सर्वथा उसका त्याग कर देगा और दूसरा विवाह करने के लिए स्वतन्त्र होगा। वह बेटी के प्रति वात्सल्यता के कारण इतना भावुक बन गया था कि कुछ क्षण के लिए वह यह भी भूल गया कि लड़की का बाप है और समधी से बात कर रहा है। क्रोध करने से उसको ही हानि अधिक होगी।

अब वह नम्र पड़ गया और नेत्र अवनत हो गए। कुछ क्षण रुक कर बोला, "गोपालकृष्ण जी ! मैंने आपकी बात समझ ली है। तारा को भी समझाने का यत्न करूँगा।" इतना कह वह अपनी मोटर में जा बैठा और ड्राईवर को घर चलने का आदेश दिया।

गोपालकृष्ण, रमेश और छाया उसकी मोटर को जाता देखते रहे। तीनों मौन थे। कोई नहीं बोला। गोपालकृष्ण का मन बहुत दुःखी था, प्रत्युत उसको अपने उत्तर पर भी ग्लानि हो रही थी। उसने कहा, "रमेश ! तुम आवेश में आ गए तो बात बढ़ गई। मुझे भी क्रोध आ गया। ऐसे अवसर पर हमें विवेक नहीं छोड़ना चाहिए। जो कुछ हुआ ठीक नहीं हुआ।"

"उन्हें भी तो शर्म नहीं आई। लोहे को लोहा काटता है। मैं समझता हूँ अब उनका दिमाग सही कार्य करने लगा है।"

"पिताजी !" छाया ने फिर हस्तक्षेप किया। अब वे कुर्सियों पर बैठ गए थे। उसने कहा, "यह अवस्था परिवार की प्रतिष्ठा का प्रतीक नहीं है। मुझ अभागन पर आपके बहुत एहसान हैं। मैं चली जाऊँगी तो तारा भी शान्त हो यहाँ लौट आयेगी।"

"नहीं। यह तो अब मान प्रतिष्ठा का प्रश्न बन गया है। तुम्हारे चले जाने का अर्थ है, बिरादरी के आगे झुक कर अपना दोष स्वीकार करना। तुम जब बेटी बन मेरे परिवार का अंग बन चुकी हो, तुम्हें मैं यहाँ से कदापि न जाने दूंगा।"

"रहा प्रश्न मेरे तुम पर एहसानों का, यह भी निराधार है। तुम्हें

यहाँ आकर क्या मिला। मैं तुमको इस नन्हे बालक के साथ दर-दर की ठोकरें खाने के लिए घर से बाहर कर दूँ ! यह महा-पाप होगा। लोगों की जुबान कोई रोक नहीं सकता।" इतना कह कर गोपालकृष्ण मौन हो गया और अपने हाथ से छाया के बच्चे का कपोल सहलाने लगा। बच्चा हँस पड़ा। गोपालकृष्ण ने उसे गोद में ले लिया।

छाया का हृदय गद्गद् हो गया। नेत्र सजल हो आये। रमेश के मन में भी विशेष प्रकार की गुदगुदी हुई। उसने दीर्घ निःश्वास छोड़ा। 'काश ! वह छाया को संगिनी बना लेता और इस मुन्ने का पिता कहलाता।'

गोपालकृष्ण को मुन्ने को लाड़ से पुचकारता देख रमेश को ऐसा लग रहा था कि पापा सचमुच उसे अपना पौत्र मान प्यार कर रहे हैं। वह बहुत देर तक बालक का प्यारा मुखड़ा निहारता रहा। कुछ देर बाद उसे दूध पिलाने का समय हुआ तो छाया उसको लेकर अपने कमरे में चली गई। गोपालकृष्ण भी हाथ-मुख धो संध्या की प्रार्थना करने बैठ गया।

रमेश का मन उदास था। विचित्र परिस्थितियों ने घेरा था उसको। वह विक्षुब्ध अवस्था में छाया के कमरे में जा पहुँचा।

"आइए।" छाया ने स्वागत किया।

"मुन्ने को दूध पिला लिया ?" उसने पूछा।

"हाँ। बहुत कम भूख है इसको।"

"लेडी डाक्टर को बता कर कोई दवाई ले लो।"

छाया मुस्करा दी। "अभी दो मास का भी तो नहीं हुआ। दवाई क्या खायेगा बेचारा।"

"बहुत ही प्यारा बालक है। नाम क्या रखा है ?"

"जो आप कहें, रख दूँगी।"

"रवि रख दो। रोशन के नाम पर है।"

"और रमेश के नाम पर नहीं !"

रमेश बच्चे और छाया को देखने लगा। होंठों पर मुस्कराहट

खेल रही थी।

सबने भोजन इकट्ठे किया और तत्पश्चात् ड्राइंग रूम में बैठ रेडियो पर गाने सुनते रहे। छाया ने पुनः चर्चा छेड़ी किन्तु गोपालकृष्ण पर कुछ प्रभाव न हुआ। रमेश भी अपने पिता से सहमत था। छाया के चले जाने से तो तारा की दृष्टि में वह भी अपराधी सिद्ध होता था।

परन्तु अगले दिन पिता पुत्र दोनों के विस्मय का पारावार न रहा जब उन्होंने कार्यालय से लौट कर तारा को अपनी माँ के साथ कोठी में उपस्थित पाया।

तारा ने ससुर के चरण स्पर्श किये। गोपालकृष्ण ने उसको आशीर्वाद देते हुए पूछा, "कुशल से तो हो बहू ?"

तारा ने सिर हिला दिया। फिर इधर-उधर की बातें होने लगीं। विदा होते समय तारा की माँ ने गोपालकृष्ण और रमेश को सम्बोधन कर कहा, 'मैंने तारा को समझाया कि उसका यही घर है। पति और श्वसुर की सेवा से ही सदा स्त्री का मान बढ़ा है। जब वह आपके परिवार का अंग बन चुकी है, आप ही इसके दुःख, सुख मान-प्रतिष्ठा के लिए उत्तरदायी हैं।"

"चिन्ता न करो तारा की माँ। तारा हमारे घर की शोभा है। भ्रम और सन्देह से दूर रह कर इसे अपना घर समझेगी तो सुख पायेगी।"

इस प्रकार गोपालकृष्ण की नीति और सन्तराम की बुद्धिमत्ता के कारण एक अबला का जीवन बरबाद होने से बच गया। यद्यपि तारा को छाया तथा उसके बच्चे रवि से कुछ भी लगाव नहीं था, तथापि उसे माँ के घर से यहाँ अधिक शान्ति मिलती थी। मायके में तो दो सप्ताह में वह तंग आ गई थी।

रमेश उसके सम्मुख रवि से खेलता और तारा मौनदर्शक की भाँति देखती रहती। न वह कुछ बोलती और न ही इस क्रीड़ा में रमेश का साथ देती। ज्यूं-ज्यूं दिन व्यतीत होते जाते थे, उसको विश्वास

होता जाता था कि रवि रमेश का ही लड़का है। अब मन की बात ज़ुबान पर लाने का अर्थ था जीवन भर के लिए गृहस्थ जीवन से मुक्ति। उसके पिता ने रमेश के चेतावनी रूपी शब्द तारा के सम्मुख दोहराये थे। तभी तो वह अपनी विवशता और भविष्य का विचार कर आने के लिए तैयार हुई थी।

अब वह चाहती थी कि उसकी भी सन्तान हो जाय पर तीन मास बीत जाने पर भी वह गर्भ धारण न कर सकी। उसने लेडी डाक्टर से निरीक्षण कराया और उसकी सम्मति माँगी। लेडी डाक्टर ने स्पष्ट कह दिया, "तुम्हारी सन्तान होने की आशा नहीं है। तुम पढ़ी लिखी लड़की हो। अतः तुमको यह विचार छोड़ अपने मानसिक सन्तुलन को ठीक रखने का यत्न करना चाहिए।"

उस दिन के अनन्तर तारा अपने जीवन में एक स्थाई निराशा के वातावरण में विचरने लगी। उसको सब फीका-फीका प्रतीत होता। गोपालकृष्ण को पता चला तो उसने भी चिन्ता प्रकट की। उसने डाक्टरों का पता लगाया और एक दिन रमेश के साथ तारा को बम्बई भेज दिया। वहाँ एक प्रसिद्ध डाक्टर ने तारा का निरीक्षण किया और उसको भी सफलता में सन्देह था। इस पर भी वह किसी आसामी को ऐसे छोड़ देने का स्वभाव नहीं रखता था। उसने एक सप्ताह की दवाई देकर कहा, "यह दवाई खाइए और एक सप्ताह पश्चात् फिर देखूंगा।"

रमेश सप्ताह के लिए बम्बई के एक होटल में ठहर गया। तारा दवाई का सेवन करती और साथ में समुद्र तट पर हवा खाती। एक सप्ताह बाद डाक्टर ने एक मास इसी औषधि का सेवन करने को कह दिया। उसका कहना था एक मास बाद ही परिणाम का पता चल सकता है। तारा डाक्टर के आश्वासन पर गर्भ धारण करने के सपने देखने लगी।

कुछ दिन बाद एक अन्य घटना घटी। वे बम्बई के 'म्यूज़ियम' में घूम रहे थे। एक युवक ने तारा का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करते

हुए पुकारा, "हैलो मिस तारा ! तुम बम्बई में हो !"

"ओह । मिस्टर व्यास ! बहुत दिन बाद मिले हो ।"

"ओह भाग्य हमारे ।" व्यास मुस्कराता हुआ बोला और रमेश की ओर देखने लगा ।

"यह मेरे······"

"समझ गया । कब हुई शादी ?"

"एक वर्ष से अधिक हो गया है ।"

"हनीमून मनाने अब आई हो ?"

"नहीं । यूं ही घूमने ।"

"तो आईए । आज डिनर इकट्ठे खायेंगे ।"

तारा ने रमेश के मुख पर देखा । वह मुस्करा रहा था । तारा ने स्वीकृति दे दी ।

मिस्टर व्यास तारा के कालेज का पुराना साथी था । वह बी० ए० के प्रथम वर्ष में फेल हुआ तो कालेज छोड़ अपने घर अहमदाबाद चला गया । लगभग तीन वर्ष के अनन्तर दोनों की भेंट हुई तब भी पहचानने में कठिनाई नहीं हुई प्रत्युत कालेज के बीते दिनों की स्मृति सजीव हो उठी ।

व्यास भी रमेश और तारा के संग घूमता रहा । इस बीच उसने बताया कि वह परेल में एक कपड़ा मिल का मैनेजर है । तारा ने उसकी पढ़ाई के विषय में पूछा तो वह बोला, "अनुत्तीर्ण होने पर फिर कालेज नहीं देखा । डैडी के कहने पर व्यापार में लग गया और अब छः मास से बम्बई में हूँ ।"

तारा उससे यह भी पूछना चाहती थी कि उसका विवाह हो चुका है अथवा नहीं किन्तु रमेश के सामने पूछने का साहस नहीं हुआ । इस पर भी उसकी बातों और 'ताज' में डिनर खिलाने से तारा समझ गई कि वह अभी तक अविवाहित है ।

व्यास के साथ ताज में तारा डिनर खा कर अपने होटल लौटी तो बहुत प्रसन्न थी । वह नित्य व्यास से मिलने लगी । व्यास को यह भी

पता चल गया कि वह बाँझपन की चिकित्सा कराने बम्बई आई है। परिणामस्वरूप उनका मेल-जोल बढ़ने लगा। मिस्टर मनुभाई व्यास तारा के होटल भी आने लगा।

निश्चित दिन रमेश तारा के साथ डाक्टर से मिला। डाक्टर ने कहा कि बहुत थोड़ा सुधार है। एक सप्ताह औषधि और खा लीजिए। फिर वह निश्चय से बता सकेगा कि यह केस ठीक हो सकता है अथवा यह असाध्य बाँझपन है।

अब रमेश का विचार वापिस लाहौर जाने का बन गया। उसको जहाँ डाक्टर लोभी प्रकृति वाला प्रतीत हुआ, वहाँ वह व्यास के तारा से सम्पर्क बढ़ने के कारण व्याकुल हो गया। परन्तु तारा ने कह दिया, "मुझे ऐसा लगता है मैं इसी डाक्टर से ठीक हो जाऊँगी। मैंने उसके क्लीनिक में लेडी डाक्टर खाण्डेलकर से भी बात की है। उसका कहना है बम्बई का जलवायु स्त्रियों के लिए अति स्वास्थ्यप्रद है। इससे अधिक लाभप्रद पूना का पानी है। उसने अनेक ऐसे उदाहरण बताये कि पूना में एक वर्ष वास करने से बिना इलाज के सन्तान हो गई।

"अतएव मैं कुछ दिनों के लिए पूना जाना चाहती हूँ। यदि धन चूक गया है तो लाहौर से मँगवाने की अपेक्षा डैडी के बम्बई स्थित कार्यालय से ले लेंगे और कुछ दिन के लिए पूना में रहेंगे। मिस्टर व्यास का वहाँ अपना मकान है। उसने वहाँ हमारे निवास का प्रबन्ध करने का वचन दिया है।"

रमेश भौंचक्का रह गया। वह व्यास से तारा के बढ़ रहे सम्पर्क को सन्देह की दृष्टि से देखता था। अतः वह तारा के उस सुझाव पर रात भर विचार करता रहा। बहुत मनन करने के अनन्तर उसने निर्णय कर लिया और रात के तीन बजे से पहले नहीं सो सका।

प्रातः साढ़े पाँच बजे बैरे ने द्वार खटखटाया उस समय वे 'बैड टी' पिया करते थे। तारा ने उठ कर द्वार खोला। चाय बना कर तारा ने रमेश को जगाया तो उसने कह दिया, वह रात भर सोया नहीं, इसलिए अल्पाहार नहीं करेगा और सोयेगा।

तारा कलेवा कर घूमने चली गई और रमेश मीठी नींद सोता रहा। वह टैक्सी कर सीधी मनुभाई व्यास के कार्यालय पहुँची।

व्यास तारा को अकेला देख बहुत प्रसन्न हुआ। थोड़ी देर शिष्टाचार निभाने के पश्चात् वह उसको अपनी कार में घुमाने ले गया।

जूह के किनारे सपाट पत्थर पर बैठे लहरों का आनन्द लेते हुए दोनों बातें कर रहे हैं—प्रेम रस में डूबे हुए। कालेज के मधुर दिनों की याद उनकी वार्तालाप का विषय है। साथ-साथ सट कर बैठे हैं। तारा ने व्यास को कनखियों से देखते हुए पूछा, "ऐसी पिकनिक कितने वर्ष बाद करने को मिली है, व्यास !"

"यह पिकनिक नहीं कहाती तारा। यह मधुर मिलन उससे भी बढ़ कर जब कालेज की लायब्रेरी के एक कोने में तुम कभी मेरे सामने बैठ कर पढ़ती थीं। सच मानो पुस्तक में छपे काले अक्षरों पर तो दृष्टि टिकती ही न थी। तुम्हें ही एकान्त में निहारा करता था। किन्तु आज तो······"

व्यास कहता-कहता रुक गया। दोनों की आँखें मिलीं और व्यास ने तारा का कोमल हाथ दबा दिया। तारा की भाव-भंगिमा अनुपम थी। व्यास उसे देखता रहा।

दो घण्टे तक वे इकट्ठे रहे। व्यास तारा को कार में ही होटल छोड़ गया। रमेश उस समय नहाकर स्नानागार से आया था। होटल के रेलिंग पर हाथ रख उसने नीचे झाँका तो उस की दृष्टि कार से उतरती तारा पर जा टिकी। रमेश देखता खड़ा रहा। तारा ने हाथ उठा कर मुस्कराते हुए व्यास को कहा, 'बाई-बाई।' और व्यास कार में लौट गया।

तारा ऊपर आई तो रमेश कुर्सी पर बैठा अपने रात वाले निर्णय का अवलोकन कर रहा था। तारा को व्यास की संगति में देख उसको लगा कि जो निर्णय उसने किया है, ठीक ही किया है।

बैरा नाशता रख गया था। रमेश अपने विचारों में तल्लीन बैठा था। तारा ने कमरे में पग रखा तो वह उसकी ओर देख कर मुस्करा

दिया।

"अरे ! अभी नाशता लेने लगे हैं क्या ?" तारा ने विस्मय दृष्टि मेज़ पर फेंकते हुए पूछा।

"हाँ ! मोटर की आवाज़ सुन रुक गया था। सोचा तुम ऊपर जाओ तो इकट्ठे लेंगे।"

तारा का मुख एकाएक पीला पड़ गया। जैसे वह रँगे हाथों पकड़ी गई हो। उसने मन के भावों पर नियन्त्रण करते हुए कहा "आप खाइए मुझे भूख नहीं है।"

"थोड़ा-सा।" रमेश ने शिष्टाचार के नाते फिर कहा।

तारा साथ देने के लिए राज़ी हो गई। न रमेश ने उसका कार्य-क्रम पूछा और न तारा ने बताया कि सुबह-सुबह उसको कहाँ जाना पड़ गया।

अल्पाहार समाप्त हुआ तो रमेश तारा को सम्बोधन कर बोला, "मैंने एक योजना बनाई है। तुम्हारे डैडी को तार दे दिया जाय। वे आ जायेंगे और तुम उनके संरक्षण में पूना व्यास के मकान में रह सकोगी। जब तुम्हारा मन भर जाये, लाहौर चली आना।"

तारा असमंजस में पड़ गई। वास्तव में वह लाहौर लौट जाने के लिए लालायित नहीं थी। छाया की विद्यमानता में उसको वहाँ शान्ति न मिल सकती थी। बम्बई में वह प्रसन्नवदन दिखाई देती थी। फिर व्यास की संगति में तो उसका रूप-रंग निखरने लगा था। वह गुलाब की पँखुड़ी की भाँति खिली रहती थी।

इस प्रसन्नता में विशेष कारण था रमेश का उसको पूर्ण स्वतन्त्रता देना। अपने पिता की उपस्थिति में ऐसी उच्छृंखलता सम्भव नहीं थी। रमेश ने उसको समझाने की अपेक्षा यही पग उठाना ठीक समझा था। अतएव उसने गम्भीर भाव से रमेश के मुख पर अपनी मोटी-मोटी आँखों से देखा। फिर तनिक रुक कर अति विनीत स्वर में बोली, "तो आप मुझको छोड़ कर चले जायेंगे ?"

"तुम ही छोड़ने की योजना बना रही हो। तुमको मेरी अनु-

परिस्थिति में अधिक रस आयेगा, तारा।"

तारा अवाक् रह गई। वह रमेश के कटाक्ष का अर्थ समझ गई थी। रमेश ने उसके विद्रूप मुखड़े पर दृष्टिपात करते हुए कहा, "तुम्हारा पति होने के नाते तुम्हारे सुख का ध्यान रखना मेरा कर्त्तव्य है। मैं बम्बई में अधिक समय तक रह नहीं सकता और न आवश्यकता मानता हूँ। अतः यह सुझाव तुम्हारी इच्छा पूर्ति के हेतु दिया है।"

"मैं चाहती हूँ कि डैडी को आप कष्ट न देवें तो ठीक है। मुझे उनके साथ डाक्टर से मिलने में भी शर्म आयेगी। इस पर भी मैं विचार करूँगी और कल तक उत्तर दूंगी।"

"ठीक है। अवश्य विचार करो। डाक्टर के पास तुम व्यास को साथ लेकर जा सकती हो। डैडी तुम्हारी अन्य आवश्यकताओं तथा सुख का ख्याल करेंगे।"

तारा ने एक मार्मिक दृष्टि रमेश पर डाली और उसके सामने से उठ रेलिंग पर जा खड़ी हुई। बाहर सड़क पर जाती भीड़ को देखने लगी। वह सोच रही थी यह रमेश का व्यंग्य है अथवा सुहृदयता! व्यास की संगति उसको भली लगती थी और मन बम्बई में लग गया था तो भी रमेश की योजना सुन उदास हो गई थी। उसको ऐसा लग रहा था कि रमेश उससे पीछा छुड़ाने के निमित्त ऐसा कह रहा है।

परन्तु रमेश ने उसको अवसर नहीं दिया। न सोचने का, न विचार विमर्श का। वह इस विषय पर अपनी पत्नी से बात करना भी अपना अपमान समझता था। तारा के चंचल मन में छिपी उच्छृंखलता उससे छिपी न थी। उसने अपने श्वसुर को उसी दिन तार दे दिया और साथ ही एक्सप्रैस पत्र भेज दिया।

सन्तराम को तार मिला और वह चिन्तित हो बम्बई जाने की तैयारी करने लगा। तारा की माँ भी साथ जाना चाहती थीं, किन्तु सन्तराम का कहना था कि वह पूर्ण स्थिति बम्बई पहुँच कर लिखेगा। उसका अनुमान था कदाचित डाक्टर ने तारा को ऑपरेशन कराने की राय दी हो। इस कारण रमेश ने उसे तार दिया है।

तार उन्हें प्रातः मिल गया था और वह रात की गाड़ी से प्रस्थान करने की तैयारी करने लगा था। किन्तु किसी कारण वश जा नहीं सका। दुकान के काम से रुक जाना पड़ा।

अगले दिन रमेश का एक्सप्रैस पत्र भी मिल गया। अनुमान के अनुसार उसमें ऑपरेशन की बात नहीं लिखी थी। सन्तराम विस्मयपूर्ण हो अपनी पत्नी की ओर देख रहा था। तारा की माँ ने कहा, "लड़की पर खर्च करने से घबराते हैं। तभी आपको बुलाया है। जब तारा को लाभ की आशा है तो हम वहीं कुछ दिन रहेंगे।"

आखिर निर्णय हो गया। तारा के माता-पिता बम्बई के लिए प्रस्थान कर गए। उन्होंने लाला गोपालकृष्ण से मिलकर भी जाने की आवश्यकता नहीं समझी।

: ४ :

चार दिन के उपरान्त रमेश लाहौर लौट आया। गोपालकृष्ण को उसके लौटने की सूचना नहीं थी। अतः मोटर रेल के स्टेशन पर नहीं भेजी गई। रमेश अकेला रात के समय कोठी पहुँचा। गोपालकृष्ण को विस्मय हुआ। वह भोजन कर ड्राइंगरूम में बैठा समाचारपत्र देख रहा था। छाया अपने कमरे में बच्चे को सुला रही थी।

"तारा को कहाँ छोड़ आये हो, रमेश ?" उसने पूछा।

"उसका चित्त वहाँ जम गया है। वह आना नहीं चाहती थी। मैंने उसके पिता को सूचना दी और तारा के माता-पिता बम्बई पहुँच गए। उनकी लड़की उन्हें सौंप कर यहाँ चला आया हूँ।"

"मैंने तुम्हें लिखा था कि यदि डाक्टर को सफलता नहीं मिल रही तो घर चले आओ। समय नष्ट करने से लाभ न होगा।"

"आपके आदेश का पालन ही हुआ, पापा ! तारा ने इन्कार किया और मैंने उक्त पग उठाया।"

"विचित्र लड़की है।" गोपालकृष्ण के मुख से निकल गया।

अब छाया भी वहाँ आ गई थी और पिता-पुत्र का संवाद सुन रही थी।

"हाँ पापा।" रमेश ने कहा, "तभी तो उसने विचित्र साथी ढूँढ़ लिया है।"

"क्या मतलब ?" गोपालकृष्ण के माथे पर त्यौरी चढ़ गई।

"एक गुजराती युवक है—कारखानेदार। कदाचित् उसके कालेज का पुराना सहपाठी है। अब वह पूना में उसके मकान में जलवायु परिवर्तन के हेतु जाकर रहेगी।"

"तो बात यहाँ तक पहुँच गई है। तुमने उसको समझाया नहीं ?"

"वह स्वयं बहुत समझदार है। ऐसी औरत से कौन मग्ज़पच्ची करे।"

"सन्तराम सब कुछ जानता है ?"

"मैंने बताया नहीं।"

"तारा यहाँ आयेगी नहीं ?" गोपालकृष्ण ने दीर्घ निःश्वास छोड़ते हुए पूछा।

"मैं कुछ कह नहीं सकता पापा। वह इलाज कराने गई है। मैं उससे कह आया हूँ कि जब उसका मन भर जाये, लाहौर चली आये।"

गोपालकृष्ण इस भयानक तथा अपमानजनक स्थिति को भली-भाँति समझ रहा था। वह रमेश की बातों का अर्थ यह लगाता था कि दोनों ने स्वेच्छा से सम्बन्ध विच्छेद कर लिया है। उसने अधिक बात करनी उचित न समझी। छाया के तो नेत्र सजल हो गए। वह मौन प्रतिमा-सी सोफे पर बैठी थी। रमेश ने उसे देखा। उसका दुखी होना उससे स्नेह के कारण था। वह अपने आँसू रोकने का प्रयास करती हुई बोली, "मैं ही आपके परिवार पर आई सब विपत्तियों की जड़ हूँ, पापा।"

"तुम परिवार से बाहर हो क्या ?"

"ऐसा न समझना आपकी उदारता है। किन्तु सत्य तो यह है कि जब से मैं आई हूँ, देखती हूँ आपको शान्ति नहीं। मुझे यहाँ से जाने की स्वीकृति दे देते तो शायद तारा ऐसा कुकृत्य न करती।"

"मैं ऐसा नहीं मानता, छाया बेटी ! प्रत्येक मनुष्य अपने पूर्व

संस्कारों से प्रेरित हो कोई कुकर्म करता है और यह निश्चय जानो कि उसके फल से नहीं बच सकता। यह समझना कि तुम्हारे आने से ऐसा हुआ है मिथ्या कल्पना है। अयुक्ति संगत है।"

"पिताजी। कई मनुष्य ऐसे भी होते हैं जिन्हें दुनिया मनहूस कहती है। उनके सम्पर्क में आने अथवा दर्शनमात्र से ही विपत्ति आ जाती है। मैं भी अभागन वैसी हूँ।"

"यह मिथ्या बात है, छाया। कौन मनहूस है, निर्णय करना कठिन ही नहीं प्रत्युत असम्भव है।" गोपालकृष्ण ने मुस्कराते हुए कहा, "मुझे एक प्राचीन कथा स्मरण हो आई है।

"एक राजा था। उसके एक मंत्री ने शिकायत की कि नगर में एक ऐसा मनहूस व्यक्ति है जिसके दर्शन-मात्र से भोजन तक नसीब नहीं होता। राजा की इच्छा हुई कि वह भी उसके दर्शन करे। अतः उस व्यक्ति को बुलाया गया। राजा ने उस भद्र पुरुष को जो मनहूस माना जाता था, सिर से पाँव तक देखा और तत्पश्चात् अपने मंत्रीगण के साथ शिकार खेलने चला गया। उस दिन वह एक हिरण तक नहीं मार सका और जब तंग आ गया तो अपने प्रासाद की ओर लौट पड़ा।

दुर्भाग्यवश उसका रथ निर्जन वन में अटक गया। पहिये में दोष आ गया था। बहुत प्रयत्न के बाद सेवकों ने ठीक किया और बहुत रात बीते राजा प्रासाद में लौटा। वह निराशा, असफलता से खीझा हुआ भूखा प्यासा अपने भवन में आया था। मंत्री ने अहनी श्लाघा कराने के निमित्त नम्र स्वर में कहा, "महाराज! मैंने गलत नहीं कहा था। मनसूह के दर्शन किये थे, आज आपने। भोजन भी नसीब न हुआ।"

"यह सुनकर राजा क्रुद्ध हो गया। उसने आदेश दिया, "उस मनहूस व्यक्ति को कल सूली पर चढ़ा दिया जाये।"

"प्रातः काल उस पुरुष को पकड़ कर दरबार में पेश किया गया। मृत्यु दण्ड की घोषणा उसके सम्मुख कर दी गई। सूली पर चढ़ाने से पहल राज्य नियम के अनुसार उससे पूछा गया कि उसकी कोई अन्तिम

इच्छा हो तो बताये। वह पूर्ण की जायेगी।"

"वह व्यक्ति हाथ जोड़ कर महाराज को सम्बोधन कर बोला, "महाराजाधिराज! प्रजापालक! मेरी कोई इच्छा नहीं। यदि आज्ञा हो तो एक निवेदन अवश्य करना चाहता हूँ।"

राजा ने स्वीकृति दे दी। वह बोला, "महाराज! आपको मुझ मनहूस के दर्शन होने से कल भोजन नहीं मिला परन्तु मेरे तो प्राण लिए जा रहे हैं। मैंने महाराज के दर्शन पहली बार किये हैं। कहाँ भोजन न मिलना और कहाँ मृत्यु दण्ड!"

राजा उसका अभिप्राय समझ गया और तत्काल उस व्यक्ति को मुक्त कर दिया। राजा ने ऊँचे स्वर में कहा, "इसने हमें अपना कर्तव्य याद दिलाया है। कोई व्यक्ति मनहूस नहीं होता। प्रत्येक अपने किये का फल भोगता है। हमें कर्म करते समय कर्म की श्रेष्ठता पर मनन करना चाहिए।"

"इसलिए छाया सब अपने कर्मों के लिए तारा की भाँति स्वयं उत्तरदायी हैं। जब वह अपनी भूल स्वीकार कर पश्चात्ताप करेगी और क्षमा माँगेगी तो उस समय विचार कर लिया जायेगा।"

छाया के मस्तिष्क में बात स्पष्ट हो गई। रमेश विचार कर रहा था कि तारा सदृश्य पथ भ्रष्ट पत्नी पुनः उसके हृदय और घर में कभी स्थान पा सकेगी! उसकी बुद्धि तो ऐसा नहीं मानती थी।

कई दिन बीत गए। तारा का न कोई पत्र आया और न ही रमेश ने उसकी चिन्ता की।

छाया को लगा कि रमेश तारा के वियोग में दुःखी नहीं। वह उसके साथ पहले जैसा व्यवहार नहीं करता। मानो निकट भविष्य में वह ही उसकी संगिनी बनने वाली हो।

परन्तु छाया उससे दूर रहने का यत्न करती। रमेश के कमरे में तो जाती ही नहीं थी, बैठक में भी उसकी उपस्थिति में अब कम बैठती थी। वह सोचती पुरुष स्त्री की संगति का इच्छुक होता है। तारा से, रमेश उसकी उच्छृंखलता के कारण नाता टूट गया समझताहै। उसमें

रमेश का पुनः रुचि लेना छाया को अधिक व्याकुल कर रहा था। वह समझती थी कि वह उसके साथ सहवास का अभिलाषी है।

छाया केवल यमुना की संगति पसन्द करती थी। वह आती तो दोनों घूमने जातीं दोनों में घनिष्टता हो गयी थी। यमुना उसे अपने घर ले जाती और छाया वहाँ रात को भी टिक जाती थी। यमुना की माँ भी उससे स्नेह करती।

यमुना को पता तो था ही कि रमेश का छाया से सम्बन्ध रहा है। रवि की रूप रेखा रमेश जैसी ही थी। अतः वह अब भी रमेश की गतिविधियों पर दृष्टि रखती थी। उसको जब यह विदित हुआ कि रमेश तारा को बम्बई में छोड़ लौट आया है तो वह उसको बधाई देने आ पहुँची। पूर्ण कथा उसने छाया से सुनी तो उसने रमेश को सम्बोधन कर पूछा, "भाभी से छुटी पा गए हो रमेश ?"

"उससे लम्बी छुट्टी ले ली है।"

"यहाँ आयेगी नहीं ?"

"आशा नहीं है। पापा का कहना है कि भूल का प्रायश्चित कर कभी लौटेगी तो उसे क्षमा कर दिया जायेगा।"

"तुम क्षमा नहीं करोगे क्या ?"

"मैं कुछ नहीं जानता। वह अपने माता पिता के संरक्षण में है। जब विवाह कर लेगी, तभी मैं स्वयं को स्वतन्त्र मानूँगा।"

"तो अभी छाया के भाग्य खुलने में देरी है ?" उसने उपहास किया।

"हट, धूर्त्त कहीं की।"

"मैं धूर्त्त सही भैया, पर बात तो ठीक ही है। कहो तो तुम्हारी सिफारिश करूँ।"

"किससे ?"

"जिससे भी कहोगे।"

"कुँवारी बहिन की सिफारिश नहीं चलेगी। उसके लिए तुम्हें

पहले विवाह करना होगा।"

तब तक तो पाकिस्तान बन जायेगा।

"यह तुमसे किसने कहा है।"

"पिताजी और भैया का कहना है। मुसलिम लीग की माँग स्वीकार हो जायेगी।"

"किन्तु गाँधीजी और कांग्रेस को स्वीकार नहीं।"

"अन्त में मान जायेंगे। हिन्दुओं में मुसलमानों का विरोध करने का नैतिक साहस नहीं है। अंग्रेज मिस्टर जिन्हा के साथ हैं। कांग्रेस सदा की भाँति मुसलमानों को खुश करने के लिए झुक जायेगी।"

"यह मौसाजी की भविष्यवाणी है क्या ?"

"नहीं। जनक की। वह कहता है कांग्रेस वालों में वीर रस का अभाव है। लड़ाई झगड़े की बात से घबराते हैं। जहाँ संघर्ष की सम्भावना होती है, वहाँ मुसलमानों के नेताओं को बुला कर समझौता करने में ही अपना हित मानते हैं।"

"तो जनकराज का अभिप्राय है मुसलमान झगड़ा करेंगे ?"

"हाँ। मुस्लिम नेशनल गार्ड खूब तैयारी कर रहा है। युद्ध की समाप्ति के बाद, अंग्रेजों के सम्मुख सब से बड़ी वर्तमान समस्या हिन्दुस्तान को स्वराज्य देना है। पूर्ण स्वराज्य के प्रश्न पर जिन्हा गाँधी से सहमत नहीं। वह पृथक मुस्लिम देश चाहता है।"

"परन्तु पंजाब तो यूनिनिस्ट पार्टी का शासन है। वे भी मुसलिम-लीग के विरुद्ध हैं।"

"जनक का कहना है मुसलिमलीग के संगठन के आगे खिज़रहयात की एक न चलेगी। आखिर वह भी मुसलमान है। समय पर उनका ही साथ देगा।"

रमेश राजनीति में अधिक रुचि नहीं रखता था। उसने विषय को बदलते हुए कहा, "तब तो तुम्हारा विवाह शीघ्र हो जाना चाहिए, यमुना।"

यमुना ने नेत्र अवनत कर लिए और उठ कर चल दी।

आश्चर्य और विषाद का पारावार न था। वे ये सहन न कर सकते थे कि उनकी विवाहिता पुत्री किसी अन्य युवक के साथ एकान्तवास करे। माँ ने उसे बहुत समझाया किन्तु तारा पूना छोड़ने के लिए राज़ी न हुई। एक मास तक सन्तराम पत्नी सहित पूना में बैठा रहा।

व्यास हर शनिवार को पूना आता और तारा उसकी संगति में प्रसन्नवदन घूमती। रविवार को दोनों इकट्ठे 'रेस' देखने जाते। यदि व्यास जीत जाता तो तारा को बम्बई साथ ले जाता। दो दिन वहाँ उसको रख पूना भेज देता। सप्ताह में तीन दिन वह अपने माता-पिता के पास रहती।

एक मास पश्चात् तारा ने माँ से कहा, "मैं कुछ दिन के लिए अहमदाबाद जा रही हूँ।"

सन्तराम ने भी बेटी की बात सुनी। उसने आवेश में पूछा, "कब लौटोगी?"

"कुछ पता नहीं। व्यास के पिता बीमार हैं। दो सप्ताह तो लग ही जायेंगे।"

तारा की माँ तमक कर बोली, "तुम क्यों परिवार की प्रतिष्ठा समाप्त करने पर तुली हो। अब भी मेरे साथ लाहौर चल कर रमेश से क्षमा माँग लो। हमारे साथ जाओगी तो उसको सन्देह नहीं होगा। लाला गोपालकृष्ण बहुत भला व्यक्ति है, वह तुम्हें क्षमा कर देगा और रमेश को भी राजी कर लेगा।"

"मैंने उनका क्या बिगाड़ा है जो क्षमा माँगू। तुम्हें जाना हो तो लाहौर चली जाओ, माँ।"

इस वार्ता के अनन्तर एक शब्द भी तारा से नहीं कहा गया। सन्तराम पत्नी सहित अपने दुर्भाग्य पर आँसू बहाता हुआ लाहौर लौट आया। वह अपने समधी के सम्मुख होने में भी लज्जा अनुभव करता था। अतः उसने रमेश को फोन किया कि वह आकर अपनी पत्नी को इस गर्त्त से निकालने में सहायता दे क्योंकि कुछ भी हो तारा उसकी पुत्री थी। परन्तु रमेश के दो टूक उत्तर ने बात ही समाप्त कर दी।

गोपालकृष्ण को पता तो चल गया था कि सन्तराम लाहौर लौट आया था। पर वह विस्मय कर रहा था वह उससे मिलने नहीं आया। उसको सन्देह हुआ कि तारा के पथभ्रष्ट होने पर भी वह रमेश को गलत समझता होगा। वह स्वयं बहुत दिनों से आशा करता था कि सन्तराम तारा को समझा कर वापिस लाने में सफल हो जायेगा और रमेश को उसे पुनः अंगीकार करने की प्रार्थना करेगा। उसने रमेश से पूछा, "अपने श्वसुर से मिले हो ?"

"नहीं। टेलिफोन आया था मगर मैं गया नहीं।"

"उनकी बात तो सुन लेते।"

"व्यर्थ है। मेरा सम्बन्ध जिसके साथ था, वह चली गई। वे स्वयं भी बेटी को नहीं समझा सके। आपकी पुरानी मैत्री का भी विचार नहीं आया। मैं तो यह सम्बन्ध टूट गया समझता हूँ।"

"फिर भी तुम्हें एक बार उनकी बात सुननी चाहिए थी। कदाचित वे तुमसे कोई कानूनी कार्यवाई करने के विषय में विचार विमर्श करना चाहते हों। तुम्हारी पत्नी किसी अन्य ने हथियाली है। तुम कानून की सहायता ले सकते हो।

"मैं बहुत दिन पहले उसे माता-पिता के संरक्षण में छोड़ चला आया। कानून की सहायता की आवश्यकता नहीं रही। अब जो कुछ हुआ वह तो आपेक्षित था ही। मैं ऐसी स्त्री के लिए किसी प्रकार का यत्न करना नहीं चाहता।"

"तो कोई और संगिनी ढूंढ लो। तारा को मैंने खोजा था, वह तुम्हारे लिए उपयुक्त चयन नहीं था मैं इसे अपनी भूल मानता हूँ। अतः अब मैं लड़की की खोज नहीं करूँगा।"

रमेश यही तो चाहता था। छाया को राजी करना सरल कार्य नहीं था। एक सुअवसर पा उसने यमुना से कहा, "अब समय आ गया है कि तुम मेरी सहायता करो। पापा ने मुझको तुम्हारी भाभी लाने की स्वीकृति दे दी है।"

"सच"

"हाँ ! तुम्हें याद है तुमने सिफारिश करने की बात कही थी ।"

"हाँ ! परन्तु अभी मेरा विवाह नहीं हुआ ।" यमुना ने व्यंग्य भरी मुस्कान से उत्तर दिया ।

"अपनी सखी से तो बात कर ही सकती हो । मेरा अभिप्राय छाया से सिफारिश करने से है ।"

"तुम मुझको अपनी 'क्वालीफिकेशन' तथा अन्य विवरण दे दो मैं बात करूंगी ।" यमुना का कहना था ।

"अभी बताता हूँ तुझे !"

यमुना समझ गई कि अब रमेश उसको पीटेगा । वह वहां से भागती हुई बोली, "सिफारिश की फीस भी देनी होगी ।"

रमेश मुस्कराता हुआ उसकी ओर देखता रहा ।

यमुना ने बात चलाई और छाया के विचार पूछने का प्रयास किया । छाया ने इन्कार करते हुए कहा, "मुझको विवश करेंगे तो मैं कोठी छोड़ दूंगी ।"

"तो तुम किस शर्त्त पर मानोगी ?"

"पापा स्वयं मेरा कन्यादान करें तो ।"

"उन्होंने रमेश को स्वयं संगिनी ढूँढ़ने का अधिकार दे दिया है ।"

"तो तुमको यह प्रस्ताव ले कर पापा के पास जाना चाहिए ।"

"यह काम मेरे बस का नहीं, छाया ।"

"तो मत करो । जिसने मुझको बेटी बनाया वह मेरे विवाह की चिन्ता करेगा ।"

यमुना निरुत्तर हो मौन हो गई । रमेश को यमुना का कथन सुना दिया । वह सोचता पापा की इच्छा होती तो वे स्वयं छाया का उल्लेख करते । छाया की इच्छा के बिना पापा मानेंगे नहीं और न ही वह छाया से कहने के लिए तैयार होंगे । वह अपने पिता के स्वभाव को जानता था ।

विचार करने में कई सप्ताह बीत गए । पिता पुत्र में विवाह के विषय में फिर बात नहीं हुई । गोपालकृष्ण ने समझ लिया कि उसने

"नहीं ! मुसलमान ही होगा, मोया ! कर्फ्यू के कारण आज ही पहली सवारी मिली है। इसलिए सप्ताह भर की कमाई आज ही कर लेना चाहता है। लेकिन कान्ता से मिलना भी जरूरी है। दो आने ज्यादा ले लेगा जान थोड़े लेगा।"

तारा ने यमुना को कई बार संकेत किया किन्तु वह कान्ता से बातों में लगी रही। दस मिनट के लिए आई थी, पौन घण्टा लग गया। आख़िर तारा को कहना पड़ा, "तांगे वाला हमें गालियाँ दे रहा होगा। बहुत देर हो गई है, चलें।"

"तांगे वाले को रोक रखा है ?" कान्ता का ध्यान भी उधर गया।

"हाँ कान्ता मौसाजी ने सीधा ताँगा कर लेने को कहा था। अच्छा अब चलती हूँ। तुम कल आओगी न।"

"कोशिश करूंगी।"

नीचे ताँगे वाला, क्रोधित मुद्रा में उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। तारा और यमुना भी चुपचाप ताँगे में जा बैठीं। ताँगे वाले ने चाबुक उछाला और यमुना की ओर घूरता हुआ बोला, "इतने में तो मैं लारिंस गार्डन के दो चक्कर काट आता। तूं ने तो मेरी दिहाड़ी (रोजी) बर्बाद कर दी।"

"चलो जल्दी चलो। और पैसे दे देंगे।"

घोड़े की पीठ पर चाबुक लगाने का शब्द हवा में गूंज उठा और घोड़ा सरपट दौड़ने लगा। शाहलमी दरवाजे के भीतर अपने घर के पास यमुना ने ताँगे वाले को पैसे दिये तो वह झगड़ा करने लगा। चार आने अधिक देने पर भी वह बड़बड़ाता ही रहा। परन्तु यमुना और तारा घर के भीतर चली गयीं।

यह कर्फ्यू कदाचित छाया के एबट रोड की कोठी से शाहलमी दरवाजे यमुना के घर जाने के लिए ही खुला था। अगले दिन फिर दंगा आरम्भ हो गया और कई स्थानों पर अग्निकाण्ड हुए।

छाया और तारा मकान की छत पर शाम को जाकर बातें करती थीं और वहीं से नगर में हुए अग्निकाण्ड के कारण हुई लोगों की

अधिक सेवा कर सकते हो। यहाँ तो चारों ओर मृत्यु दिखाई देती है।"

गोपालकृष्ण मन से चाहता था कि वह अपने बेटे समेत लाहौर छोड़ दे। जिस ख़तरनाक कार्य को रमेश ने हाथ में लिया था, उससे उसे भय लग रहा था। एक पुत्र ही तो था। जैसे हालात बन रहे थे, वह शीघ्र भाग जाना चाहता था। रमेश के जीवन जाने का भय उसको पागल बना देता था। इस कारण वह रमेश को समझाता रहता था।

रमेश को कुछ मनन करते देख, गोपालकृष्ण बोला, "सम्भव है यमुना और छाया भी बच कर भारत की सीमा पार कर गई हों।" हमारा यहाँ रहना व्यर्थ है। आखिर एक दिन जाना तो पड़ेगा ही। पाकिस्तान में तो हम रह नहीं सकेंगे। गाँधी कुछ कहता रहे हिन्दू यहाँ रह नहीं सकेंगे। एक बात और तुमको बताता हूँ। ठेकेदारी के जीवन में मैंने बहुत अनुभव प्राप्त किया है। ये कांग्रेस वाले राज्य चलाने की योग्यता भी नहीं रखते। मुसलमान जो अपने मज़हब के पक्के हैं और जिन्होंने अब एक पृथक और सबसे बड़ा मुस्लिम देश पा लिया है, सदा हिन्दुस्तान के लिए सर-दर्द बने रहेंगे अर्थात् पाकिस्तान के रहते हिन्दुस्तान को चैन कहाँ।

"मेरा यह अनुमान गलत भी हो सकता है मगर इसमें युक्ति य[ह] है कि बँटवारा गलत हुआ है। कोई प्राकृतिक सीमा नहीं है अ[ौर] पाकिस्तान हिन्दुस्तान को चैन से न बैठने देगा। इसलिए तुम ऐसे [देश] में रहने का विचार छोड़ दो।

रमेश को पिता की सब बातें ठीक ही लगीं मगर सबसे मर्मस्[पर्शी] बात छाया के हिन्दुस्तान में होने की थी। इस पर भी उसने क[हा,] "मेरा ख्याल है यमुना और छाया यदि जीवित हैं तो लाहौर में हैं।"

"होतीं तो तुम्हारे साथी अब तक पता लगा लेते।"

रमेश मौन हो गया। उसने बहुत यत्न किया था छाया और य[मुना] की खोज निकालने का। उसको पिता की इस युक्ति में तो सार प्र[तीत]

होता था कि हिन्दुस्तान जाकर वहाँ जाने वाले लुटे हुए दुःखी भाइयों की सहायता करना अधिक सुरक्षित और उद्देश्यपूर्ण है। यहाँ तो चार दिन और मुकाबला होगा। आखिर मुसलमानों का राज्य होगा। उसे भी लाहौर के हिन्दुस्तान में जाने की आशा न रही थी।

गोपालकृष्ण ने कहा, "रमेश ! मैं तुम्हें छोड़कर तो हिन्दुस्तान जाऊँगा नहीं। लेकिन मैं दावे से कहता हूँ कि लाहौर पाकिस्तान में जायेगा। हमारे कांग्रेसी नेता लाहौर की तुलना में कलकत्ते का अधिक महत्त्व समझते हैं और यह है भी सत्य। कलकत्ता हम छोड़ नहीं सकते, लाहौर मुसलमान तथा जिन्हा छोड़ेगा नहीं।"

आखिर रमेश मान गया। गोपालकृष्ण ने लाहौर से निकलने की एक योजना बना ली। कोठी में एक विश्वस्त व्यक्ति छोड़ उसे भी समय पर भाग आने के लिए समझा कर जितना सामान वह ले जा सकता था, ट्रकों में लदवा दिल्ली ले गया। उसके साथ रमेश की मौसी-मौसा भी चले। जनकराज हठी युवक था। उसने स्पष्ट इन्कार कर दिया। उसका कहना था, "जब तक लाहौर में एक भी हिन्दू रहेगा वह यहाँ रहेगा। जब जाना ही होगा तो वतन को अलविदा कह दिल्ली में उनसे आ मिलेगा।

उसी दिन गोपालकृष्ण, रमेश और जनक के माता-पिता ने लाहौर से इस विचार के साथ विदा ली कि जीवन पर्यन्त उन्हें पुनः अपने वतन के दर्शन न होंगे। केवल याद ही रह जायेगी दिल बहलाने को।

अधिक सेवा कर सकते हो। यहाँ तो चारों ओर मृत्यु दिखाई देती है।"

गोपालकृष्ण मन से चाहता था कि वह अपने बेटे समेत लाहौर छोड़ दे। जिस ख़तरनाक कार्य को रमेश ने हाथ में लिया था, उससे उसे भय लग रहा था। एक पुत्र ही तो था। जैसे हालात बन रहे थे, वह शीघ्र भाग जाना चाहता था। रमेश के जीवन जाने का भय उसको पागल बना देता था। इस कारण वह रमेश को समझाता रहता था।

रमेश को कुछ मनन करते देख, गोपालकृष्ण बोला, "सम्भव है यमुना और छाया भी बच कर भारत की सीमा पार कर गई हों।" हमारा यहाँ रहना व्यर्थ है। आखिर एक दिन जाना तो पड़ेगा ही। पाकिस्तान में तो हम रह नहीं सकेंगे। गाँधी कुछ कहता रहे हिन्दू यहाँ रह नहीं सकेंगे। एक बात और तुमको बताता हूँ। ठेकेदारी के जीवन में मैंने बहुत अनुभव प्राप्त किया है। ये कांग्रेस वाले राज्य चलाने की योग्यता भी नहीं रखते। मुसलमान जो अपने मज़हब के पक्के हैं और जिन्होंने अब एक पृथक् और सबसे बड़ा मुस्लिम देश पा लिया है, सदा हिन्दुस्तान के लिए सर-दर्द बने रहेंगे अर्थात् पाकिस्तान के रहते हिन्दुस्तान को चैन कहाँ।

"मेरा यह अनुमान गलत भी हो सकता है मगर इसमें युक्ति यह है कि बँटवारा गलत हुआ है। कोई प्राकृतिक सीमा नहीं है अतः पाकिस्तान हिन्दुस्तान को चैन से न बैठने देगा। इसलिए तुम ऐसे देश में रहने का विचार छोड़ दो।

रमेश को पिता की सब बातें ठीक ही लगीं मगर सबसे मर्मस्पर्शी बात छाया के हिन्दुस्तान में होने की थी। इस पर भी उसने कहा, "मेरा ख्याल है यमुना और छाया यदि जीवित हैं तो लाहौर में हैं।"

"होतीं तो तुम्हारे साथी अब तक पता लगा लेते।"

रमेश मौन हो गया। उसने बहुत यत्न किया था छाया और यमुना को खोज निकालने का। उसको पिता की इस युक्ति में तो सार प्रतीत

होता था कि हिन्दुस्तान जाकर वहाँ जाने वाले लुटे हुए दुःखी भाइयों की सहायता करना अधिक सुरक्षित और उद्देश्यपूर्ण है। यहाँ तो चार दिन और मुकाबला होगा। आखिर मुसलमानों का राज्य होगा। उसे भी लाहौर के हिन्दुस्तान में जाने की आशा न रही थी।

गोपालकृष्ण ने कहा, "रमेश! मैं तुम्हें छोड़कर तो हिन्दुस्तान जाऊँगा नहीं। लेकिन मैं दावे से कहता हूँ कि लाहौर पाकिस्तान में जायेगा। हमारे कांग्रेसी नेता लाहौर की तुलना में कलकत्ते का अधिक महत्त्व समझते हैं और यह है भी सत्य। कलकत्ता हम छोड़ नहीं सकते, लाहौर मुसलमान तथा जिन्हा छोड़ेगा नहीं।"

आखिर रमेश मान गया। गोपालकृष्ण ने लाहौर से निकलने की एक योजना बना ली। कोठी में एक विश्वस्त व्यक्ति छोड़ उसे भी समय पर भाग आने के लिए समझा कर जितना सामान वह ले जा सकता था, ट्रकों में लदवा दिल्ली ले गया। उसके साथ रमेश की मौसी-मौसा भी चले। जनकराज हठी युवक था। उसने स्पष्ट इन्कार कर दिया। उसका कहना था, "जब तक लाहौर में एक भी हिन्दू रहेगा वह यहाँ रहेगा। जब जाना ही होगा तो वतन को अलविदा कह दिल्ली में उनसे आ मिलेगा।

उसी दिन गोपालकृष्ण, रमेश और जनक के माता-पिता ने लाहौर से इस विचार के साथ विदा ली कि जीवन पर्यन्त उन्हें पुनः अपने वतन के दर्शन न होंगे। केवल याद ही रह जायेगी दिल बहलाने को।

चतुर्थ परिच्छेद

: १ :

सिंगापुर के सैनिक अस्पताल में 'श्वेत एपरन' डाले एक युवक स्टूल पर बैठा अपने विचारों में तल्लीन है। सामने बड़ी मेज पर दवाई की बड़ी-बड़ी बोतलें रखी हैं। रोगियों को दवाई पिला वापिस लौट कर वह कुछ विचार कर रहा है।

यह युवक कोई और नहीं, रोशन है। वह अपने अतीत को अभी तक भूल नहीं सका। बहुत यत्न से वह आई० ए० एम० सी० में जाकर नर्सिंग आर्डली का प्रशिक्षण ले, सैनिक अस्पताल में नियुक्ति करवाने में सफल हुआ।

महू ट्रेनिंग स्कूल में पहुँचने पर उसको पता चल गया कि लड़ना उसके बस का रोग नहीं। घायल हृदय प्रेमी अपनी विश्वासघातिनी प्रेमिका के वियोग में भला शत्रु से कैसे जूझता। छाया का विचार अपने मस्तिष्क से निकाल न सका था। अपने कमाण्डिंग अफसर से उसने अपना समस्त इतिहास बताया और उसकी सहायता से 'इण्डियन आरमी मैडिकल कोर' में चला गया। उसको पूना भेज दिया गया और वहाँ प्रशिक्षण की अवधि पूर्ण कर कुछ समय वह पूना से लगभग बीस मील दूर देहू रोड के सैनिक अस्पताल में रहा और तीन मास के उपरान्त उसका स्थानान्तर सिंगापुर हो गया। 'साऊथ ईस्ट एशिया कमाण्ड' के अन्तर्गत उसकी ड्यूटी सिंगापुर में लगी। पहले उसे कलकत्ते जाने का आदेश मिला और वहाँ से उसको बर्मा, फिर सिंगापुर जाना पड़ा।

अब वह दो वर्ष से सिंगापुर में है। भारत लौटने के लिए एक-एक दिन गिन रहा है। उसको अपने देश का थोड़ा बहुत हाल जो

रेडियो द्वारा विदित हुआ, वह जानता है। छाया के विषय में अनेक कल्पनाएँ करता है। बुरी, भली सभी प्रकार की। उसकी गोद में बच्चे की कल्पना उसकी आत्मा को संतप्त कर देती है। उसे क्रोध आता है छाया पर और उससे अधिक रमेश पर।

आज उसका मन स्वदेश लौटने को व्याकुल हो रहा है। उनकी 'यूनिट' विज़गापटम जा रही है। अभी तक शिप नहीं मिला। उसके साथ काम करने वाली नर्स मिस नीरा स्वाँग ने उसके मस्तिष्क में हलचल मचा दी है। उसने उससे विवाह का प्रस्ताव किया है और हिन्दुस्तान साथ जाने के लिए तैयार है।

मिस नीरा सिंगापुर में ही रहती है। जापानियों के आक्रमण के समय वह हस्पताल में कार्य करने लगी। वहाँ रोशन के सम्पर्क में आई। अब उसे विदित है कि वह हिन्दुस्तान जायेगा, वह अकेली रह जायेगी। अतएव उसने उसका साथ देने का प्रस्ताव—विवाह के प्रस्ताव के रूप में रखा है।

रोशन अपनी पुरानी प्रेमिका की स्मृति में डूबा विचार कर रहा है। उसको स्मरण हुआ कि तीन वर्ष पूर्व वह उसे रमेश के आश्रय में छोड़ आया था। वह सोचता क्या मुनीम ने झूठ तो नहीं बोला। कहाँ होगी छाया? क्या उसने रमेश से विवाह कर लिया होगा? उसका मन कहता, नहीं कदापि नहीं। वह ऐसा नहीं कर सकती। सोचते-सोचते उसकी कल्पना में छाया का भोला मुखड़ा घूमने लगा। वह नेत्र मूंदे बैठा रहा। मुस्करा कर सहसा धीमे स्वर में बोल उठा, "कितनी सुन्दर और भोली हो तुम! वैसी, जैसा मैंने तुम्हें वर्षों पहले मुस्कराते देखा है। तुम्हें मैंने बचपन में अठकेलियाँ करते देखा है। मिट्टी में खेलते देखा है। फिर यौवन के पथ पर चंचल होते और तुम्हारा अद्भुत सौन्दर्य भी निहारा है। तुम्हारे साहसपूर्ण प्रेम को भी मैंने अनुभव किया है। आज भी तुम वैसी ही चंचल और भोली हो जैसी जेहलुम स्टेशन पर दिखाई दी थीं। कितना साहस दिखाया था तुमने। तुम अब कहाँ हो? काश! मैं तुम्हें देख पाता!"

"रोशन।" किसी ने उसके विचारों की शृंखला को तोड़ दिया। रोशन ने आँखें खोलीं। मिस नीरा उसके समीप खड़ी उसे निहार रही थी।

"आओ नीरा ! इस वक्त कैसे ?"

"बस यूं ही ! काम में जी नहीं लग रहा। तुमने विचार किया मेरे प्रस्ताव पर ?"

"हाँ। मैं स्वयं को तुम्हारे योग्य सिद्ध न कर सकूँगा नीरा ! तुम हिन्दुस्तानी जीवन तथा समाज में सुखी न रह सकोगी।"

"समाज जाए भाड़ में ! रही तुम्हारी योग्यता की बात, वह निर्णय करना मेरा काम था। सो मैंने कर लिया है।"

रोशन गम्भीर मुद्रा धारण कर बैठा रहा। नीरा उसके साथ एक वर्ष से कार्य कर रही थी। वह उसका मन नहीं तोड़ना चाहता था। छाया द्वारा तिरस्कार किये जाने पर तो वह सेना में भर्ती हुआ था। यद्यपि छाया को भूल न सका था तो भी वह कल्पना नहीं कर सकता था कि छाया अपनी भूल का प्रायश्चित कर, कुमारी रह, रमेश के हथकण्डों से बच सकी होगी। इतने वर्ष उसने कोठी में व्यतीत किये— एक राजकुमारी की भाँति जीवनयापन किया। अब यदि वह मिल भी गई तो एक साधारण सैनिक से कैसे विवाह करेगी ?

नीरा उसकी साथिन है। दोनों का व्यवसाय एक है। वह स्वयं उसकी जीवन संगिनी बन हिन्दुस्तान जाने की इच्छुक है। यदि उसको ो टूक उत्तर दे दिया तो जहाँ उस कोमलांगी का मन टूट जायेगा, हाँ वह स्वयं एकाकी अनुभव करेगा। हिन्दुस्तान की राजनीतिक दशा गड़ रही है। हिन्दू-मुस्लिम परस्पर दंगे-फिसाद के समाचार नित्य आ हैं। भगवान जाने छाया का क्या होगा ? इसलिए नीरा ही जीवन एकमात्र सहारा है। रोशन सोचते-सोचते थक गया। उसने नीरा को र नहीं दिया।

नीरा ने समझा वह अभी निश्चय नहीं कर पाया। वह उसे विचार के लिए अधिक समय देना चाहती थी। वह रोशन को एक

कहा, "मैं अभी तक छाया को सर्वथा मन से निकाल न सका। मेरे अन्तर से यह ध्वनि उठती है कि वह पश्चात्ताप की अग्नि में जल रही होगी अतः यह कल्पना मुझको तुम्हारे विषय में कुछ निश्चय नहीं करने देती।"

"हिन्दुस्तान में तो पुरुष एक से अधिक विवाह कर सकता है न। नीरा ने मुस्करा कर कनखियों में से रोशन को देखते हुए पूछा, "यदि तुम्हारी इच्छा होगी तो मैं बाधा नहीं बनूंगी। इस पर भी मुझे विश्वास है कि तुम मुझे पाकर छाया को तो क्या स्वयं को भी भूल जाओगे।" इतना कह चुकने के बाद नीरा ने अपनी लम्बी ग्रीवा को अकड़ा कर एक मार्मिक दृष्टि रोशन पर डाली और वहां से खिसक गई।

इस चुनौती पर तो रोशन चकरा गया। अगले दिन नीरा उसको मिलने नहीं आई। वह उसको हस्पताल में खोजने लगा वह कहीं भी दिखाई न दी। कार्यालय से पता किया तो उसको विदित हुआ कि वह छुट्टी लेकर घर गई है। रोशन निराश हो उसके लौटने की प्रतीक्षा करने लगा। उसी रात उसको ज्ञात हुआ कि जहाज़ कल हिन्दुस्तान के लिए प्रस्थान करेगा। सब जवान तैयारी में जुट गए। प्रातः रोशन को कमाण्डैन्ट के सम्मुख उपस्थित होने की आज्ञा मिली। रोशन चकित रह गया कि उस अकेले को इस समय कमाण्डिंग अफसर ने क्यों बुलाया है।

वह वर्दी पहिन कमाण्डिंग अफसर के सम्मुख पेश हुआ। कर्नल शुक्ला ने उसके सामने खड़े होते हुए कहा, "रोशन! तुम बहुत सौभाग्यशाली हो। मुझको विदित हुआ है कि तुम्हारा विवाह मिस नीरा स्यांग से हो रहा है। मैंने तुम्हें बधाई देने के लिए बुलाया है।"

रोशन को अपने कमाण्डिंग अफसर के मुख से अपने विवाह की बात सुन विस्मय हुआ। वह मुस्कराता हुआ बोला, "आपको किसने सूचना दी है।"

"देखो रोशन! मैं नीरा को भली-भांति जानता हूं। वह बहुत ही अच्छी लड़की है। ठीक वैसी जैसी कोई भद्र हिन्दुस्तानी लड़की हो

चल पड़ती। एक दिन उसके मित्र ने, जो उसका इन्चार्ज भी था और प्रौढ़ अवस्था का होने से रोशन के प्रति स्नेह रखता था पूछा, "रोशन ! तुम्हारा अभी तक नीरा से विवाह नहीं हुआ ?"

"नहीं।"

"क्या बात टूट गई है। जब हम सिंगापुर में थे, तब चर्चा सुनी थी।"

रोशन ने मुस्करा कर कहा, "वहां कमाण्डिंग अफ़सर ने मुझको बताया था। ऐसा प्रतीत होता है, नीरा ने स्वयं कर्नल साहब को बताया किन्तु मुझसे बात नहीं हुई।"

"और तुमने भी......"

"हां। मैंने भी फिर बात नहीं की। भेंट करने का अवसर ही नहीं मिला, नेगी साहब।"

"ओह ! अब समझा। तुम किसी को मध्यस्थ बना लो, नीरा की इच्छा होगी कि तुम उससे प्रस्ताव करो। फिर तय होना चाहिए कि विवाह कैसे होगा ?"

"कौन बनेगा, मध्यस्थ ?"

"तुम चाहो तो मैं बन सकता हूँ।"

"मुझे स्वीकार है।"

"तो तुम मुझको नीरा के नाम पत्र लिख दो जिसमें मेरा उल्लेख कर मुझे अधिकार दो कि मैं तुम्हारे विवाह की तिथि निश्चित करूँ।"

रोशन ने पत्र लिख दिया और जमादार नेगी, रोशन और नीरा के विवाह के लिये यत्न करने लगा।

इधर उसने ऑल इंडिया रेडियो के दिल्ली केन्द्र द्वारा अपने माता-पिता का पता करवाया तो उसको पता चल गया कि उसकी वृद्धा माता अपने छोटे पुत्र सहित जलन्धर कैम्प में सकुशल पहुँच गई है। उसके पिता के विषय में कुछ पता न चला था।

रोशन को इस सूचना से दुःख हुआ। वह अनुमान लगाता था कि उसके पिता की हत्या कर दी गई होगी। इस कारण छोटे भाई मदन

के साथ माँ जलन्धर शरणार्थी कैम्प में रह रही है। वह यह भी सोचता कि सम्भव है उसके पिता का रावलपिण्डी में हो देहान्त हो गया हो क्योंकि वह कई वर्षों से उनके विषय में कुछ न जानता था। घर छोड़ने के अनन्तर उसने एक भी पत्र न लिखा था।

अब उक्त सूचना पाते ही वह माँ और भाई से मिलने के लिए लालायित हो गया। जमादार नेगी ने उसको समझाया, "रोशन! अधीर होने से काम न चलेगा। विवाह ऐसी अवस्था में अत्यावश्यक है। पश्चात् सरकारी निवासगृह के लिए कमाण्डिग से प्रार्थना कर देना। उसके अनन्तर माँ और भाई को यहाँ ले आओ। अब मिलने जाओगे तो कुछ कर न सकोगे।"

नेगी के सुझाव में युक्ति थी। इस पर भी रोशन का मन दुखी था। अब तक नेगी ने तय करा दिया था। नीरा उससे सहानुभूति प्रकट करने आई थी। उसने पूछा, "छाया का भी पता चला है, कुछ ?"

"नहीं। मैंने मालूम करने का प्रयास नहीं किया।"

"करना चाहिए।"

"अब आवश्यकता नहीं।"

नीरा मुस्करा दी। निश्चित दिन मन्दिर के पुजारी को बुला कर विवाह कर दिया गया। सब साथियों ने भाग लिया। कर्नल शुक्ला ने वर-वधु को आशीर्वाद दिया।

: २ :

विवाह के अगले दिन नीरा ने रोशन से कहा, "मैं भी माँ जी का आशीर्वाद लेने जलन्धर चलूंगी।"

प्रथम रात्रि की संगति से रोशन नीरा से सन्तुष्ट तो था ही, किन्तु अब उसको अपने साथ जाने की बात कहते सुन गद्‌गद् हो गया। इस पर भी उसका मन प्रसन्न नहीं था। किसी चिन्ता में खोया था।

"क्यों ? आपको मेरा साथ पसन्द नहीं क्या ?"

"नहीं प्रिये ! यह बात नहीं है।" मुझको सूचना मिली है कि मेरा

स्थानान्तर दिल्ली हो गया है।"

"तो ठीक है। मैं भी साथ चलूंगी। बदली कराने के प्रयास में असफल रही तो नौकरी छोड़ दूंगी। अभी तुम मेरे मकान में रहते हो। फिर मैं तुम्हारे साथ रहूँगी।"

रोशन ने कुछ उत्तर नहीं दिया। वह नीरा की कठिनाई समझ रहा था। अब उसके लिए नौकरी करना वह उचित भी नहीं मानता था। एक ही कार्यालय में पति-पत्नी का कार्य करना, वह अच्छा नहीं समझता था। माँ और भाई को भी साथ रखना आवश्यक था। नीरा ने नगर में मकान ले रखा था और रोशन उसके साथ रहने लग गया था। मनन करने के अनन्तर उसको कोई मार्ग दिखाई नहीं दिया।

जमादार नेगी रोशन और नीरा का घनिष्ट मित्र बन गया था। उसकी सम्मति थी कि रोशन को कुछ दिन रुक कर यहाँ से नई 'यूनिट' के लिए प्रस्थान करना चाहिए। दिल्ली छावनी के सैनिक अस्पताल में रिपोर्ट करने के अनन्तर निवास स्थान का प्रबन्ध कर उसको माँ और भाई को लेने जाना चाहिए।

रोशन और नीरा ने इस सुझाव पर परस्पर विचार विमर्श किया अन्त में निर्णय हुआ कि रोशन यहाँ से अवकाश पा दिल्ली के लिए प्रस्थान करे। नीरा छुट्टी लेकर उसके साथ जायेगी। शेष वहाँ की परिस्थिति अनुसार निर्णय किया जायेगा।

नीरा ने छुट्टी के लिए प्रार्थना कर दी। कमाण्डिग अफसर नीरा का हितचिन्तक था। उसने दिल्ली छावनी के सैनिल हस्पताल के कर्नल के नाम डी० ओ० दे दिया और फोन पर बात की। रोशन के लिए सरकारी निवासगृह का प्रबन्ध हो गया और परिवार को साथ लाने की स्वीकृति मिल गई। नीरा के लिए कुछ करने का डी० ओ० में उल्लेख था।

दोनों अपने कमाण्डिग अफसर का धन्यवाद कर दिल्ली के लिए प्रस्थान कर गए। रोशन ने जलन्धर शरणार्थी कैम्प के द्वारा अपने भाई को पत्र लिख दिया कि वह कुछ दिनों में उनसे मिलेगा। तब तक वे वहीं

रहें ।

नीरा को पूर्ण आशा थी कि कर्नल शुक्ला के डी० ओ० का अवश्य अच्छा परिणाम निकलेगा और उसकी नियुक्ति भी दिल्ली में हो जायगी । वह रोशन की भाँति सैनिक कानून से बंधी नहीं थी । वह एक सिवलियन अस्थायी कर्मचारी थी । अतः उसने निश्चय किया था कि वह अपने पति से पृथक् हो विजगापटम वापिस कदापि नहीं लौटेगी ।

दिल्ली छावनी में नीरा ने अपनी गृहस्थी जमा ली । सरकारी क्वार्टर ठीक ठाक करने के अनन्तर अवकाश के क्षणों में रोशन और नीरा दिल्ली की विशाल नगरी देखने निकल पड़े । नगर में बहुत चहल पहल थी । जहाँ स्थान-स्थान पर अभागे शरणार्थियों की भीड़ दिखाई देती थी, वहाँ रंग-बिरंगे परिधान में युवक तथा युवतियाँ अपनी मस्ती में टहलती दृष्टिगोचर होती थीं जैसे उनके लिए देश के एक बड़े भूतल पर कोई विपत्ति ही न आई थी ।

रोशन को टहलते हुए कुछ परिचित मुख दिखाई दिये । वह स्वयं उनसे बात करने के निमित्त रुका और रावलपिण्डी और पंजाब के अन्य नगरों में हुए दंगों का विवरण पूछने लगा । बातों-बातों में उस को विदित हुआ कि जलन्धर कैम्प से कुछ शरणार्थी दिल्ली किंग्ज़वे कैम्प में भेजे गए हैं । अतः रोशन का मन उस कैम्प को देखने को कर आया ।

परन्तु उसी दिन वह किंग्ज़वे कैम्प नहीं जा सका । उस क्षेत्र में विना पूर्व स्वीकृति के सैनिकों के लिए प्रवेश वर्जित था । वहाँ जीवन सामान्य रूप में नहीं चल रहा था । शरणार्थियों में रोष था । वहाँ भी कई लुटी-पिटी अबलाओं से बलात्कार की घटनाएँ घटी थीं । इसलिए सैनिकों को वहाँ जाने की स्वीकृति नहीं थी । नीरा ने कहा, "मैं तो सैनिक अनुशासन में बंधी नहीं हूँ । मैं चली जाती हूँ । कदाचित माँ जी और मदन भैया का पता चल जाये । तब आपको जलन्धर नहीं जाना पड़ेगा ।"

"तुम अकेली कैसे ढूंढोगी उन्हें ? मैं अपने अफसर से वहाँ जाने के

लिए स्वीकृति पाने का यत्न करूंगा। शायद कल जा सकेंगे।"

दोनों दिल्ली छावनी लौट गए।

अगले दिन प्रातः ड्यूटी पर उपस्थित होते ही रोशन कमाण्डिंग अफसर के समक्ष पेश हुआ और अपनी माँ तथा भाई को खोजने के लिए किंग्ज़वे कैम्प जाने की स्वीकृति माँगी। कमाण्डिंग अफसर ने उसकी कठिनाई को समझा और उसे स्वीकृति पत्र मिल गया।

अब हवालदार रोशनलाल अपनी सुन्दर पत्नी के साथ मध्यान्तर किंग्ज़वे कैम्प जा पहुँचा। माल रोड के दोनों ओर बैरकों में सहस्रों शरणार्थी डेरा जमाये पड़े थे। लोग वर्दी पहने बाजू पर तीन फीतों वाला बैज लगाये सैनिक को गौरवर्ण युवती के संग, जो विदेशी दिखाई देती थी, बारबार देखने लगते थे। वे भी दोनों इधर से उधर घूम रहे थे। एक घण्टा घूमने पर भी न कोई रोशन को परिचित व्यक्ति दिखाई दिया न ही उसने किसी से पूछने का कष्ट किया। लोगों की दुर्दशा देख वह उदास चित्त चुपचाप पागलों की भाँति प्रत्येक बैरक को देखता आगे चला जा रहा था।

नीरा ने कहा, "कैम्प कमाण्डर के दफ्तर से क्यों नहीं पता करते?"

"वही तो देख रहा हूँ, दफ्तर किस ओर है।"

"किसी से पूछो तो पता चले। यहाँ तो शहर का शहर बसा हुआ है।"

रोशन के पाँव एक बैरक के पास ठिठक गए। वह एक पुलिया पर पाँव रख खड़ा हो गया। वह दूर से आते एक युवक को देख रहा था जिसकी चाल कुछ जानी-पहचानी लग रही थी। वह कुछ क्षण तक उधर देखता रहा। फिर एकाएक बोल उठा, "अरे! यह तो रमेश लगता है।"

वह युवक जो सूट पहने था, एक बैरक के पास रुक गया। रोशन की ओर पीठ करके और बात करने लगा, किसी से। अब रोशन को उसे पहचानने में तनिक भी सन्देह न रहा। नीरा ने उसकी कठिनाई समझ कर कहा, "चलिए, वहाँ चल कर पता कर लेते हैं।"

दोनों उधर को चले और दो पग हट कर रुक गए। इतने में वह स्त्री, जिससे रमेश बात कर रहा था, भीतर चली गई। युवक ने घूम कर देखा। रोशन के मुख से निकल गया, "रमेश तुम !"

रमेश एक सैनिक को अपना नाम पुकारते सुन ध्यान से देखने लगा। एक हिन्दुस्तानी हवालदार विदेशी सुन्दरी के साथ। रमेश को अपने पुराने मित्र को पहचानने में कुछ कठिनाई हुई। फिर वह सहसा बोल उठा, "रोशन।" और दोनों आलिंगनबद्ध हो गए। रमेश ने नीरा पर दृष्टिपात किया तो रोशन ने कहा, "तुम्हारी भाभी नीरा—सिंगापुर का एक पुष्प।"

"बहुत भाग्यशाली हो भाई। आज ही मैं यहाँ लाहौर में बिछुड़े लोगों से मिलने और वहाँ की मधुर स्मृतियों को लिए यहाँ आया और आज ही अकस्मात तुम मिल गए। आओ अब तुम्हें भी अधिक खोज न करनी होगी।"

वह स्त्री जो रमेश से बात करने के अनन्तर भीतर गई थी अपने बालक के साथ लौट आई। रोशन उस बालक को देखने लगा। उसकी रूप-रेखा-सर्वथा रमेश से मिलती-जुलती थी। किन्तु स्त्री को देख तो रोशन स्तब्ध रह गया। रमेश झट बोल पड़ा, "इसे जानते हो न !"

यह सुन उस स्त्री ने सैनिक के मुख पर देखा और उसके मुख से निकल गया, "रोशन।" फिर उसकी आंखें बगल में खड़ी नीरा के मुख पर गढ़ गयीं।

रोशन ने छाया के विकृत मुख को देखा और उसका मन रो दिया। अपनी पत्नी की उपस्थिति में कोई उद्‌गार प्रकट न कर पाया। छाया सब कुछ समझ गई थी। उसने कहा, "आइए। आपकी माताजी यहीं हैं।"

ये शब्द सुनते ही रोशन का मुख खिल उठा और शरीर में नये रक्त का संचार होता प्रतीत हुआ। नीरा का गोरा-सलौना मुखड़ा प्रफुल्लित दिखाई दिया। दोनों ने छाया के पीछे भीतर पदार्पण किया।

"मां ! देखो, कौन आया है।" छाया ने पुकारा।

रमेश बाहर अकेला रह गया था। वह इस पुनर्मिलन पर विस्मय कर रहा था। उसके मुख पर उदासी तथा नीरसता छायी थी। वह छाया की खोज कर उसको लेने आया था पर रोशन—छाया का पुराना प्रेमी अथवा भाई जो कुछ भी कहा जाये, फिर आ गया था। क्या छाया को अपना अभिनय जारी रखना होगा ? वह विषण्ण हृदय बैरक के बाहर ऊंची जगह पर बैठा था।

"रोशन ! मेरे लाल ! तुम आ गए !" रोशन की माँ अपने दुर्बल और बूढ़े हाथों से रोशन का मुख पकड़ कर बोली उसने नीरा का मुख चूमा और सुहागिन होने का आशीर्वाद दिया। उसकी आंखों से आँसू झर-झर बहने लगे। रुंधे गले से रोशन ने पूछा, "माँ ! पिताजी..."

"बेटा ! पिताजी तो अपने वतन की मिट्टी में जा मिले बेटा, पर मैं अभागन यहाँ परदेश में ठोकरें खाने के लिए बच गई हूँ। वे तुम्हारे जाने के बाद बीमार रहने लगे थे। पाकिस्तान बनने से एक मास पहले उनका देहान्त हो गया।"

रोशन माँ की गोद में सिर रख रोने लगा। नीरा भी अपने आँसू न रोक सकी। बहुत देर तक यही अवस्था रही।

"अब सबर करो बेटा। भगवान की यही मरज़ी होगी। इस पर भी मैं खुश हूँ कि तुम लौट आये हो। मदन मुझसे रोज़ कहता था कि अब तुम अवश्य मिलोगे। उसका कहना ठीक था कि तुम फौज में चले गए हो। कुशल से तो रहे बेटा ?"

"हाँ ! माँ ! कहाँ गया है, मदन ?" रोशन को अब छोटे भाई का ख्याल आया।

"नौकरी पर गया है। चावड़ी बाजार में एक दुकान पर नौकरी करता है। अभी दो दिन ही हुए हैं।"

"अब तो बहुत बड़ा हो गया होगा ?"

"हाँ। ठीक तुम्हारी तरह। नित्य तुम्हें याद करता है। मुझे तो तुम्हारे इतनी जल्दी मिलने की आशा नहीं थी।"

"अब तुम्हें छोड़ कर न जाऊंगा, माँ। मेरी बदली यहाँ हो गई

है। अब तुम हमारे साथ रहोगी।

रोशन की माँ साथ रहने की वात सुन नीरा के मुख परदे खने लगी। रोशन ने कहा, "माँ। यह बहुत अच्छी है। विज़गापटम से तुम्हारा आशीर्वाद लेने यहाँ आई है। अब यह भी नौकरी छोड़ देगी और तुम्हारी सेवा करेगी। चलो माँ तैयार हो जाओ।"

"मदन को आ जाने दो, चलेंगे।"

"उसको हम दुकान पर मिल लेंगे। मुझको केवल आज के लिए ही पास मिला है। जल्दी करो।"

छाया मां-पुत्र का वार्तालाप सुन रही थी और उसको समझ आ रहा थी कि वह अब अकेली रह जायेगी। इस कारण उसका मन भय से कांप उठा था। उसका मस्तिष्क तेज़ी से कार्य करने लगा था। एका-एक उसको रमेश का ध्यान आया। वह कदाचित बाहर खड़ा उसकी प्रतीक्षा कर रहा होगा। अभी वह रोशन की माँ को सूचित न कर पाई थी और बालक को लेकर बाहर आई थी कि रोशन वहाँ पहुँच गया था। अब वह विचार करने लगी कि उसको क्या करना चाहिए ?

जब रोशन की माँ वस्त्र आदि और अपना सामान इकट्ठा करने लगी तो छाया बाहर की ओर घूम पड़ी। रोशन की माँ ने पूछा, "बिन्दो। तुम चलोगी न मेरे साथ ?"

"नहीं माँ जी। पहले आपको बहुत कष्ट दिया है। मुझे अपने हाल पर छोड़ दो।"

"पगली। यहाँ अकेली रहोगी।"

छाया बिना उत्तर दिये बाहर चली गई।

बिन्दो नाम से सम्बोधन किये जाने पर रोशन को विस्मय हुआ। क्या माँ उसको नहीं पहचान सकी ? छाया ने अपना नाम भी बदल लिया ! रोशन की उत्सुकता बढ़ गई। उसके विषय में वह नीरा के सम्मुख छाया से बात भी न कर सका था। अतः नीरा को भी पता नहीं चला कि यह वही अभागन छाया ही है जिससे विवाह करने की स्वीकृति उसने अपने पति को दे रखी है। इस पर भी वह यह अवश्य

समझ पाई थी कि यह स्त्री उसको जानती है। तभी उसने रोशन को सम्बोधन कर कहा था, 'आइए आपकी माताजी भीतर हैं।'

अब रोशन ने छाया के बाहर चले जाने पर माँ से पूछा, "यह बिन्दो कौन है ?"

"है बेचारी दुखयारी ! उन लाखों अबलाओं में से एक जिन्होंने स्वराज्य की वेदी पर अपना सतीत्व बलिदान किया है। मदन ने इसको गुण्डों के चंगुल से छुड़ाया। हम लाहौर कैम्प में ठहरे थे। कुछ युवक हिन्दुओं को उस कैम्प में एकत्रित करने का कार्य कर रहे थे। फिर लाहौर से हिन्दुस्थान की सरकार द्वारा चलाई रेलगाड़ी से हमने प्रस्थान करना था। मदन मुझे कैम्प में ठहरा इस सेवा-कार्य में लगा हुआ था। नगर में किसी का जीवन सुरक्षित न था।

"शाहलमी दरवाजे के बाहर मदन और उसके साथियों ने दो लड़कियों को गुण्डों द्वारा घिरे देखा। यह बिन्दो उस गुण्डे से संघर्ष कर रही थी। गुण्डा इसका बच्चा छीन भागना चाहता था ताकि वह बच्चे के निमित्त उसके पीछे आना स्वीकार कर ले। मदन यह हृदय विदारक दृश्य देख अपने साथियों के साथ उस गुण्डे पर टूट पड़ा। बिन्दो और उसका बच्चा तो मदन और उसके साथियों ने बचा कर कैम्प पहुँचा दिये, परन्तु दूसरी लड़की को गुण्डे उठा कर चम्पत हो गये। बाद में बिन्दो ने बताया कि वह उसकी सखी यमुना थी और दोनों का बहुत पहले अपहरण किया गया था। कुछ दिन पश्चात उन्हें एक अन्य गुण्डे के हाथ दो सौ रुपये में बेच दिया गया। उस दिन वे भागने का यत्न कर रही थीं कि पुनः मुसलमान दानवों के चंगुल में फस गयीं। उसकी सखी को छुड़ाया नहीं जा सका। यह अभागन लाहौर से जलन्धर और फिर दिल्ली हमारे साथ आई है।"

रोशन के दिमाग़ में समस्त स्थिति स्पष्ट हो गयी। यमुना रमेश की मौसी की लड़की थी। बहुत ही सुशील। दोनों का इकट्ठा अपहरण हुआ। कैसे ? क्या इसी दुर्घटना के कारण छाया को कोई रोग हुआ

जिससे वह कुरूप दिखाई देती है ? अपने विचारों में खोया जाता था।

एक विचार बारम्बार उसके मन को कचोटता कि वह छाया से बिन्दो कैसे बन गई। क्या मां उसे पहचान नहीं सकी अथवा माँ ने ही उसका नाम बदल दिया ?

रोशन सोचता जो होना था हो गया, गढ़े मुरदे खोदने से कुछ लाभ न होगा उमकी भलाई इसी में है कि मां को ले, चल दे। बिन्दो को साथ लेना अपनी ग्रहस्थी को विषाक्त बनाना होगा। नीरा पर भी इसकी प्रतिक्रिया शुभ न होगी। अतः वह मौन बैठा रहा, जब तक मां तैयार नहीं हुई, उसके साथ जाने के लिए।

छाया को रोशन की मां ने पहचाना न हो, ऐसी बात नहीं थी। छाया ने दुखभरी आत्मकथा सुनानी उचित न समझ केवल इतना ही कहा, "छाया तो कभी की मर चुकी, मां जी ! अब मैं बिन्दो हूँ।"

रोशन की मां तब से उसे बिन्दो पुकारती है। वह कल्पना कर सकता थी कि ऐसी अभागन के साथ क्या बीती होगी। उसने अनेक बार यत्न किया कि वह छाया से पूछे कि उसका विवाह कब हुआ था और क्या अन्य बच्चे भी हैं जो पीछे छोड़ आई है। उसके पति की खोज होनी चाहिए। छोटे बालक को देख तो वह अनुमान करती थी कि उसे छाया ने गोद में उठा रखा होगा जब उसका अपहरण हुआ होगा। वह छाया के साहस और हिम्मत को मन ही मन सराहती थी कि सब विपत्तियों से जूझते हुए उसने अपने बच्चे को स्वयं से पृथक नहीं होने दिया। जब भी रोशन की मां ने अधिक विवरण छाया से जानने का यत्न किया, उसने उत्तर दिया, "माँ जी ! कुछ लाभ नहीं, बुरे दिनों की याद करने से। मेरे दिमाग में बवण्डर उठ पड़ता है। मैंने कौनसी विपत्ति नहीं झेली ! इसलिए आप न पूछा करें अन्यथा मैं यहाँ से चली जाऊँगी।"

इस उत्तर के पश्चात कभी छाया से कुछ पूछा नहीं गया।

रमेश दिल्ली में आने के बाद छाया की खोज ——

उसने अपने पिता के साथ दिल्ली में पुराना व्यवसाय आरम्भ कर दिया। वे नकद धन राशि तथा आभूषण लाहौर से ले आने में सफल हुए थे। अतः उन्हें कोई आर्थिक कठिनाई नहीं हुई। केवल रमेश एकाकी होने से उदास रहता था। यमुना, छाया और उसके लड़के के अपहरण से गोपालकृष्ण को भी आघात पहुँचा था। इस कारण उनकी खोज वह दिल्ली में आकर भी करते रहे।

आज, कई दिन की दौड़-धूप के बाद, रमेश सफल हुआ तो रोशन आ टपका। छाया को ऐसे लगा कि वह पुनः किसी का जीवन दुखी बनाने जा रही है। वह नीरा को देख समझ रही थी कि वह स्वयं तो अभागन है, अब रोशन की मां के साथ जाने पर तो वह शान्ति न पा सकेगी। अतएव वह कुछ निर्णय कर बाहर चली आई।

रमेश उसके लड़के रवि से बातें कर रहा था। छाया ने कहा, "चलिए, "जल्दी करिए। मेरा यहाँ दम घुटा जा रहा है।"

"तुम्हारा सामान कहाँ है, छाया ?" रमेश ने पूछा।

"कुछ भी नही। एक कमीज सलवार है—रात को पहनने के लिए, वह भी अब फट रही है। उठाने जाऊंगी, तो रोशन की माँ रोक लेगी।"

रमेश ने रवि को उठा लिया और लम्बे पग भरते हुए दोनों सड़क पर आ गए। वहाँ एक ताँगा जाता दिखाई दे गया। रमेश ने उसे रोका और सब दरियागंज स्थित अपने मकान पर जा पहुँचे।

रोशन की माँ बिन्दो, बिन्दो पुकारती रही। किन्तु बिन्दो फिर छाया बन कर उसकी छाया से भी दूर जा पहुँची थी।

"पता नहीं कहाँ चली गई है ?" वह बुदबुदाई।

"तुम चलो मां।" रोशन अपनी घबराहट को छुपाते हुए बोला।

नीरा यह सब देख चकित थी।

"बेटा। इतने दिनों का साथ छोड़ने को मन नहीं करता। दुखियारी कहाँ भटकती फिरेगी। पाकिस्तान क्या बना, इन्सान के दिल बदल गए हैं। मुझसे ऐसा नहीं हो सकता, बेटा।"

"माँ। यह जो आँधी चली है, इसमें किस किस की चिन्ता की जाये। उसका पति उसे ले जायेगा। मैं फिर कभी आकर पता लगा जाऊँगा।"

विवश माँ को मानना पड़ा। रोशन ने पड़ोस में अपना पता छोड़ दिया ताकि मदन को कठिनाई न हो। सम्भव है वह दूकान पर न मिले। माँ और नीरा को ले, वह छावनी लौट गया।

मार्ग में उसके अन्तर से आवाज़ गूँज रही थी कि रमेश अवश्य छाया को लिवाने आया होगा अन्यथा छाया एकाएक गायब न होती। उसको साथ लाना उचित न था यद्यपि माँ आग्रह कर रही थी। कुछ भी हो छाया ने ठीक ही किया। वह लड़का भी रूपरेखा से रमेश का लगता है। अवश्य दोनों का विवाह पहले हो चुका होगा। इस पर भी पूर्ण रहस्य माँ से जानने का साहस न हुआ। वह नीरा पर गलत प्रभाव डालना नहीं चाहता था।

दोनों को घर छोड़ वह मदन से मिलने दुकान पर गया और उसे भी घर ले आया। अब रोशन का परिवार एक स्थान पर होने से, रोशन की गृहस्थी भी सामान्य रूप में चलने लगी।

नीरा की छुट्टी समाप्त हुई तो उसने और छुट्टी ले ली। एक मास और इसी प्रकार बीत गया। अन्त में उसने त्याग-पत्र दे दिया। कई मास के प्रयास के अनन्तर उसको स्थानीय नर्सिंग होम में नर्स की नौकरी मिल गई।

उसका व्यवहार अपनी सास तथा देवर के साथ बहुत अच्छा था—एक हिन्दू पतोहू की भाँति नीरा का आचार-व्यवहार देख रोशन की माँ प्रसन्न और सन्तुष्ट थी।

"मदन प्रायः बिन्दो को याद करता था और माँ से कहता रहता था, "बिन्दो की मैंने दानवों से रक्षा की है। उसने मुझे राखी बाँधी थी। अतः बहिन की खोज करना जरूरी है।"

माँ उसके उद्‌गारों को समझ सहमत थी। नीरा बिन्दो के विषय में माँ पुत्र की वार्ता प्रायः सुनती और मनन करती। उसने यह भी अनुभव किया कि बिन्दो का उल्लेख होने से उसके पति का मुख छोटा

पड़ जाता है। नीरा को उस समय स्मरण हो आता कि बिन्दो ने ही पहले रोशन को पहचाना था। इस मिलन को छह मास हो चुके थे, किन्तु न तो बिन्दो की सूरत नीरा के दिमाग़ से निकलती थी और न ही वह भूलती थी। मदन द्वारा उल्लेख करने पर तो वह सोचने लगती कि क्या सम्बन्ध है बिन्दो का उसके पति से ? मदन की वह मुख-बोली बहन सही, पर रोशन को यह बात क्यों चुभती है और उसे स्वयं भी अशान्त बनाती है ? कोई रहस्य अवश्य है ! क्या बिन्दो ही उनकी छाया है ?

एक दिन नीरा ने साहस बटोर कर अपने पति से पूछ लिया, "क्या बिन्दो और छाया प्रर्यायवाची है ?"

इस अप्रसंगित प्रश्न से रोशन ऐसे चौंक पड़ा, मानो उसके हृदय के घाव को किसी ने छेड़ दिया हो।

"क्यों ? क्या बात है ?"

"बात बहुत साधारण है। वह लड़की जो किंग्ज़वे कैम्प में मिली थी—बिन्दो—वह आपको जानती है और आपने एक बार अपनी प्रेम गाथा सुनाते हुए छाया नाम की लड़की का उल्लेख किया था। आपको याद है ? सिंगापुर की बात है।" नीरा ने मार्मिक दृष्टि से रोशन के मुख पर देखा।

"हाँ ! तुम कहना क्या चाहती हो नीरा ?"

"यहाँ आकर आपने छाया की खोज करने का प्रयास नहीं किया, किन्तु मदन भैया निरन्तर बिन्दो की खोज कर रहे हैं। जब भी वह उल्लेख करते हैं, आप व्याकुल दिखाई देने लगते हैं। इस कारण मुझे सन्देह होता है कि ये दोनों नाम, एक ही लड़की के नाम हैं। मदन जानता नहीं कि वह आपकी प्रेमिका थी। अब वह मदन की बहिन है।"

"नीरा ! तुम भूल रही हो कि मेरे साथ भी बहिन का अभिनय छाया ने बहुत दिन किया। अब वह अपने ठिकाने पर पहुँच गई है। अतः मैंने उसकी खोज व्यर्थ समझी।

"रहा प्रश्न मेरे व्याकुल होने का, उसमें भी कारण है। मदन की

बहिन मिलनी ही चाहिए और एक दिन मिलेगी ही जब दिल्ली में रहना है। परन्तु उसका दुष्प्रभाव हमारी गृहस्थी पर पड़ सकता है। इसलिए मैं व्यग्र हो उठता हूँ जब-जब उसका उल्लेख इस घर में होता है।"

"तो आपका विचार है, मैं अपने वचन से फिर जाऊँगी ? मुझे विस्मय होता है कि आप अपने उद्‌गारों को दबाने के बाद भी मुझको अति निष्ठुर समझते हो।"

"माँ और नव-विवाहिता पत्नी के समक्ष यह ठीक ही करता हूँ। अब तो खेल समाप्त हुआ समझना चाहिए। मुझे कोई रुचि नहीं रही। मैं विवाहित हूँ।"

"लेकिन मैं उसको मिलना चाहूँगी।" नीरा मन ही मन प्रसन्न थी कि उसका पति उसको श्रेष्ठ मान उसका आदर करता है। कदाचित छाया की दुर्दशा इसमें सहायक हुई है।

"तो तुम मदन की सहायक बन जाओ। जब वह बहिन को ढूँढ़ लेगा, तुम भी मिल लेना।"

"आप अपने मित्र का पता नहीं जानते ?"

"नहीं।"

बात यहीं समाप्त हो गई और फिर नीरा ने कभी उल्लेख नहीं किया—छाया का।

रोशन के मन से बोझ उतर गया था।

: ३ :

लाला गोपालकृष्ण शाम की चाय पर रमेश की प्रतीक्षा कर रहा था। उसका काम मन्दा तो था, घर में भी अकेला होने से वह उदास रहता था। अतः भोजन चाय आदि वह कभी अकेला नहीं लेता था।

रमेश को छाया और रवि के साथ मकान में पदार्पण करते देख जहाँ वह चकित हुआ वहाँ उसका अंग-अंग प्रफुल्लित हो उठा। छाया के मुख से सहसा निकल गया, "पिता जी।"

गोपालकृष्ण ऐसे उठ खड़ा हुआ जैसे पुत्र तथा पुत्र-वधु का स्वागत कर रहा हो। उसने छाया के सिर पर हाथ फेर आशीर्वाद दिया और

भावकों ने उन्हें इस कारण स्वीकार नहीं किया था कि वे मुसलमान दानवों द्वारा पतित हो गयी थीं यद्यपि ऐसा क्रम दोनों ओर से चला था। हिन्दुस्तान में मुसलमान लड़कियों से भी ऐसा दुर्व्यवहार हुआ था। इस पर भी जटिल समस्या कुमारियों की थी जिनके विवाह में कठिनाई हो सकती थी। छाया के मन पर इन सब बातों का गहरा प्रभाव पड़ता था।

परन्तु यहाँ किसी ने पूछा तक न था। जब मिली तो गोपालकृष्ण ने उसका स्नेहपूर्वक हार्दिक स्वागत किया और उसको उचित स्थान मिला जो एक पिता अपनी खोई हुई बेटी के मिलने पर देता है। गोपालकृष्ण के मन के भाव छाया ने उसके मुख पर भली-भाँति पढ़े थे। वह छाया के मिल जाने पर अति प्रसन्न हुआ था। इस प्रकार सोचते हुए छाया के आँसू छलक आये थे। गोपालकृष्ण उसके हृदय में उठ रहे उद्‌गारों को भली-भाँति समझ रहा था। उसने जानबूझ कर उस दुर्भाग्यपूर्ण काण्ड के पृष्ठ उलटने का यत्न न किया जिससे छाया को दुःख होता। प्रत्येक ऐसी अपहरण की गई लड़की की मिलती-जुलती सी एक दुःखभरी कहानी थी। जिसमें वेदना, अपमान और आँसुओं के सिवा कुछ न था। किसी भी मानव का हृदय काँप उठता था और भुजदण्ड फड़कने लगते थे। लेकिन सब विवश थे। शासक भी उनके शील की रक्षा न कर सके थे तो साधारण व्यक्ति की तो बात ही क्या? किन्तु यही कहानी छाया बताने के लिए उत्सुक थी—अपने विषय में न सही—यमुना के विषय में। वह स्वयं को स्वार्थी सिद्ध न करना चाहती थी कि स्वयं ठौर पा जाने पर अपनी सखी यमना को इतनी जल्दी भूल गई और उसके निकट सम्बन्धियों को कुछ बताने की भी आवश्यकता नहीं समझी।

गोपालकृष्ण ने उसे रोते देखा तो सांत्वना देते हुए बोला, "अब रोने से कोई लाभ न होगा, बेटी! सब कुछ भूल कर वर्तमान जीवन में रस पाने का यत्न करो।"

"पिताजी! मुझे रह रह कर यमुना का ख्याल आता है। उसकी

देर तक सोचती रही।

रमेश ने आ कर उसका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया, "चलो छाया क्या सोच रही हो ? मैं तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।"

"मैं सोचती हूँ आपके साथ क्यों जाऊँ ? मैं आपकी कौन हूँ ? क्या मेरा समस्त जीवन आप लोगों की दया पर चलेगा ?"

"मैं तुम्हारा ऋणी हूँ छाया। मेरी एक महान भूल के कारण तुम्हें जीवन भर दुःख और यातना सहन करनी पड़ीं। तुम मुझ पर अब विश्वास करो।"

"रमेश बाबू।" छाया रमेश की आँखों में देखती हुई उठ खड़ी हुई। "क्या पापा सब कुछ जानते हैं ?"

"जरूर जानते होंगे। इस पर भी वे तुम्हें रोशन की बहिन समझते हैं।"

"लेकिन मैं उनकी पुत्री हूँ। उन्होंने सदा मुझे अपनी बेटी की भाँति प्यार किया है।"

"मैं जानता हूँ। पुत्री और पुत्र-वधु में उनके लिए विशेष अनन्तर नहीं।"

"और रवि ?"

"वह मेरा है न—तुम भी यही कहती थीं। पापा को भी उसमें मेरी झलक दिखाई देती है। रही लोगों की बात—उसकी अब हम चिन्ता नहीं करते। जब तुम रवि के साथ मेरे संग घूमने निकलोगी तो उन्हें गलत अनुमान न होगा।"

"आपके सब सम्बन्धी······!"

"कोई भी आपत्ति नहीं करेगा। चिन्ता मत करो। चलो पहले शापिंग कर आयें।" रमेश ने छाया का हाथ पकड़ा और रवि से बोला, "आओ बेटा घूमने चलें।"

तीनों मकान से निकल बाज़ार में आ गए। एक कपड़े की दुकान से रवि की कमीजों और निकरों का कपड़ा खरीदा गया और दर्ज़ी को दे दिया गया। तत्पश्चात् वे ताँगे में बैठ कनाट प्लेस आ पहुँचे।

वहाँ खूब घूमधाम थी ; एक फ़ैन्सी स्टोर में रमेश घुस गया। वहाँ बच्चों के बने बनाये सुन्दर परिधान लटक रहे थे। रमेश ने छाया से पूछा, "कौन सा पसन्द है ?"

छाया उन्हें देखने लगी। रवि भी प्रसन्न दिखाई देता था। छाया मौन थी। रमेश ने एक सूट की ओर उँगली उठा रवि से पूछा, "यह लोगे बेटा ?"

रवि ने प्रसन्नचित्त सिर हिला कर इच्छा प्रकट की। रमेश ने दुकान के कर्मचारी को उसे रवि को पहिनाने का आदेश दे दिया।

रवि उस रंग-बिरंगी सुन्दर परिधान को पहन अपनी माँ को मुस्कराता हुआ देखने लगा। रमेश ने उसको जूता भी ले दिया। रवि प्रसन्नचित्त रमेश की उँगली पकड़ चल रहा था। रमेश ने उसका गाल सहलाते हुए कहा, "तुम मेरे बेटे हो न रवि ! खिलौना लोगे ?"

हाँ, रवि खुश होकर बोला।

रमेश ने उसको बहुत से खिलौने ले दिये और तीनों कनाट प्लेस की सैर कर घर लौट गए। रमेश को ऐसा लग रहा था कि वह बिछुड़ी हुई पत्नी और बच्चे से आज आ मिला है। उसकी प्रसन्नता का पारावार नहीं था।

घर पहुँच कर रवि गोपालकृष्ण के सम्मुख हुआ तो, उसने प्यार करते हुए कहा, "अरे। इस सूट में तो बहुत ही सुन्दर लगते हो।"

छाया गोपालकृष्ण को रवि से बातें करते देख कृतकृत्य हो रही थी। इस पर भी एक प्रश्न बार-बार उसके मन में उठता था, "यह सब क्यों है ? क्या यह भी नाटक का एक अंश है जो वह निभा रही है ? रमेश उसका क्या लगता है ? क्या निकट भविष्य में विधि पूर्वक उसका पाणिग्रहण करेगा ?"

उसकी बुद्धि कहती विवाह तो उसका हो चुका है क्योंकि वह एक पुत्र की माँ है। रमेश उस सम्बन्ध को धर्म-सम्बन्ध मान उसे पत्नी के रूप में स्वीकार करेगा तो वह क्यों इन्कार करे अन्यथा उसके लिए कौन सा ठिकाना है ? वह मनन करती रही।

रात को शयन के समय रवि ने छाया के पास लेटते हुए पूछा, "माँ ! वह कौन हैं ?"

"कौन बेटा ?" छाया उसका भाव समझ व्याकुल हो उठी।

"वही, जिसने अच्छे कपड़े और खिलौने ले दिये !"

"तुम्हें वे अच्छे लगते हैं ?"

"हाँ। बहुत अच्छे हैं और वह दूसरा आदमी उनका पापा है न ?"

"हाँ। तुम्हें किसने बताया ?"

"वे उन्हें पापा कहते हैं।"

"हां। वे मेरे भी पापा हैं।" छाया ने रवि को अपने वक्षःस्थल से लगाते हुए कहा, "तुम अपने पापा के पास सोओगे ?"

"हाँ। वे यहाँ क्यों नहीं सोते माँ ?"

"तुम बुलाओगे तो वे आ जायेंगे।" छाया के मन में गुदगुदी होने लगी।

"पर वे हैं कौन माँ ?" रवि ने वही प्रश्न दोहराया।

छाया ने उसे उर से चिपटाते हुए कहा, "तुम्हारे पिताजी हैं, बेटा।"

"पिताजी !" रवि ने दोहराया।

"हाँ।" उसने बालक का मुख चूम कर उसके विस्मय को दूर करने का प्रयास किया।

रवि माँ के वक्ष से चिपट सोने लगा। छाया को नींद न आ रही थी। वह आज एक नवीन संसार में खो गई थी, जहाँ उसे जीवन का लक्ष्य दिखाई देता था, जहाँ मधुर उमंगें थीं— एक सुन्दर गृहस्थी की कल्पना थी। परन्तु वह चिन्तित हो उठती थी अपने विगत जीवन को स्मरण करके जिसे उसने नाटक की नायिका की भाँति निभाया था—निर्देशक की इच्छानुरूप। उस नाटक का निर्देशक था— रमेश। आज वह उसे अपनाने के लिए आतुर दिखाई देता था। तो क्या वह इसे अपना सौभाग्य समझे ? ऐसे नये विचार छाया के मस्तिष्क में

स्पन्दन कर रहे थे।

इधर रमेश भी विस्तर पर करवटें बदलता हुआ चित्त की व्यग्रता को दवा विचार कर रहा था कि उसे पापा के सम्मुख पूर्ण स्थिति स्पष्ट कर देनी चाहिए। वह छाया को पुत्री मानते हैं। उसको स्थायी रूप में अपने सामने रखने के निमित्त उसे पतोहू बनाने में भी आपत्ति न करेंगे। यदि वे स्वीकृति दे दें तो शेष तो कुछ अपवाद है ही नहीं। वह पापा से कैसे बात आरम्भ करे? रमेश रात भर भूमिका तैयार करने में ही लगा रहा। कोई निश्चित योजना न बना सका।

अगले दिन प्रातः वह स्नान आदि से निवृत्त हो अल्पाहार करने आया तो छाया को मुख लटकाये वहाँ बैठे देखा। रवि कहीं दिखाई नहीं दिया। रमेश जो छाया की उपस्थिति में ही पापा से बात करने का संकल्प कर आया था, पूछा, "रवि कहाँ है?"

"उसको बुखार आ गया है।" छाया ने चिन्तित स्वर में उत्तर दिया। उसके नेत्र सजल हो गये थे। वह उस समय सोच रही थी कदाचित् रात को रवि द्वारा पूछने पर रमेश को उसका पिता बताने का यह दण्ड मिला है। क्या रवि को यह पसन्द नहीं आया? ईश्वर को उसका यह निर्णय भी स्वीकार नहीं। वह मन ही मन भयभीत हो रही थी। किसी भी दैवी प्रकोप से बचने के लिए भगवान से प्रार्थना करती थी।

रमेश रवि को देखने कमरे में गया। उसकी देह आग की भाँति तप रही थी। वापिस आकर रमेश ने छाया से कहा, "तुम नाशता लो और रवि को दूध पिला दो तब इसे डाक्टर के पास ले चलते हैं। यहीं समीप में एक वैद्य हैं। चिन्ता की कोई बात नहीं।

छाया ने रवि को थोड़ा दूध पिला दिया। उसकी अपनी इच्छा कुछ खाने को नहीं हुई। एक प्याली चाय पी वह रवि को कम्बल में लपेट, वैद्य को दिखाने चल पड़ी।

दरियागंज में ही एक योग्य वैद्य था। दस मिनट में छाया रमेश के साथ वैद्य की दूकान पर पहुँची।

वैद्य ने दूकान खोली ही थी और कुर्सी पर बैठ सामने मेज़ पर रखी वस्तुएँ ठीक कर रहा था कि एक दम्पति को दूकान में पदार्पण करते देख बोला, "आईए।"

रमेश आगे था और उसके पीछे छाया रवि को उठाये हुए थी। वैद्य की दृष्टि रमेश पर पड़ी थी। रमेश ने उसके उत्तर में कहा, "वैद्य जी। हमारे बच्चे को एकाएक बुखार आ गया है। शायद सर्दी लग गई है।"

"बैठिए।" वैद्य मेज़ पर रखी दवाई की शीशियों पर पड़ी धूल कपड़े से साफ करते हुए बोला।

अब छाया की दृष्टि वैद्य से टकराई और उसके मुख से निकल गया, "भैया तुम।" वह भी उल्लासपूर्ण मुद्रा में कुर्सी से उठ खड़ा हुआ, स्नेह भरी दृष्टि से उसके मुख पर दृष्टिपात करते हुए कहा, "छाया।"

छाया सिर से पाँव तक काँप उठी थी और अपने भाई मनमोहन के मिलने पर आत्मविभोर हो निश्चल खड़ी थी। रमेश ने उसकी दशा देखी तो रवि को उससे ले लिया। कुर्सी पर बैठते बैठते छाया की आँखें डबडबा आई थीं।

छाया चार वर्ष के पश्चात् अपने भाई से आज मिली थी। अब बच्चे की बीमारी भूल भाई से माता-पिता की कुशल क्षेम पूछने लगी। मनमोहन ने बताया, "पिताजी माताजी के साथ अगस्त मास के आरम्भ में ही चले आये थे। मुझको पीछे दुकान और मकान को बेचने का कार्य करना था। इस कारण एक मास रावलपिण्डी में रुका रहा। बहुत कठिनाई से तुम्हारी भाभी के साथ जान बचाकर हिन्दुस्तान की सीमा में प्रवेश कर सका। केवल कुछ आभूषण जो मेरी बनियान में लगी जेब में थे, यहाँ ला सका। मेरा भाग्य अच्छा था, यह दुकान मिल गई। पिताजी और माता जी का पता नहीं चला। ऐसा प्रतीत होता है कि मार्ग में उनकी हत्या कर दी गई है। तुम्हारे वियोग के दुख ने उन्हें पहले ही बहुत जर्जर कर दिया था।

छाया बिलखने लगी। आज वर्षों पश्चात् उसके हृदय में माता-पिता का स्नेह उमड़ आया था। मनमोहन ने उन्हें सांत्वना देते हुए पूछा, "तुम कुशलपूर्वक रही हो न, छाया। हम तो तुम्हारे जीवित रहने की आशा त्याग बैठे थे।"

छाया रोती ही रही। जब ग्राहक आने शुरू हो गए तो उसको विवश हो चुप होना पड़ा। फिर उसने पूछा, "भाभी तो ठीक है न!"

"हाँ।" मनमोहन ने संक्षिप्त उत्तर दिया और रवि का निरीक्षण करने लगा। वह समझ गया था कि वह छाया का लड़का है। रमेश को देख उसने अनुमान लगाया कि वह कोई धनी व्यक्ति है। उसने दवाई की सेवन विधि समझाते हुए कहा, "शाम तक ज्वर टूट जायेगा। सर्दी से बचा कर रखना।" फिर कुछ रुक वह छाया को सम्बोधन कर बोला, "मैं तुम्हारी भाभी को भेजूंगा। हम यहीं डाकखाने के पीछे गली में रहते हैं।"

रमेश ने भी अपना मकान नम्बर इत्यादि वैद्य मनमोहन को बता दिया। उसको भी छाया का भाई मिल जाने पर प्रसन्नता ही हुई।

छाया के मस्तिष्क में भाँति-भाँति के विचार उठ रहे थे। दोपहर को उसकी भाभी उससे मिलने आई। वह देखने में सुन्दर और स्वभाव से बहुत तेज स्त्री थी। उसने रवि और छाया को देखा। रमेश जान-बूझ कर बाहर चला गया। छाया की भाभी कान्ता दो घण्टे तक उसके पास रही और उसने प्रत्येक बात छाया से जानने का प्रयास किया। उसको यह भी विदित हुआ कि छाया का मुसलमानों द्वारा अपहरण हुआ था और वह पतिता रमेश की दया की पात्रा बनी। इस रहस्योद्घाटन से कान्ता ने छाया को अपने घर आने का निमन्त्रण तक नहीं दिया। घर आकर उसने मनमोहन से बताया, "वह तो रमेश की अविवाहिता पत्नी है। लड़का किसी मुसलमान का है अथवा रमेश का, भगवान जाने। मैं ऐसी लड़की को घर में पग न रखने दूंगी।"

मनमोहन को पत्नी की बात बहुत ही अनर्गल लगी। उसकी आँखों के समक्ष वह घटना आ गई जब छाया घर से गायब हुई थी और वह

उसकी सहेली के घर से पता कर सजल आँखों से घर लौटा था। कितना स्नेह था उसको छोटी वहिन से। आज वहिन मिली थी। वह उसे घर में आश्रय देने अथवा पग रखने देने में बाधा देख रहा था। अभी तो उसने उसकी पाँच वर्षों की आपबीती सुनी नहीं थी। पत्नी को भेजने का अर्थ था कि वह उसको स्नेहपूर्वक घर ले आयेगी और वह सब बातें जानकर उसे सुख पहुँचाने में सहायक होगी। किन्तु उसकी कल्पना धरी की धरी रह गई। उसकी कुटिल पत्नी ने फतवा दे दिया। मन-मोहन को दुःख हुआ। वह क्षणिक आवेश में बोला, "कुत्ते का कुत्ता वैरी। पुरानी कहावत है। स्त्री को अपनी जाति से सहानुभूति नहीं। मूर्ख स्त्री! उसने क्या-क्या मुसीवतें झेली होंगी, भगवान जाने। तुम्हें उससे सहानुभूति नहीं। फिर भी वह अब एक गृहस्थन—पुत्रवती है। तुम क्यों उसका वहिष्कार कर रही हो। लड़का तीन वर्ष का लगता है। मुसलमानों के दंगों से पहले पैदा हुआ। तुम छाया पर व्यर्थ का लांछन लगा, नारी जाति से अन्याय कर रही हो।"

"कैसी बातें करते हो जी! उसने स्वयं बताया कि वह मुसलमानों द्वारा उठाई गई थी।"

"तो भगवान का धन्यवाद है कि वह बच निकली और जिस पति ने उसे पुनः अंगीकार कर लिया, मैं उस देवतास्वरूप व्यक्ति का मान करता हूँ और उसकी बुद्धि की सराहना करता हूँ। ज़रा सोचो, तुम कहीं फंस जातीं तो तुम्हारी तथा मेरी क्या दुर्दशा होती।

कान्ता मौन हो गई। छाया के घर पग न रखने का निश्चय कर लिया था उसने। मनमोहन को इससे वहुत सन्ताप हुआ।

अगले दिन छाया स्वयं रवि को लेकर आई। रवि का ज्वर टूट गया था। मनमोहन ने रवि को प्यार किया और दवाई पिला दी। उस समय दुकान पर कोई रोगी नहीं था। मनमोहन ने कहा, "छाया! कान्ता ने मुझसे सब कुछ वता दिया है। पिछली बातों को स्मरण करने का कोई लाभ नहीं। भगवान तुमको सुखी रखे। मैं तुम्हें यही आशीर्वाद दे सकता हूँ।"

छाया भाभी के व्यवहार और बात करने के ढंग से समझ गई थी कि भैया-भाभी उस दुखयारी में कुछ भी रुचि नहीं रखते। अब उसको लाला गोपालकृष्ण की उदारता और वात्सल्यता पर गर्व होता था। पिता अब न रहे थे, भाई मिला था किन्तु अपनी पत्नी को बहिन के लिए रुष्ट न कर सकता था। लेकिन अभी भी छाया का कोई था जिसको वह अपना पिता तथा संरक्षक कह सकती थी। वह गोपालकृष्ण की पुत्री थी और पिता से मिलने पर भाभी की भाँति उसने पुत्री का बहिष्कार न किया था। छाया डबडबाई आँखों से भैया का प्रवचन सुनती रही।

: ४ :

जिस दिन रवि सर्वथा स्वस्थ हुआ, गोपालकृष्ण ने रमेश से पूछा, "इलाज किसका करते रहे हो ?"

"रवि के मामा का।" रमेश ने भी सुअवसर जान बात आरम्भ कर दी।

"कौन ! रोशन यहाँ है क्या ?"

"नहीं पापा। वह मनमोहन वैद्य है न ! वह छाया का बड़ा भा[ई] निकल आया।"

"बड़ा भाई निकल आया ! क्या मतलब ?" गोपालकृष्ण ने विस्म[य] करते हुए पूछा।

"हाँ पापा। छाया को विदित नहीं था। उसने पाकिस्तान बन[ने] पर यहाँ दुकान कर ली है। छाया का बड़ा भाई है। रोशन तो उस[का] मुँहबोला भाई है। उसने अब विवाह कर लिया है।"

गोपालकृष्ण इस नवीन रहस्योद्घाटन से पूर्ण स्थिति पर मन[न] करने लगा। सब बातें उसके मस्तिष्क में स्पष्ट होने लगीं। उसने कह[ा], "रमेश। तुम्हारा रहस्य छुपाए रखने के हेतु छाया ने यह सब अभिन[य] किया ?"

"हाँ पापा। अपराधी मैं हूँ। मैं अब प्रायश्चित्त करना चाहता हूँ[।] केवल आपकी स्वीकृति चाहिए।"

"बेटा। अब मैं कुछ न कहूँगा। पहले एक विवाह का मैंने प्रब[न्ध]

किया था, वह फला नहीं। इस पर भी मैं छाया को यहाँ से निकालूंगा नहीं। रवि मुझको तुम्हारे बाल्यकाल की याद दिलाता है, बहुत ही प्यारा बालक है।"

छाया आपके आशीर्वाद के बिना नहीं मानेगी। उसकी भाभी भी उसका बहिष्कार कर गई है।"

"मैंने तो नहीं किया। बेटी के लिए पिता का आशीर्वाद सदैव रहता ही है।"

रमेश प्रसन्नवदन छाया को सूचना देने उसके कमरे में चला गया। छाया रो रही थी। उसको भैया-भाभी का व्यवहार बहुत अखरा था। रमेश ने कहा, "पापा हमको आशीर्वाद देने के लिए उस घड़ी की प्रतीक्षा कर रहे हैं। क्यों न आज ही उनका आशीर्वाद प्राप्त किया जाये।"

छाया के मुख पर लज्जा की लाली दौड़ गई। वह सोचने लगी—"काश ! रमेश पहले उससे विश्वासघात न करता तो उसकी कदाचित ऐसी अवस्था न होती।"

रमेश ने रवि को प्यार किया तो छाया ने सजल नेत्रों से उसका देखते हुए कहा, "पिताजी हैं, बेटा। नमस्ते करो।"

रवि ने हाथ जोड़ दिये।

उसी रात भोजनोपरान्त रमेश ने छाया के साथ गोपालकृष्ण के कमरे में प्रवेश करते हुए कहा, "पापा ! हम आपका आशीर्वाद लेने आये हैं।" इतना कह कर पहले रमेश ने पिता के चरण स्पर्श किये और तत्पश्चात् छाया ने ऐसा किया। गोपालकृष्ण ने दोनों को आशीर्वाद देते हुए कहा, "भगवान तुम दोनों को दीर्घायु करे।"

छाया सिर झुकाये खड़ी थी। गोपालकृष्ण ने कहा, "मैं पुत्री और पतोहू में कुछ अन्तर नहीं मानता। मेरे लिए दोनों एक समान हैं। आप दोनों के निर्णय करने की बात थी, वह तुमने कर लिया। ठीक ही हुआ है। भूल सबसे होती है, किन्तु नैतिक साहस लोप हो जाए तो समाज की व्यवस्था बिगड़ती है। तुम दोनों का पति-पत्नी बनने के

छाया भाभी के व्यवहार और बात करने के ढंग से समझ गई थी कि भैया-भाभी उस दुखयारी में कुछ भी रुचि नहीं रखते। अब उसको लाला गोपालकृष्ण की उदारता और वात्सल्यता पर गर्व होता था। पिता अब न रहे थे, भाई मिला था किन्तु अपनी पत्नी को वहिन के लिए रुष्ट न कर सकता था। लेकिन अभी भी छाया का कोई था जिसको वह अपना पिता तथा संरक्षक कह सकती थी। वह गोपालकृष्ण की पुत्री थी और पिता से मिलने पर भाभी की भाँति उसने पुत्री का वहिष्कार न किया था। छाया डबडबाई आँखों से भैया का प्रवचन सुनती रही।

: ४ :

जिस दिन रवि सर्वथा स्वस्थ हुआ, गोपालकृष्ण ने रमेश से पूछा, "इलाज किसका करते रहे हो?"

"रवि के मामा का।" रमेश ने भी सुअवसर जान बात आरम्भ कर दी।

"कौन! रोशन यहाँ है क्या?"

"नहीं पापा। वह मनमोहन वैद्य है न! वह छाया का बड़ा भाई निकल आया।"

"बड़ा भाई निकल आया! क्या मतलब?" गोपालकृष्ण ने विस्मय करते हुए पूछा।

"हाँ पापा। छाया को विदित नहीं था। उसने पाकिस्तान बनने पर यहाँ दुकान कर ली है। छाया का बड़ा भाई है। रोशन तो उसका मुँहबोला भाई है। उसने अब विवाह कर लिया है।"

गोपालकृष्ण इस नवीन रहस्योद्घाटन से पूर्ण स्थिति पर मनन करने लगा। सब बातें उसके मस्तिष्क में स्पष्ट होने लगीं। उसने कहा, "रमेश। तुम्हारा रहस्य छुपाए रखने के हेतु छाया ने यह सब अभिनय किया?"

"हाँ पापा। अपराधी मैं हूँ। मैं अब प्रायश्चित्त करना चाहता हूँ। केवल आपकी स्वीकृति चाहिए।"

"बेटा। अब मैं कुछ न कहूँगा। पहले एक विवाह का मैंने प्रबन्ध

किया था, वह फला नहीं। इस पर भी मैं छाया को यहाँ से निकालूंगा नहीं। रवि मुझको तुम्हारे बाल्यकाल की याद दिलाता है, बहुत ही प्यारा बालक है।"

छाया आपके आशीर्वाद के बिना नहीं मानेगी। उसकी भाभी भी उसका बहिष्कार कर गई है।"

"मैंने तो नहीं किया। बेटी के लिए पिता का आशीर्वाद सदैव रहता ही है।"

रमेश प्रसन्नवदन छाया को सूचना देने उसके कमरे में चला गया। छाया रो रही थी। उसको भैया-भाभी का व्यवहार बहुत अखरा था। रमेश ने कहा, "पापा हमको आशीर्वाद देने के लिए उस घड़ी की प्रतीक्षा कर रहे हैं। क्यों न आज ही उनका आशीर्वाद प्राप्त किया जाये।"

छाया के मुख पर लज्जा की लाली दौड़ गई। वह सोचने लगी—"काश ! रमेश पहले उससे विश्वासघात न करता तो उसकी कदाचित ऐसी अवस्था न होती।"

रमेश ने रवि को प्यार किया तो छाया ने सजल नेत्रों से उसका देखते हुए कहा, "पिताजी हैं, बेटा। नमस्ते करो।"

रवि ने हाथ जोड़ दिये।

उसी रात भोजनोपरान्त रमेश ने छाया के साथ गोपालकृष्ण के कमरे में प्रवेश करते हुए कहा, "पापा ! हम आपका आशीर्वाद लेने आये हैं।" इतना कह कर पहले रमेश ने पिता के चरण स्पर्श किये और तत्पश्चात् छाया ने ऐसा किया। गोपालकृष्ण ने दोनों को आशीर्वाद देते हुए कहा, "भगवान तुम दोनों को दीर्घायु करे।"

छाया सिर झुकाये खड़ी थी। गोपालकृष्ण ने कहा, "मैं पुत्री और पतोहू में कुछ अन्तर नहीं मानता। मेरे लिए दोनों एक समान हैं। आप दोनों के निर्णय करने की बात थी, वह तुमने कर लिया। ठीक ही हुआ है। भूल सबसे होती है, किन्तु नैतिक साहस लोप हो जाए तो समाज की व्यवस्था बिगड़ती है। तुम दोनों का पति-पत्नी बनने के

संकल्प का मैं स्वागत करता हूँ। वर्तमान अवस्था में मैं भी बा
के पक्ष में नहीं हूँ। इस पर भी छाया के लिए नये वस्त्र आभूषण
वाने होंगे। यह तुम सब स्वयं पसन्द कर लेना, बेटी।"

रवि पास खड़ा सुन रहा था। नये वस्त्रों की बात उसकी
बुद्धि ने समझी। वह भी बोल पड़ा, "मुझे भी नया सूट ले
पापा !"

"जरूर ले देंगे बेटा।" गोपालकृष्ण ने रवि को अपनी बाहों
उठा उसके माथे का चुम्बन करते हुए कहा।

उस रात छाया ने रवि को बताया, "आज तुम्हारे पिता इसी क
में सोयेंगे।"

"सच ! तो मैं पिताजी के पास सोऊंगा।"

छाया ने रवि का चुम्बन करते हुए कहा, "बहुत अच्छे हैं तुम्
पिता।" और हर्ष तथा उल्लास के कारण उसकी आँखें भीग गयीं।
मोती उसके कपोलों पर लुढ़क पड़े। उसी समय रमेश ने कम
पदार्पण किया और छाया के रूप को निहारने लगा। कितनी देर
दोनों एक दूसरे को देखते रहे। छाया की प्रसन्नता का पारावार
था !